सम्पादक की कलम से............

आओ मन को भिगों लें, पथिक की काव्यगंगा में सूरत सुधर जायेगी। शास्त्रों में वर्णन है, माँ गंगा का निनाद श्रवण-आत्मसात् करने वाले प्राणी की अंतसूचेतना ऊर्ध्वगतिगामिनी होकर पूर्णता (मोक्ष) प्राप्त करती है। माँ गंगा परमात्मा का प्रवाह हैं 'गंगा वारि - ब्रह्मवारि' अर्थात् माँ गंगा में ब्रह्म बहता है।

सच्चे संतों का जीवन भी जगत में परमात्मा का प्रवाह होता है, जो प्राणियों को अनश्वर तत्व की ओर उन्मुख करता है। ऐसे महान संतों की ज्ञानवाणी का संचार ही दो पैर के प्राणी को सच्चे अर्थों में मानव, महामानव एवं देवमानव बनाता है। ज्ञान के अभाव में हम मनुष्य को पशुतुल्य ही नहीं बल्कि उससे भी हेय् कुकृत्य करते हुये देखते हैं।

कोई भी पशु, पक्षी कितना भी क्रूर होता हो लेकिन वह प्रऔति का घातक नहीं होता है। पुण्यों की क्षीणता के कारण क्रूरता स्वभाव है, इसलिये वह पशु योनियों में गया। जबकि मानव देह सौभाग्य - सुकर्मों के पुण्यों के जाग्रत होने से प्राप्त दैवीय उपहार है। जिसको प्राप्त अभागा प्रऔति माँ के जिस आँचल में जीवन संरक्षित है, उसे ही क्रूर कर्मों से जर्जर करता है।

महान संतों की वाणी का निनाद श्रवण-स्मरण पैशाचिक चिंतन को परमात्मिक चिंतन में परिवर्तित करने की सामर्थ्य अपने अंदर रखता है। साधु - विवेकी - मनीषीजन हमेशा 'प्रथम भगति संतन कर संगा' का लाभ उनके चिंतन से उठाते हैं।

पूज्य पथिक जी महाराज परम त्यागी, विरक्त महात्मा हुये हैं। जो स्वयं को संसार में एक पथिक के रूप में ही अपना परिचय प्रगट करते रहे। उनकी वाणी प्रत्येक जीवात्मा को जगत में पथिक के रूप में ही इंगित करती है। इस संसार में अभी तक कोई टिक नहीं पाया, जो भी आया चाहे वह कितना भी ऐश्वर्यवान एवं विश्वविजेता हो लेकिन उसे भी एक सामान्य-दीन-दरिद्री एवं अपंग-मूढ़ की भाँति ही इस संसार से जाना पड़ा। संसार से स्वेच्छापूर्वक कोई नहीं जाना चाहता है, सभी यहाँ टिकना, ठहरना ही नहीं चाहते बल्कि शासन करना चाहते हैं।

शासन करने की एक सूक्ष्म भावना के चलते ही इस संसार में निरंतर कोलाहल-कलह एवं अशांति का वातावरण प्राणियों के मध्य अपनी संप्रभुता को सिद्ध करने हेतु हो रहा है।

अगर प्राणी समुदाय महान संत पथिक जी महाराज के हृदय से निकली काव्यगंगा का निनाद हृदय में गुंजित करेगा तो निश्चित ही उसके हृदय से संसारप्रदत्त विषाक्त नष्ट हो जायेगा।

महान संत पथिक जी महाराज की समाधि सप्तसरोवर हरिद्वार में निरंतर माँ गंगा का निनाद श्रवण करती है और अपने हृदय से उद्वलित काव्यगंगा से समूचे विश्व में लाखों जनों को सत्यपथ दिखाती है। हमारे देश के अधिकांश आध यात्मिक संस्थान और संस्कृति प्रचारक पूज्य पथिक जी महाराज के गीतों को गाते देखे जाते हैं।

महान संत पथिक जी महाराज प्रचार-प्रसार एवं नाम से हमेशा दूर रहे। विभिन्न जगहों से बिखरी हुई कविताओं को एकत्रित कर प्रकाशित करने का प्रयास अभी किया गया है। जिससे पूज्य पथिक जी महाराज की काव्यगंगा में डुबकी लगाकर सुमिरन एवं पाठ करने वालों को अवश्य प्रकाश एवं शांति मिलेगी।

अमित निरंजन
सम्पादक

अनुक्रमणिका

क्र.सं.	विषय	पद संख्या	पृष्ठ संख्या
1.	आर्त स्वर (प्रार्थना)	1 - 35	1 - 20
	पूज्य पथिक जी महाराज इन पदों में बताते हैं कि आत्मा से परमात्मा का संवाद हृदय की वाणी से ही संभव है। पूज्य पथिक जी महाराज के स्वरों में गुनगुनाकर पाठक सहज ही में विशिष्ट भाव दशा को प्राप्त होने लगता है।		
2.	ईश महिमा	36 - 76	21 - 43
	पूज्य पथिक जी महाराज इन पदों में बताते हैं कि संपूर्ण ब्रह्माण्ड का ऐश्वर्यप्रदाता एवं भक्तों का एकमात्र उद्धारक है। परमात्मा की शक्ति से ही प्रत्येक तत्व में संचालित होने की ऊर्जा प्रस्फुट होती है।		
3.	ईश शरण	77 - 111	44 - 60
	पूज्य पथिक जी महाराज इन पदों में बताते हैं कि सर्वसमर्थ परमात्मा की शरण, समर्पण एवं अहैतुकी प्रेम ही प्राणियों को दुःखों से उबारने में संजीवनी बूटी है।		
4.	गुरु महिमा	112-150	61 - 85
	पूज्य पथिक जी महाराज इन पदों में बताते हैं कि सद्गुरु एवं महान संतों की संनिधि अवश्य करना चाहिये। उनसे प्राप्त ज्ञान को धारण करने के पश्चात ही मानव जीवन उत्कर्ष को प्राप्त होता है।		

5.	प्रेम तत्व	151-193	86 - 107
	पूज्य पथिक जी महाराज इन पदों में बताते हैं कि परमात्मा धरती पर अवतार प्रेम के कारण ही लेते हैं एवं भक्तों के साथ लीला करते हैं। जिससे भक्तों को उन लीलाओं का स्मरण-श्रवण कर चिन्मय आनन्द की अनुभूति होती है।		
6.	भक्त मन संवाद	194-292	108 - 175
	पूज्य पथिक जी महाराज इन पदों में बताते हैं कि जब एक साधारण प्राणी भगवान के समक्ष हृदय के उद्गार निश्चलतापूर्वक व्यक्त करता है, तब परमात्मा औपा अवश्य प्रदान करते हैं। जिसके परिणामस्वरूप प्रार्थी के जीवन में आत्मोत्थान के महान अवसर उपस्थित होने लगते हैं।		
7.	विवेक वाणी	293-335	176 - 209
	पूज्य पथिक जी महाराज इन पदों में बताते हैं कि कामना, ममता, अहंता आदि विकार दुःख का कारण बनते हैं। जबकि दान, तप एवं दया आदि पुण्य कार्य सुख का कारण बनते हैं। इसलिये प्राणिसमुदाय को हमेशा अच्छे गुण ही धारण करना चाहिये।		
8.	साधक बोध	336-398	210 - 250
	पूज्य पथिक जी महाराज इन पदों में बताते हैं कि मुमुक्ष साधकों को मार्ग दर्शन प्रदान करते हुये संसार की नश्वर स्थिति पर सदैव सावधान रहने की प्रेरणा देते हैं। अटल अचल राज्य परमात्मा के पथ पर चलने से ही प्राप्त हो सकता है। संसार नित्य परिवर्तनशील है।		

	जहाँ किसी को भी शाश्वत सुख प्राप्त नहीं हो सकता।		
9.	भजन	399-451	251 - 284
	पूज्य पथिक जी महाराज इन पदों में सबसे सुंदर सन्मति प्रभु के भजन गाने को ही बताते हैं। संसार का श्रेष्ठ सुख साम्राज्य प्राप्त करके भी जिसने भगवान के मनन का आनंद नहीं चखा,वह दुर्भाग्यहीन एवं अभागा है क्योंकि सच्चा आनंद एक मात्र परमात्मा के भजन से ही जीवन में अवतरित होता है, दूसरा अन्य विकल्प संसार में नहीं है।		
10.	आरती	452-453	285 - 286
	पूज्य पथिक जी महाराज भगवान एवं सद्‌गुरुदेव की आरती के पश्चात ग्रन्थ का समापन करते हैं।		

आर्त स्वर (प्रार्थना) 1

हे नाथ अब तो ऐसी दया हो, जीवन निरर्थक जाने न पाये।
यह मन न जाने क्या क्या दिखाये, कुछ बन न पाया मेरे बनाये।।

संसार में ही आसक्त रह कर, दिनरात अपने मतलब की कह कर।
सुख के लिये लाखों दुःख सहकर, ये दिन अभी तक यों ही बितायें।।

ऐसा जगा दो फिर सो न जाऊँ, अपने को निष्काम प्रेमी बनाऊँ।
मैं आपको चाहूँ और पाऊँ, संसार का कुछ भय रह न जाये।।

वह योग्यता दो सतकर्म कर लूँ, अपने हृदय में सद्भाव भर लूँ।
नरतन है साधन भवसिन्धु तर लूँ, ऐसा समय फिर आये न आये।।

हे प्रभु हमें निरभिमानी बना दो, दारिद्र हर लो दानी बना दो।
आनन्दमय विज्ञानी बना दो, मैं हूँ 'पथिक' यह आशा लगाये।।

प्रार्थना 2

अब रखना लाज हमारी।।

प्रभु तुम ही जनहितकारी, तुमसे ही पूर्ति हमारी।
हम क्षुद्र पतित हैं जितने, प्रभु तुम महान् हो उतने।

हम अपराधी हैं इतने, पर तुम दयालु हो कितने।
हम आरत तुम दुःखहारी, अब रखना लाज हमारी।।

तुम पूरण हम परिमित हैं, तुम पावन हम कलुषित हैं।
तुम निश्चल हम चलचित हैं, सब विधि अति दीन दलित है।

तुम अमृत हम विषधारी, अब रखना लाज हमारी।।
निज कर्मों के प्रतिफल में, फँसते नित दुःख दलदल में।

चल रहे तुम्हारे बल में, विश्वास यही पल-पल में।
तुम हरते विपदा सारी, अब रखना लाज हमारी।।

सोते से तुम्हीं जगाते, मेरा अज्ञान मिटाते।
बंधन से मुक्त बनाते, ज्ञानामृत हमें पिलाते।

तब मिटती कुमति हमारी, अब रखना लाज हमारी।।
ज्यों चाहो नाथ निभा दो, भवनिधि से हमें बचा दो।

यह जीवन पार लगा दो, प्रेमामृत हमें पिला दो।
शरणागति 'पथिक' तुम्हारी, अब रखना लाज हमारी।।

प्रार्थना 3

अब सन्मति दो हे परमात्मन ।
तुम्हीं प्रगति दो हे परमात्मन ।।

जिसके द्वारा दिखने लगता, इस दुनिया का दुःख-सुख सपना।
जिससे तुम बिन और कहीं कुछ, समझ न पड़ता कोई अपना।।
वह उपरति दो हे परमात्मन ।।

जिसके बल से हानि लाभ, मानापमान में रहें अचंचल ।
जिसके बल से प्रतिक्षण जाग्रत रहकर तुमको ध्यायें अविकल।।
ऐसी धृति दो हे परमात्मन ।।

जिससे दोषों के आने का, मिलता कोई द्वार नहीं है।
जिससे प्रलोभनों के आगे, होती दुःखप्रद हार नहीं है ।।
वही सुकृति दो हे परमात्मन ।।

जिससे माया मान मोह में, फँस कर कहीं न धोखा खाये ।
जिसके कारण जग में बंधते, पुनः न ऐसे कर्म बनायें ।।
वह सुस्मृति दो हे परमात्मन ।।

व्याकुल विरही प्रेमी को जो, सकुशल तुम तक पहुँचा देती ।
जिसका अन्त तुम्हीं में है, जो नहीं किसी का आश्रय लेती।।
वह सदगति दो हे परमात्मन ।।

जिसके द्वारा जग प्रपंच का रहता कुछ भी ज्ञान नहीं है।
जिसके द्वारा 'पथिक' तुम्हारा कहीं भूलता ध्यान नहीं है।
वही सुरति दो हे परमात्मन ।।

प्रार्थना 4

आनन्दमयं आनन्दमयं परमात्मन परमानन्दमय।
मेरे प्रभु परमाधार तुम्हीं, परमात्मन परमानन्द स्वयं।।

हो करूणामय करतार तुम्हीं अक्षय सुख के भण्डार तुम्हीं।
अज नित्य शुद्ध ओंकार तुम्हीं, परमात्मन परमानन्द स्वयं।।

अद्धैत अनन्त अपार तुम्हीं, हो निराकार साकार तुम्हीं।
प्रभु गुप्त प्रकट सतसार तुम्हीं, परमात्मन परमानन्द स्वयं।।

हो सुन्दर प्रेमागार तुम्हीं, जग के हो मूलाधार तुम्हीं।
हो पालक परम उदार तुम्हीं, परमात्मन परमानन्द स्वयं।।

भवनिधि से खेवनहार तुम्हीं, करते सब विधि उद्धार तुम्हीं।
हो 'पथिक' जीवनधार तुम्हीं, परमात्मन परमानन्द स्वयं।।

आनन्दस्वरूप परमेश्वर को, ऐ मन तुम बारम्बार भजो।
सुख में दुःख में हर रंग ढंग में, छल छोड़ पुकार-पुकार भजो।।

चाहे तुम सीताराम कहो, या मोहन राधेश्याम कहो।
अपनी श्रद्धा रुचि भक्ति से, साकार या निराकार भजो।।

चाहे तुम नमः शिवाय कहो, या नमो वासुदेवाय कहो।
प्रभु परमपिता जगदीश कहो, या सत्य नाम ओंकार भजो।।

वाणी से शुभ गुण गान करो, मन से तुम सुमिरन ध्यान करो।
सब काम धाम में लगे हुये, तुम शक्तिमय करतार भजो।।

अखिलेश कहो परमेश कहो, देवेश रमेश महेश कहो।
व्यापक अव्यय अविचल महान तुम 'पथिक' जीवनाधार भजो।।

प्रार्थना 5

प्रभो भूले हुये को राह लगाते जाना।
मोह माया से मुझे नाथ छुड़ाते जाना।।

खोजते खोजते मैं खो गया हूँ जाने कहाँ।
दयानिधे मुझे अब होश में लाते जाना।।

अपने छिपने के लिये पर्दा बनाया संसार।
कैसे पाऊँ तुम्हें ये युक्ति बताते जाना।।

ध्यान वह दो कि न भूलूँ तुम्हें निशि दिन भगवन।
मगन रहूँ वह लगन अपनी सिखाते जाना।।

यहाँ वहाँ कहीं कुछ है तो बस तुम्हारा खेल।
छिपो न अब सदा तुम दृष्टि में आते जाना।।

चाहे कैसा भी हूँ पर अब तो आप ही का हूँ।
'पथिक' हूँ शरण में अब नाथ निभाते जाना।।

ईश प्रार्थना 6

मुझको इतना ही क्या कम है।।

जो इतना अयोग्य होकर भी मैं आता हूँ द्वार तुम्हारे।
जो न कहीं भी पा सकता हूँ वह पाता हूँ द्वार तुम्हारे।
य़द्यपि सब विधि मैं मलीन हूँ यहाँ न कुछ साधन संयम है ।।मुझको0।।

नाथ तुम्हारा आश्रय लेकर भवसागर में बह न सकेंगे।
निश्चय ही उस कृपादृष्टि से पाप हमारे रह न सकेंगे।
पतितोद्धारक नाम तुम्हारा मन का कर देता उपशम है ।।मुझको0।।

गाता रहूँ तुम्हारी महिमा यह कुछ कम सौभाग्य नहीं है।
चाहे जब हो जैसे भी हो मेरा तो कल्याण यहीं है।
मेरे तुम्हीं एक अवलम्बन तुमसे मिलती शान्ति परम है ।।मुझको0।।

ऐसा कुछ हो मेरे प्रियतम तुम्हें कहीं भी भूल न जाऊँ।
चाहे कहीं रहूँ पर उर से तुमको ध्याऊँ तुमको पाऊँ।
प्रभो मिटा दो जो कि 'पथिक' में दिखता कहीं अहं या मम है ।।मुझको0।।

प्रार्थना 7

मेरे परमाधार तुम्हीं हो।

मेरे जीवन में जीवन तुम, अतिशय सुन्दर अनुपम धन तुम।
सब सुख के भण्डार तुम्हीं हो, मेरे परमाधार तुम्हीं हो।।

अलख अनन्त नित्य अविकारी, भक्त भावमय लीलाधारी।
अतुलित पूर्ण उदार तुम्हीं हो, मेरे परमाधार तुम्हीं हो।।

अद्भुत रसमय रीति तुम्हारी, तुम समान है प्रीति तुम्हारी।
सबके पालनहार तुम्हीं हो, मेरे परमाधार तुम्हीं हो।।

रघुपति राघव राम कहीं तुम, गोपी बल्लभ श्याम कहीं तुम।
निराकार साकार तुम्हीं हो, मेरे परमाधार तुम्हीं हो।।

विविध रूपों में भक्ति तुम्हीं से, सबकी है अनुरक्ति तुम्हीं से।
आर तुम्हीं हो पार तुम्हीं हो, मेरे परमाधार तुम्हीं हो।।

कभी न भूले ध्यान तुम्हारा, रहे एक अभिमान तुम्हारा।
'पथिक' हृदय सरकार तुम्हीं हो, मेरे परमाधार तुम्हीं हो।।

प्रार्थना 8

मेरे प्रियतम दयानिधान तुमको भूल न जाऊँ।
सब में व्यापक है भगवान् तुमको भूल न जाऊँ।।

अब ऐसी हो कृपा तुम्हारी मेरी मिटे कामना सारी।
जागृत रहे स्वयं में ज्ञान तुमको भूल न जाऊँ।।

परम प्रेममय सबके स्वामी अकथ अनोखे अन्तर्यामी।
होता रहे सतत गुणगान तुमको भूल न जाऊँ।।

प्रभो मुझे दो प्रज्ञा का बल, यह मन हो जाये अति निश्छल।
मैं दुःख-सुख में रहूँ समान तुमको भूल न जाऊँ।।

प्रभो 'पथिक' में प्रेम जगा दो तृष्णा तम भय भ्रान्ति भगा दो।
हे सर्वज्ञ समर्थ महान् तुमको भूल न जाऊँ।।

प्रार्थना 9

यही विनय है कभी कहीं भी, प्रभो ! तुम्हें हम भूल न जायें।
जीवन के इन प्रति द्वन्दों में, जीवनेश तुमको ही ध्यायें।।

कितना ही हमको सुख-दुःख हो, जो कुछ भी अपने सम्मुख हो।
सभी दशा में निर्भय होकर, तुममें ही आनन्द मनायें।।

सुनते हैं तुम दूर नहीं हो, तुम्हीं सर्वमय अभी यहीं हो।
कहीं पाप हमसे न बने, अब ऐसी गति-मति विमल बनायें।।

अद्‌भुत अकथ तुम्हारी माया, इसने किसको नहीं नचाया।
जिसमें सुर मुनिजन भी मोहे, हम अपनी क्या बात चलायें।।

यहाँ न भक्ति प्रेम का बल है, साधन में मन अति चंचल है।
'पथिक' तुम्हारी ही शरणागति, अब तो जैसे बने निभायें।।

प्रार्थना 10

लिये चलो सत पथ में, शक्तिमान लिये चलो।
अधःपतित जीवन को हे महान लिये चलो।।

हर लो हे ज्योतिर्मय मेरा अज्ञान तिमिर।
जिससे शुभ गति मति हो, चंचल चित हो सुस्थिर।
देकर हे करुणामय दिव्य ज्ञान लिये चलो।।

मिट जायें अन्तर के सब दुर्दमनीय दोष।
प्रभु-प्रदत्त सद्‌गुण से हो मम निष्कलुष कोष।
मिल जाये हमको भी प्रेम दान लिये चलो।।

वह बल दो जिससे मैं तृष्णा को सकूँ त्याग।
जग के नश्वर सुख में रह जाये कुछ न राग।
उसी तरह जैसा कुछ हो विधान लिये चलो।।

हे मेरे जीवनेश तुमसे ही है पुकार।
अब तो जिस भाँति बने भवदुःख से करो पार।
'पथिक' पूर्व पापों पर दो न ध्यान लिये चलो।।

प्रार्थना 11

वह प्रेम दो हमें प्रभो जिससे कि तुम्हें पायें।
तज करके मोह-माया केवल तुम्हीं को ध्यायें।।

जब-जब हमें दबायें यह भोग वासनायें।
वह शक्ति दो कि जिससे अपने को हम बचायें।।

ऐसी हो चाह सच्ची जो चैन न लेने दे।
प्रियतम तुम्हें रह रहकर हम हृदय से बुलायें।।

सबसे विरक्त होकर अनुरक्त हो तुम्हीं में।
केवल सुने तुम्हारी, अपनी तुम्हें सुनायें।।

चिन्तन में तुम्हारे ही तल्लीन चित्त होकर।
जब चुन न रह सकें तब तुमसे ही रोयें गायें।।

जब तक हमें शरण में स्वीकार तुम न कर लो।
हम 'पथिक' इसी धुन में अपना समय बितायें।।

प्रार्थना 12

सर्व विघ्ननाशक भगवान, औपा करो हे औपा निधान।

मेरी क्षुद्र वासना क्षय हो, मेरा चित्त तुम्हीं में लय हो।
मुझ में कुछ न रहे अभिमान, औपा करो हे औपानिधान।।

नाथ तुम्हारी शरणागत हम, निभा सके अपने सत् व्रत हम।
हो जाये मेरा कल्याण, कृपा करो हे औपानिधान।।

कहीं न अब प्रभु दीन रहें हम, स्वतन्त्र सत्याधीन रहें हम।
दे दो बुद्धियोग सद्ज्ञान, औपा करो हे औपानिधान।।

मेरे नाथ शक्तिदाता तुम, अपनी विनय भक्ति दाता तुम।
तुम पावन मैं पतित महान, औपा करो हे औपानिधान।।

किसी भाँति तुम को पा जायें, मिट जायें पथ की बाघायें।
यही 'पथिक' का सविनय गान, औपा करो हे औपानिधान।।

प्रार्थना 13

सुन्दर हो यह मानव जीवन।।

मेरे नाथ दीन दुःखहारी, औपा आपकी पतितपावनी।
अहेतुकी है सुधामयी है, सर्वसमर्थ विपद नशावनी।
उसी औपा से हे आनन्दधन ।।सुन्दर0।।

सुखी दशा में सावधान कर, हम सबको सेवा का बल दो
दुःखी दशा में त्याग कर सकें, वही शक्ति दो निर्मलमति दो।
लगा रहे तुममें चंचल मन ।।सुन्दर0।।

जिससे हम सुख दुःख बन्धन से, इस जीवन में मुक्त हो सके।
सतस्वरूप का अनुभव करके, क्षुद्र देह अभिमान खो सके।
कहीं रह न जाय अपनापन ।।सुन्दर0।।

प्रभो आपके परम प्रेम का नित्य मधुर आस्वादन करके।
परम तृप्त औतऔत्य हो सके अपने में तुमको ही भर के।
तुम्हीं 'पथिक' के हो प्रियतम धन ।।सुन्दर0।।

प्रार्थना 14

हे परमेश्वर परमात्मन हृदय बिहारी तुमको नमस्कार ।
हे प्रणतपाल विश्वम्भर हे दुःखहारी तुमको नमस्कार ।।

हे शान्ति सिन्धु हे परमपुरुष घट-घट व्यापक अन्तर्यामी।
हे सर्वगुणाश्रय गुणातीत असुरारी तुमको नमस्कार ।।

हे नित्यशुद्ध हे परम बुद्ध हे पूर्ण परात्पर अकथनीय।
हे प्राणिमात्र के जीवनधन हितकारी तुमको नमस्कार।।

हे पूर्णकाम सच्चिदानन्द हे नित्यमुक्त भव-भय भंजन।
हे जनतारन भक्त-उबारन हित अवतारी तुमको नमस्कार।।

हे विभु हे सर्वेश्वर्यपूर्ण हे प्रेममूर्ति अनुपम दाता।
हो 'पथिक' तुम्हींमय पाकर शरण तुम्हारी तुमको नमस्कार।।

प्रार्थना 15

हे पुरुषोत्तम भगवान तुम्हें सब में प्रणाम।
हे सर्वाधार महान, तुम्हें सब में प्रणाम।।

तुम क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ सभी के आश्रय।
तुम प्रऔति पुरुष के प्राण, तुम्हें सब में प्रणाम।।

हम मूढ़तावश तुमको समझ न पाते।
तुम ही हरते अज्ञान, तुम्हें सब में प्रणाम।।

तुम पाँचतत्व मन मति चित अहंता में हो।
तुम नित्य जीव में ज्ञान, तुम्हें सबमें प्रणाम।।

हे दाता हम सब कुछ तुम से ही पाते।
भूलें न तुम्हारा दान, तुम्हें सब में प्रणाम।।

जब तुममें रहकर विमुख तुम्हीं से रहते।
तब तुम हरते अज्ञान, तुम्हें सब में प्रणाम।।

जब करुणामय सतसंग सुलभ कर देते।
तब मिटे मोह अभिमान, तुम्हें सब में प्रणाम।।

तुमसे कण-कण में प्रतिक्षण-क्षण में गति है।
तुम सब में एक समान, तुम्हें सब में प्रणाम।।

हम 'पथिक' तुम्हीं में तुम ही तो हम मय हो।
यह रहे निरन्तर ध्यान, तुम्हें सब में प्रणाम।।

प्रार्थना 16

हे समर्थ शक्तिमान ! हे परम गुरू महान।

हे निज जन मन रंजन, हे सत्वर भय भंजन।
हे हरि दुर्मद गंजन, परम वन्द्य जगत प्रान।।

कोमल करुणावतार सर्वोपरि सुखाधार।
सबके प्रति अमित प्यार दुख हारी दयावान।।

अतिशय गम्भीर धीर, हे सुन्दर परमवीर।
तुम तम का हृदय चीर, देते हो दिव्य ज्ञान।।

हे निर्भय परम बुद्ध, माया ममता विरूद्ध।
हे प्रभु सर्वांग शुद्ध, चाहे यह ‘पथिक’ ध्यान।।

प्रार्थना 17

हे समर्थ हे परम हितैषी तुमसे ही कल्याण हमारा।
तुम्हें न पाकर व्यर्थ चला जाता मानव का जीवन सारा।।

परम बन्धु युग-युग के योगी, महाबुद्ध हे अमर महात्मन।
चूम सके जो चरण तुम्हारे उसका सफल हुआ मानव तन।
देव तुम्हारे दर्शन करके लग जाता तुम में जिसका मन।
तुम्हें छोड़ कर कहीं न जाता तुम्हीं दीखते हो प्रियतम घन।
कितनों ने ही सीख लिया मर कर जीने का मन्त्र तुम्हारा ।।

जाने कितने मुरझाये मुख खिलते देखे तुमको पाकर।
सदा पीड़ितों की पुकार पर रहे दौड़ते कष्ट उठाकर।
जो न कहीं सुख देख मिला, वह देखा श्रीचरणों में आकर।
जो न कभी हो सका वही, हो गया तुम्हारा ध्यान लगाकर।
शरण ले लिया उसको जिसने कभी हृदय से तुम्हें पुकारा।।

तुमको हमने दीनों दलितों की कुटिया में जाते देखा।
अपनी योगशक्ति से उनके, तुमको दुःख मिटाते देखा।

कहीं अश्रु से गीली पलकें स्वामिन, तुम्हें सुखाते देखा।
जो कि तुम्हें करना था उसमें कभी न देर लगाते देखा।
तुमने उसकी सुनी दयामय जिसको सबने ही दुतकारा।।

निज तन-मन का ध्यान न रखकर तुमने पर उपकार किया है।
तुमने सदा बिना कुछ चाहे प्राणिमात्र से प्यार किया है।
हे संघर्षतीत ! तुम्हीं ने पटरिपु का संहार किया है।
शरणागत डूबते हुए को जब देखा तब तार दिया है।
भव सागर में पड़े जीव को नाथ तुम्हीं से मिला किनारा।।

हे अभेद दृष्टा ! मंगलमय, शोक विनाशक हे विज्ञानी।
जन-मन रंजन, भक्त पाल, हे बाल सखा श्रद्धेय अमानी।
अतुलित प्राण शक्ति के सागर, गुण आगर हे अनुपम दानी।
तुमसे ज्ञान ज्योति पाते हैं, जग के चिर-तमवेष्ठित प्राणी।
सदा अशक्त बद्ध पीड़ित को, दिया तुम्हीं ने शक्ति सहारा।।

वीतराग, हे परम तपस्वी, नित्य समाहित चित्त धीर तुम।
शिव सुन्दर-सत्य के समिश्रण, हरते भव की विषम पीर तुम।
पावन तप के ओज तेज से दीप्तिमान निर्दोष वीर तुम।
हे संदर्शक परम तत्व के, चलते तम के हृदय चीर तुम।
'पथिक' हृदय को तुमसे मिलती दिव्य प्रेम की अविरल धारा।।

प्रार्थना 18

हे सुधर सलोने श्याम हमारे मनमोहन।।
हे परमात्मन सुखधाम हमारे मनमोहन।।

हे निर्गुण ! हे विभु गुणागार।
हे प्रभु सर्वज्ञ ललाम हमारे मनमोहन।।

हे नित्य निरंजन ! हे निष्क्रिय।
हो तुम निर्भय निष्काम, हमारे मनमोहन।।

हे करुणामय ! अविचल अव्यय।
अतुलित अनुपम अभिराम हमारे मनमोहन।।

हे ज्ञान ध्यान के परमाश्रय।
हे मुक्ति के विश्राम मनमोहन।।

तुम वाल्मीकि के उलटे जप।
अरु तुलसी के श्रीराम हमारे मनमोहन।।

तुम मीरा के गिरधर गोपाल।
हे सूरदास के श्याम हमारे मनमोहन।।

भक्तों के हित हे भावरूप।
तुम धारे अगणित नाम हमारे मनमोहन।।

यह 'पथिक' प्रेम से तुमको ही।
अब ध्याये आठों याम हमारे मनमोहन।।

प्रार्थना 19

है उस महान को नमस्कार।।

जो केवल परमानन्द रूप, है जिसका कण-कण में निवास।
उसको ही सब जग रहा खोज, जिसका यह जगमय चिद्विलास।
उस शक्तिमान को नमस्कार।।

जो एक प्रेम के भाववश, पाते जिसको प्रेमी प्रवीन।
आते रहते जिसके सम्मुख, नीचतिनीय दीनातिदीन।
उस दयावान को नमस्कार।।

जिसको कहते हैं दीनबन्धु, जो दुखियों की सुनता पुकार।
जिसकी महिमा अतुलित अनंत, जिसका चहुँदिशि से खुला द्वार।
उस गुणनिधान को नमस्कार।।

जिसकी इतनी है सरल प्राप्ति मिल सकते हैं जो सभी ठाम।
भक्तों के ही भावानुसार, दर्शन देते आनन्दधाम।
उसके विधान को नमस्कार।।

जो जीवन का निर्मल प्रकाश, मिटती है जिससे भूल भ्रान्ति।
गल जाता है देहाभिमान, मिलती है पावन परम शान्ति।
उस दिव्य ज्ञान को नमस्कार।।

जिस बल से वह अज्ञेय तत्व, अनुभव होता यद्यपि अरूप।
जिस बल से वह चिन्मय अचिन्त्य चिन्तन में आता निज स्वरूप।
उस सतत ध्यान को नमस्कार।।

बढ़ती जिससे अनुरक्ति भक्ति, होता जिससे परमानुराग।
ऐसा जिसका सुन्दर प्रभाव, हो जाय 'पथिक' में मोह त्याग।
उस सत्य ज्ञान को नमस्कार।।

प्रार्थना 20

मेरे स्वामी हृदय धाम आवो।।
न छिपावो, न चुरावो,
मेरी बिगड़ी दशा को बनावो।। मेरे0।।

कर दया दृष्टि अब सुधि मेरी ले लेना।
मैं निर्बल हूँ निज चरण भक्ति दे देना।
अपनावो।। सुपथ दिखावो।। अब आवो।।

हे नाथ छुड़ावो माया ने आ घेरी।
बलहीन दीन हूँ शरण आ परो तेरी।
न भुलावो।। विपद मिटावो।। न फंसावो।।

भगवान सत-ज्ञान लखावो।।
मेरे स्वामी हृदय धाम आवो।।

प्रार्थना 21

हे दयामय प्रभो क्या बतायें तुम्हें मैं पतित हूँ।
मुझे भूल जाना नहीं।

मैं शरण हूँ शरण हूँ तुम्हारी पड़ा
कहीं इस बार करना बहाना नहीं।।

नाथ कब तक मुझे तुम मिलोगे नहीं।
मैं औपा का भिखारी खड़ा हूँ यहाँ।

आप ही तो सुहृद दुःखहारी सदा।
कहीं झूठे प्रलोभन दिखाना नहीं।।

यहाँ संसार सूना हमें दिख रहा।
आपको छोड़ किसको पुकारूँ यहाँ।
शान्ति सुख के विधाता हमारे तुम्हीं।
ज्ञान दो झंझटों में फंसाना नहीं।।

मानता हूँ कि पापी अधम नीच मैं।
किन्तु तुम तारते पापियों को सदा।
नाथ विनती पथिक की यही है।
इसे भक्ति देने में देरी लगाना नहीं।।

प्रार्थना 22

सुनो विनय मेरी प्राणनाथ।।

हरो दुःख सकल पथिक के-बल दीजै
सुधि लीजै-साथ-साथ अब हो गया हाथ।
सुनो विनय मेरी प्राणनाथ।।
मोको बस तेरी आस-करहु विघन नाश,
हरहु सकल पाप प्रभू सरन परो चरन,
राखि लेहु लाज मेरी नाऊँ माथ।
सुनो विनय मेरी प्राणनाथ।।

प्रार्थना 23

प्रभो अन्तर के प्राणाधार।
हमारी भी सुधि लो भगवान।।

भ्रमित हूँ विश्वविपिन में भूलि।
मोह ममता में बन अनजान।।

खोजता रहता तुम्हें सदैव।
नहीं मिलते हो मेरे नाथ।।

तभी पाऊंगा तुमको खोज।
तुम्हीं दोगे जब अपना हाथ।।

सुना करता हूँ मै यह बात।
नहीं कुछ हमसे तुमसे भेद।।

हमारा रूप सच्चिदानन्द।
लखादो नाथ मिटै उर खेद।।

कहूँ क्या कैसा विश्व प्रपंच।
प्रचायक तुमहीं इसके देव।।

निकल सकता है कैसे जीव।
न जब तक हे प्रभो तुम सुधि लेव।।

हमारी बुद्धिप्रभा अति क्षीण।
छिपा है भाग्यभास्कर आज।।

बढ़ रहा अन्धकार अज्ञान।
मूढ़ता रोक रही सब काज।।

देखकर हूँ अतिशय भयभीत।
प्रगट हो जावो प्राणधार।।

पिला दो मधुर प्रेम पीयूष।
दिखा दो भक्ति का भण्डार।।

अपावन हृदय कुटी हा नाथ।
बना लो अपनी प्रेम कुटीर।

हमें अपना लो अब हे देव।
हरो अज्ञान हृदय की पीर।।

तुम्हीं प्रभु हो सब भांति समर्थ।
दिखा दो पावन परम प्रकाश।।
खोज लूं तुमको जिसमें देव।
पथिक की यह पूरी हो आश।।

प्रार्थना 24

प्रभू के नाम पै मन को मनाये बैठे हैं।
कभी होगी दया आशा लगाये बैठे हैं।।

अभी तो हमसे वो निज को चुराये बैठे हैं।
नहीं सुपात्र हूँ इससे भुलाये बैठे हैं।।

द्वार खोलेंगे कभी देख करके दीन दशा।
करेंगे प्रेम दान लौ लगाये बैठे हैं।।

किन्तु सन्ताप ये क्या देख वो अपनायेंगे।
बने अवगुण की खानि गुण गंवाये बैठे हैं।।

हम पतित हैं सही पर शरण पतित पावन की।
कभी पावन बनायेंगे जो आये बैठे हैं।।

आसरा है यही अब पथिक पर दया कर दो।
तमाम ठोकरें जन्मों की खाये बैठे हैं।।

प्रार्थना 25

अब अपने को हमसे छिपाना न भगवन।
ये भूले हुए को भुलाना न भगवन।।

मुझे मूर्ख चंचल प्रमादी समझकर।
वो पावन सुदृष्टि हटाना न भगवन।।

मिलूँ आपही में लगन ये लगी है।
परीक्षा कठिन कोई लाना न भगवन।।

ये मन तो महा नीच पामर हमारा।
प्रलोभन विषय के दिखाना न भगवन।।

बड़ी मोहनी नाथ माया तुम्हारी।
उसी गोद में अब सुलाना न भगवन।।

दया कर पथिक को जो इतना उठाया।
तो अब इसको नीचे गिराना न भगवन।।

प्रार्थना 26

क्या करें अपनी कलुषता को मिटावें किस तरह।
मम हृदय तिमिरान्ध है तब भक्ति पावें किस तरह।।

इधर पतित हृदय अधम, तुम परम पावन नाथ हो।
बता दो हम आपके अब पास आवें किस तरह।।

मन मलिन मद मोह पूरित आपनी हठ कर रहा।
कुछ यहाँ माने नहीं इसको मनावें किस तरह।।

हे दयामय लाज मेरी आपही के हाथ है।
जबकि हम इतने निबल क्या कर दिखावें किस तरह।।

आपके यदि हैं भगवन आपही अब देखिये।
पथिक निज बिगड़ी दशा को अब बनावे किस तरह।।

प्रार्थना 27

कैसी सुगमता से होता पथारोहण किन्तु,
फिर भी मैं भली-भांति चलने न पाता हूँ।

माइक प्रलोभनों से मन भूल जाता यहाँ,
तब भी तुम्हीं को नाथ सबिनै बुलाता हूँ।

पाता हूँ न नित्यानन्दरूप परमात्मा को,
क्योंकि बार-बार बीच रोक लिया जाता हूँ।

आता हूँ तुम्हारी ओर माया से छुड़ाना नाथ,
पथिक तुम्हारा ही हूँ तुम ही को ध्याता हूँ।

प्रार्थना 28

अपने अन्तर में कब हे प्रभु,
होगा वह पावन अवलोकन।
कलिल कलुषता ध्वंसित होकर,
उज्ज्वल होगा कब अन्तरमन।।

माया के प्रपंच विप्लव में,
कर्म काल के भीषणरव में।
भटक रहा हूँ दुःख प्रद भव में,
व्याकुल हूँ कब हो दुखमोचन।।

मिलती शान्ति न भगवन तुम बिन,
आयु विगत होती है छिन छिन।
फाँस रहे हैं मन को निशि दिन,
विषयों के यह प्रचुर प्रलोभन।।

सुन लो हे जीवनधन प्यारे,
हम तेरे तुम एक हमारे।
कभी कहीं रोशनी से न्यारे,
हो सकते हैं ये तारागन।।

अब न नाथ हमको भटकावो,
जन्म मरण का त्रास मिटावो।
सत चित् आनन्द रूप लखावो,
पथिक पति के हे जीवन धन।।

प्रार्थना 29

तुम्हीं जग जीवन आधार हो ऐ प्रेम प्रभो,
निज सत्य दरस दो अबतो भुलावो ना।

बहुयुग बीते इस भांति से भुलाते हुए,
नटराज लीला से ये मन को लुभावो ना,

नाना नाम रूपों के सुवस्त्रों को धारणकर,
प्रभु जो अनन्त में ये एकता छिपावो ना।

तुम तो विवस्त्र ही हो प्रेम देव प्राणाधार,
पथिक से जाने गये अब ओट जावो ना।।

प्रार्थना 30

हे प्रभु निज करकमलों से यह जीवन वाद्य बजावो।
अब स्वानुकूल रूचि से ही यह बिगड़ा साज सजावो।।
तब तक ही इससे प्रतिक्षण बेसुरी तान आती है।
जब तक न वाद्यकर कौशल निज स्वामिन को पाती है।।
कितने कठोर हाथों ने इसकी दुर्गति कर डाली।
जिमि प्रभापूर्ण मणि अहि ने विष से ही हो भर डाली।।
निजऔत दुर्दैव कुफल से क्षुद्रहमिति के हाथों में।
पददलित रहा जो होगा मानव प्रणम्य माथों में।।
विकसित सौन्दर्य स्वरों को कल कुशल करों में जाकर।
सौरभगुण शोभित होगा निज निर्माता को पाकर।।
निकलेंगे प्रतिक्षण इससे, स्वर सामरस्ययुत गाने।
पुनि विश्वविमोहित होगा सुनकर अति सुमधुर तानें।।
हे देव दया कर इसको अब स्वाधिकार में ले लो।
निज चरणोपान्त मिलाकर मनचाही रुचि से खेलो।
जिससे पुनि कहीं अशुचि कर कुस्पर्श न होने पावै।
तव पावन कर औत इसका नव रंग न धोने पावै।।
तुमको ही उचित कला में आता है इसे बजाना।
इस विश्वमंच में प्रभुवर निज इच्छित तान सुनाना।।
इससे सुमधुर तेरा ही अनुपम संगीत उदय हो।
जिसके समाप्त होते ही यह पथिक आप में लय हो।।

प्रार्थना 31

भगवान बतावो खोजने जाऊँ तुम्हें कहाँ।
मिलते यहां नहीं तो पाऊँ तुम्हें कहाँ।।

हर जान की तुम जान हो इस दिल में भी निहाँ।
हैरत कि उसी दिल से बुलाऊँ तुम्हें कहाँ।।

जब कुछ भी बताने के कब्ले जानते हो तुम।
फिर अपना हाले जार सुनाऊँ तुम्हें कहाँ।।

क्या आरजू करूँ मैं कहां जुस्तजू करूँ।
कुछ लिख के या कुछ कह के सुनाऊँ तुम्हें कहाँ।।

कुछ तो बताइये दिल तसकीन के लिये।
किस शक्ल में ला करके बिठाऊँ तुम्हें कहाँ।।

प्रार्थना 32

सत रूप प्रभो अपना अब तो मुझे दिखाना।
अज्ञान तिमिर नयनों का नाथ अब मिटाना।।

हम रो रहे तुम्हीं से दुःख हरण द्वार आकर।
परमेश न तुम बिन है मेरा कहीं ठिकाना।।

तुम दूर नहीं हमसे सब देख ही रहे हो।
अब लाज हमारी ये जैसे बने निभाना।।

जिस रूप में तुम्हारे यह विश्व समाया है।
वह विभु विराट दर्शन करुणेश प्रभु! कराना।।

इस दृश्य जगत में अब फिर भूल न जाऊँ।
मुक्तिद स्वज्ञान अनुभव पथ पथिक को बताना।

प्रार्थना 33

याद उलट कर दया बनाती है।

जीवन ये पार हो न हो, प्रियतम तुम्हें भूलूँ न मैं।
आत्म विचार हो न हो, प्रियतम तुम्हें भूलूँ न मैं।।

अब तो दयानिधि नाम का, मै भी सहारा पा चुका ।
चाहे किसी भी भाव से, मैं भी :ारण में आ चुका ।
मेरा :ुमार हो न हो, प्रियतम तुम्हे भूलूँ न मैं।।

जिसमें कि अपना निवास है, कहते जिसे पंचकोश हैं।
मैं सोचता हूँ क्या करूं इसमें अनेकों दोश है।
कुछ उपचार हो न हो, प्रियतम तुम्हे भूलूँ न मैं।।

संसार में कोई भी हो, सबकी जहाँ सुध ली गई।
बदले में कुछ लिये बिना, मन चाही वस्तु दी गई।
मेरी पुकार हो न हो, प्रियतम तुम्हें भूलूँ न मैं।।

सब तत्वज्ञानी गुणी न थे, लाखो पतित सुधर गये।
जिनमें वह त्याग तप भी न था, सब नाम ले ले तर गये।
मेरा उद्धार हो न हो, प्रियतम तुम्हें भूलूँ न मैं।।

जप कीर्तन चिन्तन भजन, लीला चरित्र गान से ।
तीर्थाटन यज्ञ दान से, अष्टांग योग ध्यान से ।
मन निर्विकार हो न हो, प्रियतम तुम्हें भूलूँ न मैं।।

जो कुछ भी अब तक मिला मुझे, दाता तुम्हीं को ही मानता।
केवल औपा से ही कल्याण है, मैं हूं पथिक इतना जानता ।
कुछ और सार हो न हो, प्रियतम तुम्हें भूलूँ न मैं।।

प्रार्थना 34

अज्ञान में अहंकार से विमूढ़ जीवात्मा में निराशा होती है,
तभी दुःखी दशा में अदृश्य दिव्य :ाक्ति का आश्रय चाहता है।
मेरे देवता मुझको देना सहारा।
कहीं छूट जाए न दामन तुम्हारा ।।

बिना तेरे मन में समाये न कोई ।
लगन का ये दीपक बुझाये न कोई।
तू ही मेरी किश्ती है तू ही किनारा।।

तेरे रास्ते से हटाती है दुनिया।
इशारे से मुझको बुलाती है दुनिया।।
मुझे बचा सकता तुम्हारा इशारा।

तुम्हारा ही गुण गान गाता रहूँ मैं।
हृदय में तुम्हीं को ही ध्याता रहूँ मैं।
तुम्हारे सिवा अब लगे कुछ न प्यारा।।

प्रार्थना 35

हे प्रेममय प्रभु ऐसी दया हो, जीवन निरर्थक जाने न पाये।
जब तक अविद्या अज्ञान में हम, कुछ बन सकता मेरे बनाये।।

ऐसा जगा दो फिर सो न जायें, साधक बने प्रेम प्रज्ञा जगायें।
ममता अहंता को त्याग पायें, भय भ्रान्ति दुःख कुछ भी रह न जाये।।

वह योग्यता दो सेवा करें हम, कष्टों के सम्मुख धीरज धरें हम।
अपना हृदय सद्गुण से भरें हम, मन में न कोई दुर्भाव आये।

तुमने दयामय नरतन दिया है, यह बुद्धि दी है यह मन दिया है।
निज पूर्णता का साधन दिया है, उपयोग की विधि सदगुरु बताये।

हे प्रभु हमें निराभिमानी बना लो, धन मान श्रम के दानी बना लो।
सर्वत्र अपना ध्यानी बना लो, हम हैं पथिक यह आशा लगाये।

ईश महिमा 36

अब तुम्हारी शरण हे प्रभु ।।

चतुर्दिक हम भटक आये, मन तुम्हीं में शान्ति पाये।
तुम्हीं से ही सब प्रकाशित जगत्, जीवन, मरण हे प्रभु।।

तुम्हीं तो आनन्दमय हो अकिंचन के परमधन हो।
हुआ करता सभी के हित, तुम्हारा अवतरण हे प्रभु।।

सदा सदगति तुम्हीं देते, धृति विमलमति तुम्हीं देते।
तुम्हीं से ही शुद्ध होता हमारा आचरण हे प्रभु।।

विश्व निर्माता तुम्हीं हो शक्ति के दाता तुम्हीं हो।
तुम्हीं से ही हो रहा है, सकल पोषण भरण हे प्रभु।।

बना लो अब हमें ज्ञानी, पूर्ण प्रेमी निरभिमानी।
हे औपालो अभय दानी, तुम्हीं हो दुःख हरण हे प्रभु।।

तुम्हारे ही ज्ञान द्वारा, तुम्हारे ही ध्यान द्वारा।
तुम्हें पा जायें पथिक हम, तोड़ कर आवरण हे प्रभु।।

ईश महिमा 37

अधम उद्धारने दीन दुख टारने, प्रेम के वश सदा प्रभो आते तुम्ही।
परम मंगल करन सर्व संकट हरन, रूप अनुपम अनेकों बनाते तुम्हीं।

कोई कितना ही पापी अधम क्यों न हो, छाया अज्ञान का घोर तम क्यों न हो।
मोह निद्रा में सोये हुये जीव को, युक्ति से हे दयामय जगाते तुम्हीं।।

याद कर प्रेम से या कि भय से तुम्हें, जब किसी ने पुकारा हृदय से तुम्हें।
तुमने सबकी सुनी जिस तरह हो सका, पार भवसिंधु से हो लगाते तुम्हीं।।

भूलता है तुम्हें जीव अभिमान में, लीन रहता सदा असत के ध्यान में।
अपने हित के वचन मानता जब न मन, पतित होने पै उसको उठाते तुम्हीं।।

आपका योग तो नित्य ही प्राप्त है, आपकी शक्ति ही सब कहीं व्याप्त हैं।
जो 'पथिक' प्रेम से चाहता है तुम्हें, उसे मिलने का साधन दिखाते तुम्हीं।।

ईश महिमा 38

अनोखी देखो प्रभु की शान ।

प्रभु का है दरबार निराला, सब को आश्रय देने वाला ।
राजा रंक समान ।। अनोखी0 ।।

जितने धर्मी, दानी, मानी, जो कि धुरन्धर ध्यानी ज्ञानी।
गाते महिमा गान ।। अनोखी0 ।।

जो धनपति जनपति कहलाते, यहीं शान्ति सब आकर पाते
जब होते हैरान ।। अनोखी0 ।।

जिनकी सुनकर अमृत बानी, पत्थर दिल बन जाते पानी।
खो कर के अभिमान ।। अनोखी0 ।।

जहाँ न रहती ममता माया, परम तृप्तिकर जिनकी छाया।
खुला दया का दान ।। अनोखी0 ।।

जगा रहे सोने वालों को हँसा रहे रोने वालों को।
देकर पावन ज्ञान ।। अनोखी0 ।।

बड़े-बड़े पापी व्यभिचारी, हो जाते त्यागी व्रतधारी।
करके सुमिरन ध्यान ।। अनोखी0 ।।

जो कोई भी शरणागत है, श्रीचरणों में जो अवनत हैं।
'पथिक' वही मतिमान ।। अनोखी0 ।।

ईश महिमा 39

एक अनन्त अपार हो परमात्मन मेरे, अनुपम सर्वाधार हो परमात्मन मेरे।।

तुम अविनाशी घट-घट वासी, सबमें सबके पार हो परमात्मन मेरे।।
तुम लीलाधर अद्भुत सुन्दर, निराकार साकार हो परमात्मन मेरे।।

परमप्रेममय अविचल अव्यय, जगदीश्वर करतार हो परमात्मन मेरे।।
तुमहीं दाता सब विधि त्राता, गुप्त प्रगट सतसार हो परमात्मन मेरे।।

तुम जीवनधन सदानन्दघन, परम शक्ति भण्डार हो परमात्मन मेरे।।
तुम सर्वेश्वर हे परमेश्वर, 'पथिक' जीवनाधार हो परमात्मन मेरे।।

ईश महिमा 40

जब तुम्हीं ध्यान में आ जाते सारे दुख द्वन्द मिटा जाते।।

मेरे जीवन की गति मति में, तन या मन वाणी की कृति में।
जैसा कुछ जहाँ उचित होता वैसा आदेश सुना जाते।।

हम अपना व्यर्थ समय खोकर फिरते जब कभी भ्रमित होकर।
तब तुम्हीं नाथ करुणा करके, हमको सन्मार्ग बता जाते।।

जब व्याकुल हो कोई तुम बिन, सबका है यह अनुभव उस दिन।
प्रत्यक्ष नहीं मिलते तब भी, सपने में दरश दिखा जाते।।

विरले ही तुमको जान सके, जो प्रेमी वह पहिचान सके।
माया ममता से रहित 'पथिक' जो तुम्हें खोजते पा जाते।।

ईश महिमा 41

तुम सम कौन उदार परम प्रभु।।

तुम्हें भूल कर हम इस जगमें, बनते अपराधी पग पग में।
तुम करते उद्धार परम प्रभु।।

जो कुछ पाते व्यर्थ गँवाते, फिर भी तुम देते ही जाते।
ऐसा अनुपम प्यार परम प्रभु।।

तुमसे ही तुममें सबकी गति, तुमसे ही सद्‌गुण शुभ सन्मति।
तुमसे ही निस्तार परम प्रभु।।

कितने अधःपतित होकर हम, जब आते सन्मुख रोकर हम।
तुम करते स्वीकार परम प्रभु।।

तुमने ही मुझको अपनाया, तुमको ही इक अपना पाया।
तुमही परमाधार परम प्रभु।।

तुम बिन कुछ भी लगे न प्यारा, तुमसे माँगू प्रेम तुम्हारा।
सुन लो 'पथिक' पुकार परम प्रभु।।

ईश महिमा 42

तुम बिन कुछ भी लगे न प्यारा, हे प्रियतम परमात्मन्।।
अखिलेश्वर शक्तिमान, हे प्रियतम परमात्मन्।।

तुम अनुपम अकथनीय, अगम अगोचर अव्यय।
तुम अनादि विश्वम्भर, हे परमेश्वर जय जय।
तुम जीवन ज्योति प्रान, हे प्रियतम परमात्मन्।।

तुम निरीह निर्गुण हो, अमल अचल निर्विकार।
तुम अरूप सर्वरूपमय, अभेद प्रकृति पार।
तुम सुन्दर गुणनिधान, हे प्रियतम परमात्मन।।

तुम सतचित आनन्दघन, अगणित हैं रूप नाम।
विविध भाँति तुम्हीं, एक सबके नयनाभिराम।
जानत विरले सुजान, हे प्रियतम परमात्मन्।।

तुम कितने अद्‌भुत हो समुझत ही बने नाथ।
सभी ओर तुम समर्थ, हो अभिन्न सदा साथ।
'पथिक' करत विनय गान, हे प्रियतम परमात्मन्।।

ईश महिमा 43

तुमको ही निशि दिन ध्याऊँ हे परमात्मन।
अपने में तुमको पाऊँ हे परमात्मन।।

प्रभु हम समान हैं शरण अनेक दुखारी।
पर तुम हो एक मात्र सबके हितकारी।
अब कभी न तुम्हें भुलाऊँ हे परमात्मन।।

तुम हो महान अगणित ब्रह्मण्ड समाते।
हो सूक्ष्म इस तरह, नहीं दृष्टि में आते।
कितनी ही खोज लगाऊँ हे परमात्मन।।

ज्ञानी अति तृप्त स्वयं में तुमको पाकर।
प्रेमी सन्तुष्ट तुम्हारे गुण गा गाकर।
मैं सुन कर के ललचाऊँ हे परमात्मन।।

तुम दीन बन्धु हम अतिशय दीन भिखारी।
प्रभु कृपा करो यह हरो अविद्या सारी।
मैं 'पथिक' कहाँ अब जाऊँ हे परमात्मन।।

ईश महिमा 44

तुमहीं सबके जीवन प्रान हे अन्तर्यामी भगवान।।

कोई तुमको क्या पहिचाने जिसे जना दो सोई जाने।
मेरे परमाराध्य महान् हे अन्तर्यामी भगवान।।

तुमसे ही अणु-अणु में गति है, तुमसे रचती सृष्टि प्रकृति है।
अखिल विश्व के परमस्थान, हे अन्तर्यामी भगवान।।

तुम्हें न भूलूँ यही विनय है, फिर कुछ भी हो न भय है।
सब विधि रहे निरन्तर ध्यान हे अन्तर्यामी भगवान।।

हे सर्वेश्वर विभु अविनाशी, सर्वाधार परमसुख राशी।
'पथिक' सदा गाये गुणगान, हे अन्तर्यामी भगवान।।

ईश महिमा 45

दुःखों से अगर चोट खाई न होती।
तुम्हारी प्रभो याद आई न होती।।

जगाते न यदि तुम निज ज्ञान द्वारा।
कभी हमसे कोई भलाई न होती।।

कहीं भी हमें चैन मिलती न जग में।
तुम्हीं ने जो चिन्ता मिटाई न होती।।

कभी जिन्दगी में ये आँखे न खुलतीं।
अगर रोशनी तुमसे पाई न होती।।

बनी तुमसे लाखों की हम मानते क्यों।
हमारी जो बिगड़ी बनाई न होती।।

किसी का कहीं भी नहीं था ठिकाना।
शरण यदि परम शान्तिदायी न होती।।

'पथिक' से पतित की भला कौन सुनता।
तुम्हारे यहाँ जो सुनाई न होती।।

ईश महिमा 46

न भूलो परमेश्वर का ध्यान, यही तो अपने जीवन प्रान।

यह सब संगी कुछ ही दिन के, तुम चल रहे भरोसे जिन के।
समझ कर यह संभ्रम अज्ञान, न भूलो परमेश्वर का ध्यान।।

जग के वैभव बल जन धन में, रहना निरासक्त इस तन में।
छोड़ के इन सबका अभिमान, न भूलो परमेश्वर का ध्यान।।

केवल सर्वाधार यही है, सुन्दर सुखमय सार यही है।
जो कि अति सूक्ष्म अतुल महान, न भूलो परमेश्वर का ध्यान।।

ममता देह गेह की तजकर आ जाओ सतपथ में भज कर।
'पथिक' जो तुम चाहो कल्यान, न भूलो परमेश्वर का ध्यान।।

ईश महिमा 47

पतितों का संसार में उद्धार करने वाले प्रभु तुम।
जग प्रपंच विस्तार में निस्तार करने वाले प्रभु तुम।।

जब देता कोई न सहारा, छुट जाता जन धन बल सारा।
उस असहाय पुकार में उपकार करने वाले प्रभु तुम।।

तुमसे मिलती सबको शुभमति तुमसे ही जीवन में सद्गति।
पापों के प्रतिकार में उपचार करने वाले प्रभु तुम।।

महापुरुष जो तुमको भजते उनको तो तुम कहीं न तजते।
उनके भावोद्गार में शुचि प्यार करने वाले प्रभु तुम।।

तुम ही जानो सबके चित्त की तुम करते हो सब कुछ हित की।
'पथिक' भवार्णवधार में अब पार करने वाले प्रभु तुम।।

ईश महिमा 48

परम प्रभु सभी दशा में सदा तुम्हारा प्यार पाऊँ मैं।
मुझे जब तुम्हीं दिखाते तभी मुक्ति का द्वार पाऊँ मैं।।

सदा तुमसे ही गति निर्बाध, पूर्ण करते सब मन को साध।
तुम्हीं से मिलता प्रेम अगाध, शरण अधिकार पाऊँ मैं।।

नित्य चिन्मय तुम सर्वाकार, तुम्हीं में चलता यह संसार।
तुम्हीं देते सद्‍भाव विचार, मोह का पार पाऊँ मैं।।

तुम्हीं से मिलता सद्‍ज्ञान तुच्छ को करते तुम्हीं महान्।
जहाँ हर लेते हो अभिमान, तुम्हीं को सार पाऊँ मैं।।

तुम्हारा जब लेता हूँ नाम तभी मिलता मुझको विश्राम।
'पथिक' हूँ अब होकर निष्काम, आत्म उद्धार पाऊँ मैं।।

ईश महिमा 49

परम प्रियतम प्रभु सर्वाधार प्रेम का प्यार पा जाऊँ।
अहा फिर क्या ! अनुपम आनन्द मुक्ति का द्वार पा जाऊँ।।

सदा तुम तक हो गति निर्बाध यही है इस जीवन की साध।
हमारे मिट जायें अपराध, शरण अधिकार पा जाऊँ।।

तुम्हारी लीला अलख अपार, भुवन मनमोहन लीलाधार।
तुम्हारे छ□ वेश विस्तार, मोह का पार पा जाऊँ।।

मुझे दे दो वह पावन ज्ञान समझ पायें हम तुम्हें महान्।
तुम्हारा दृढ़ हो जाये ध्यान, यही आधार पा जाऊँ।।

युगों से खोज फिरे संसार, 'पथिक' पर कृपा करो इस बार।
तुम्हारा निरावरण अधिकार, प्रभो आकार पा जाऊँ।।

ईश महिमा 50

परमेश्वर का ध्यान न भूलो,
परमतत्व का ज्ञान न भूलो।

इस दुनियाँ में सार यही है, जीवन का आधार यही है।
तुम इसकी पहचान न भूलो।।परमेश्वर।।

सब सुख का भण्डार यही है, पावन प्रेमागार यही है।
निशिदिन प्रभु गुणगान न भूलो।।परमेश्वर।।

दुःखों का उपचार यही है, भवनिधि में पतवार यही है।
सन्तों का सन्मान न भूलो ।।परमेश्वर।।

सत्याचार विचार यही है, सर्वधर्ममय सार यही है।
दया प्रेम का दान न भूलो ।।परमेश्वर।।

आश्रय सभी प्रकार यही है, सब विधि पथिक पुकार यही है।
अपना लक्ष्य महान न भूलो ।।परमेश्वर।।

ईश महिमा 51

प्रभु अनेक रूपों में कब क्या कर जाते हो।
औपा करो दयासिन्धु तुम्हें देख पायें हम।।
सो जाते जब हम तुम्हीं तो जगाते हो।
कृपा करो दयासिन्धु तुम्हें देख पायें हम।।

भूलते हैं तुमको जब हम इस संसार में।
अपने को खो देते किसी के भी प्यार में।
असत् को सत् मानते हैं जब हम अविचार में।
दुखाघात सहते जब मोह अन्धकार में।
पथ में गिरते जब तुम्हीं तो उठाते हो।
औपा करो दयासिन्धु तुम्हें देख पायें हम।।

जहाँ बने भोगी हम शक्ति हीन होते गये।
पर में सुख मान लिया, पराधीन होते गये।
जितने अभिमानी बने उतने दीन होते गये।
जगत् के प्रपंच में ही अधिक लीन होते गये।
वहीं हमें मुक्ति-युक्ति साधना बताते हो।
कृपा करो दया सिन्धु तुम्हें देख पायें हम।।

तुम से ही हमें सदा प्यार मिला मान मिला।
हम तो अति मूढ़ ही थे, तुम से ही ज्ञान मिला।
शुभ सुन्दर जो भी मिला, तुम से ही दान मिला।
जो न जानते थे हम, वह भी सब ज्ञान मिला।
तुम समर्थ लघु को ही महत्तम बनाते हो।
औपा करो दया सिन्धु तुम्हें देख पायें हम।।

समझते थे तन मन धन सभी कुछ हमारा है।
दृष्टि खुली तब दिखता तुम्हारा ही सारा है।
अहंकार को तो अभिमान सदा प्यारा है।
इसे मिटा दो इससे सब कोई हारा है।
साधक के तुम्हीं संताप सब मिटाते हो।
औपा करो दयासिन्धु तुम्हें देख पायें हम।।

जानते हो सब मन की तुम्हें क्या सुनायें हम।
छिपा नहीं सकते कुछ तुम्हें क्या दिखायें हम।
तुम में हम तुम हम में खोज क्या लगायें हम।
नित्य प्राप्त हो जब तुम कहाँ जायें आयें हम।
'पथिक' के बाहर भीतर तुम्हीं तो समाये हो।
औपा करो दया सिन्धु तुम्हें देख पायें हम।।

ईश महिमा 52

प्रभु कृपा महान् है।।
जहाँ सुलभ सत्यसंग अहं निराभिमान है ।। प्रभु0।।

जो किसी विपत्ति में न धैर्य छोड़ता कभी।
जो स्वधर्म कर्म से न मुख मोड़ता कभी।
शक्ति सदुपयोग का जहाँ कि सतत ध्यान है ।। प्रभु0।।

जगत् में अप्राप्त वस्तु की न चाह हो जहाँ।
ईर्ष्या विरोध क्रोध की न राह हो जहाँ।
मुक्ति भक्ति के लिये जिसे कि आत्म ज्ञान है ।। प्रभु0।।

जो असंग रह सके, जिसे न क्षोम हो कहीं।
जन धन अधिकार भोग का न लोभ हो कहीं।
जब कि शत्रु मित्र लाभ हानि में समान है ।। प्रभु0।।

शान्ति दीखती जिसे सकल विकार त्याग में।
रहे कर्म व्यस्त पर, फँसे न चित्त राग में।
जो कि प्राप्त भोग में सतर्क सावधान है ।। प्रभु0।।

जब वियोग का न भय संयोग की न दासता।
दृष्टिगत जिसे सुखैश्वर्य तुच्छ भासता।
वहीं औपापात्र श्रेष्ठ परम भाग्यवान है ।। प्रभु0।।

पतित पावनी समर्थ कष्ट नाशिनी औपा।
दुःख में छिपी अनन्त सुख प्रकाशिनी कृपा।
'पथिक' कृपा का विचित्र देखता विधान है ।। प्रभु0।।

ईश महिमा 53

प्रभुजी तुम सब उर वासी हो, विनाशी में अविनाशी हो।।

जहाँ होता सब कुछ का अन्त, वहीं दिखते हो तुम्हीं अनन्त।।
सर्वमय स्वयं प्रकाशी हो ।प्रभु जी0।।

जहाँ मिल जाता ज्ञानालोक, न रहता लोभ मोह भय शोक।
तुम्हीं तुम आनन्द राशी हो ।प्रभु जी0।।

प्रभु औपा से मिटता अज्ञान, अहं में मिलते नित्य महान।
चपल मन सहज उदासी हो ।प्रभु जी0।।

तुम्हीं में मैं हूँ देखा शोध, तुम्हीं मुझमय हो यह है बोध।
'पथिक' सर्वात्मविलासी हो ।प्रभु जी0।।

ईश महिमा 54

भक्तों की एक चाह में, दर्शन दिखाते आप हैं।
दुखियों की सच्ची आह में, हे नाथ आते आप हैं।।

जीवों पर प्यार करते हुए, नीचों के बीच उतरते हुए।
पतितों के पाप हरते हुए, उनको जगाते आप हैं।।

तुमसे ही शान्ति के सारे साज, भूले भले ही मानव समाज।
अपनी शरण में लिये की लाज सच में निभाते आप हैं।।

कोई तुम्हें पाते ज्ञान में, हैं देखते कोई ध्यान में।
जो कि 'पथिक' अज्ञान में, उनको उठाते आप हैं।।

ईश महिमा 55

मैं क्या माँगू जब मेरा सब कुछ भार तुम्हीं में परमात्मन।
जाने अनजाने जीवन का विस्तार तुम्हीं में परमात्मन।।

धड़कन नाड़ी प्राणों की गति तन का पाचन विधिवत् पोषण।
चलता है जन्म-मरण तक सब व्यापार तुम्हीं में परमात्मन।।

यह अहंकार अपने ही दोषों से अगणित दुःख पाता है।
इस महारोग का होता है उपचार तुम्हीं में परमात्मन।।

सुख के पीछे भागते हुये जब हम अतिशय थक जाते हैं।
विश्राम सुलभ होता है मन के पार तुम्हीं में परमात्मन।।

ज्यों सागर में तरंग रहती ऐसे हम रहते हैं तुम में।
तुम ही तो अपने हो, अपना अधिकार तुम्हीं में परमात्मन।।

जिसका कोई भी रूप नहीं वह सर्वरूपमय तुम ही हो।
यह सभी बिगड़ते बनते हैं आकार तुम्हीं में परमात्मन।।

उत्तर दक्षिण पूरब पश्चिम से पथ कितने ही दिखते हैं।
हम 'पथिक' कहीं हों मिलते हैं सब द्वार तुम्हीं में परमात्मन।।

ईश महिमा 56

मैंने सुना है तुम हो पर यह कुछ भी नहीं हो।
जो कुछ हो विलक्षण हो तुम जैसे भी कहीं हो।।

तुम झलक दिखाते कभी ज्ञानी के ज्ञान में।
तुम समझ में आते कभी ध्यानी के ध्यान में।
तुम चेतना बन चमकते हो स्वाभिमान में।
तुम क्षुद्र में हो और तुम्हीं महान में।
इस झूठ के परदे में हो जो कुछ हो सही हो ।मैंने0।।

जिस दर पै आके कहीं जाना नहीं रहे।
मन के लिये कोई भी बहाना नहीं रहे।
जाने के लिये कोई ठिकाना नहीं रहे।
पाकर तुम्हें फिर कुछ पाना नहीं रहे।
मेरी ये चाह है कि तुम्हारी ही चही हो ।मैंने0।।

तुमको कभी दूरातिदूर मान रहे हम।
आनन्दमय चिन्मात्र कभी जान रहे हम।
अपने ही रूप में कहीं पहिचान रहे हम।
संसार में क्या सार है यह छान रहे हम।
हमसे वो दूर कर दो जो कुछ भूल रही हो ।मैंने0।।

सब खोज लगा करके, जाना यही हमने।
तीर्थों में भी जाकर के जाना यही हमने।
कुछ वेष बना करके जाना यही हमने।
अब स्वयं में आकर के जाना यही हमने।
मुझ 'पथिक' में हो, मैं जहाँ हूँ तुम भी वहीं हो ।मैंने0।।

ईश महिमा 57

मंगलमय घड़ी आई है कोई जाने न जाने।।

जब ते मिले दरश सद्‌गुरु के मनहुँ परमनिधि पाई है,
कोई जाने न जाने।।

शुभ सतसंगति सुलभ भई जब ज्ञानामृत झरिलाई है,
कोई जाने न जाने।।

सुनि सुनि निज प्रियतम की महिमा मन में सुरति समाई है,
कोई जाने न जाने।।

एकहि मनन एक ही चिन्तन एक ही छवि मन भाई है,
कोई जाने न जाने।।

सकल विश्व में उस सुन्दर को शुचि सुन्दरता छाई है,
कोई जाने न जाने।।

'पथिक' धन्य वह जिसने अपने प्रभु से प्रीति लगाई है,
कोई जाने न जाने।।

ईश महिमा 58

सकल भुवन के गान तुम्हीं हो।
सर्वाधार महान् तुम्हीं हो।।

तुम नास्तिक की प्रऔति शक्ति में, आस्तिक की श्रद्धेय अस्ति में।
ज्ञानी की तत्वानुरक्ति में, आदि मध्य अवसान तुम्हीं हो।।

सर्व रूप में सर्वनाम में, सर्व काल में सर्व धाम में।
तुम ही गति में तुम विराम में, शक्तिमान भगवान तुम्हीं हो।।

तुममें दनुज देवगण तुम में, तुम में पर्वत हैं तृण तुममें।
तुममें कल्प और क्षण तुममें, सबके परमस्थान तुम्हीं हो।।

मानव में सतधर्म तुम्हीं से, कर्म विकर्म अकर्म तुम्हीं से।
मिले गुह्यतम मर्म तुम्हीं से, सबको देते ज्ञान तुम्हीं हो।।

तुम अमान के मानी के भी, ज्ञानी के अज्ञानी के भी।
तुम दरिद्र के दानी के भी, आश्रय एक समान तुम्हीं हो।।

तुममें जीवन मरण तुम्हीं में, सबका है निस्तरण तुम्हीं में।
'पथिक' पा रहा शरण तुम्हीं में, करते शान्ति प्रदान तुम्हीं हो।।

ईश महिमा 59

सब के लिये खुला जो यह द्वार ही ऐसा है।
कोई भी चला आये दरबार ही ऐसा है।।

सबसे निराश होकर मिलता यहीं ठिकाना।
पर सब नहीं समझेंगे संसार ही ऐसा है।।

दोनों यहाँ कठिन है, रुकना या चले जाना।
कुछ मार ही ऐसी है कुछ प्यार ही ऐसा है।।

भावानुसार अपने भगवान भी बन जाते।
जैसे के लिये तैसा व्यवहार ही ऐसा है।।

जिसके बिना जीवन में सत्-शान्ति नहीं मिलती।
दिखता यहाँ जीवन का आधार ही ऐसा है।।

छुट जाते जहाँ बन्धन, भव दुःख भी मिट जाते।
होता यहाँ 'पथिक' का उपचार ही ऐसा है।।

ईश महिमा 60

सच्चिदानन्द सबके प्रियतम अब पता लगा तुम दूर नहीं।
ऐसा कुछ हो ही नहीं सकता जिसमें तुम हो भरपूर नहीं।।

यह होश दिया तुमने ही तो जब अहंकार को पहचाना।
तुम वहीं प्रकट होते रहते, रहता है जहाँ गरूर नहीं।।

जो कुछ भी सामने आता है मैं देख देख यह गाता हूँ।
किस क्षण में शक्ति नहीं तुमसे किस कण में तुम्हारा नूर नहीं।।

ये आखें तुम को क्या देखें सब आखें तुम से रोशन है।
खोज में भटकते वे जिनको दर्शन का अभी शहूर नहीं।।

मुझको तो अपनी किस्मत के उठने गिरने की समझ नहीं।
जो ठीक वही तुम करते हो, मुख्तार हो तुम मजबूर नहीं।।

जब जब हम हैं तब तुम गुम हो, हम गले कि बस तुम ही तुम हो।
सब ओर तुम्हीं, तब 'पथिक' और कुछ चाहे यह दस्तूर नहीं।।

ईश महिमा 61

सज्जनों परमेश्वर का सुमिरन बारम्बार करलो।।
कभी कुछ बिगड़ा है तो उसका अभी सुधार कर लो।।

जिसे तुम अपना कहते उसके साथ सदा न रहोगे।
जहाँ सुख मान रहे हो वहीं अन्त में दुःख सहोगे।
अभी अवसर है, यदि सत्संगति से गुरु ज्ञान गहोगे।
मुक्ति आने के पहले जीवन का उद्धार कर लो।।

बचाओगे जो कुछ वह तुमसे छिन जायेगा ही।
जिसने जो कुछ दे रक्खा वह जीवन में पायेगा ही।
अरे चिन्ता छोड़ो जो भाग्य लिखा वह आयेगा ही।
कहीं सुख के पीछे यदि होगा पाप रुलायेगा ही।
सदा कुछ भी न रहेगा कितना ही विस्तार कर लो।।

अनेकों पछताते हैं जीवन के अच्छे दिन खो कर।
अनेकों भोग रहे हैं दुष्कर्मों का फल रो रोकर।
अनेकों पशुवत जीते हैं औरों का बोझा ढोकर।
कहीं विरले ही मानव, जो रहते स्वाधीन होकर।
तुम्हें जो कुछ भी करना है वह अभी विचार कर लो।।

भक्त होना है तो प्रभु को ही अपना मान लेना।
मोह ममता तजकर बस सेवा का व्रत ठान लेना।
त्याग करना है, सारे दोषों को पहिचान लेना।
असत् से असंग होकर सत्स्वरूप को जान लेना।
'पथिक' अपने में ही निज प्रियतम को स्वीकार कर लो।।

ईश महिमा 62

सत् रूप प्रभो अपना अब तो मुझे दिखाना।
अज्ञान तिमिर मेरा, हे दयामय मिटाना।।

हम कह रहे तुम्हीं से दुःख हरण नाम सुनकर।
परमेश न तुम बिन है, मेरा कहीं ठिकाना।।

तुम दूर नहीं मुझसे, सब देख ही रहे हो।
जैसा हूँ अब शरण हूँ जैसे बने निभाना।।

अपने बनाये बंधन मैं तोड़ नहीं पाता।
निज बुद्धि योग देकर भव पाश से छुड़ाना।।

इस दृश्य जगत् में अब फिर न भूल जाऊँ।
हे परमगुरु 'पथिक' को सत्यानुभव कराना।।

ईश महिमा 63

सभी कुछ प्रभु देते जाते आप हैं, अकथ है जो कुछ दिखाते आप हैं।
देखता हूँ किस तरह कितनी कठिन, मुश्किलों से भी बचाते आप हैं।
जहाँ पर भी हमें गिरते देखते, वहीं से ऊँचे उठाते आप हैं।
मोह ममता में फँसे इस जीव को, जिस तरह भी हो छुड़ाते आप हैं।
डूबते देखा जहाँ दुख सिन्धु में, किनारे आकर लगाते आप हैं।
जहाँ मेरे लिये जो भी उचित है, युक्तियाँ सारी दिखाते आप हैं।
जानता हूँ मैं 'पथिक' कितना पतित, उसे भी पावन बनाते आप हैं।

ईश महिमा 64

हर शय में हर एक शान में भगवान तुम्हीं हो।
हर जान में बेजान में भगवान तुम्हीं हो।।

ईसाई सिक्ख बुद्ध यहूदी वो पारसी।
हिन्दू में मुसलमान में भगवान तुम्हीं हो।।

गिरजा हो या मंदिर हो मस्जिद हो या समाधि।
हर दीन में ईमान में भगवान तुम्हीं हो।।

वेदों में पुरानो में गुरु ग्रन्थ तन्त्र में।
उस बाइबिल कुरआन में भगवान तुम्हीं हो।।

पंडित हो मौलवी हो या हो पोप पादरी।
सब मतों के भाव गान में भगवान तुम्हीं हो।।

हर ऋतु में हर दिशा में दिन रात सुबह शाम।
बस्ती में या वीरान में भगवान तुम्हीं हो।।

इस लोक में परलोक में या जन्म मृत्यु में।
धरती में आसमान में भगवान तुम्हीं हो।।

हर नाम में हर रूप में हर रंग ढंग में।
पथ में पथिक के ज्ञान में भगवान तुम्हीं हो।।

ईश महिमा 65

वो दिन भी आयेगा मेरे जानिब
जो तुमसे ज्यारत रसाई होगी।
तुम्हारी उल्फत में खुद को खोकर
लुत्फे वस्लदां गदाई होगी।।

यही तसब्बर रहे कि दिल से
लिया करूँ एक नाम तेरा।
मिलोगे मेरे भी दिल में दिलवर
कभी तो मेरी सुनाई होगी।।

अभी तो नापाक दिल हमारा
तड़प रहा बेतरह बिचारा।
पड़ैगी जब वो नजर रहम की
बहरहाल फिर सफाई होगी।।

खुलैंगे चश्मे जिगर हमारे
तो हरसूँ हरशै में अपने प्यारे।
रहेगी दुनियाँ न मेरे दिल में।
हर एक गम से रिहाई होगी।।

बुरा समझ तुम भूल न जाना
करम निगाहों से पेश आना
पथिक के तीमार इक तुम्हीं हो
तुम्हीं से इसकी दवाई होगी।।

ईश महिमा 66

परमेश तुम्हीं लीलामय क्या लीला दिखलाते हो।

जन में निरंजन में तुम्हीं, वन में उपवन में तुम ही।
मन में सबतन में तुम्हीं, हे नाथ लखे जाते हो।।परमेश तुमहीं0।।

अनल में अनिल में तुमहीं, सलिल में व थल में तुमहीं।।
चल में व अचल में तुमहीं, क्या विविध रंग बनाते हो।।परमेश तुमहीं0।।

रवि-शशि के शासक तुमहीं, व्योमावकाशक तुमहीं।
काल-जाल नाशक तुमहीं, नित नियम में चलाते हो।।परमेश तुमहीं0।।

निर्धन में धन में तुमहीं, निर्बल में बल में तुमहीं।
निश्छल में छल में तुमहीं, विज्ञान रूप आते हो।।परमेश तुमहीं0।।

सज्जन में खल में तुमहीं, शान्ती चंचल में तुमहीं।
मल में निर्मल में तुमही, बस एक रस समाते हो।।परमेश तुमहीं0।।

सुविनय अवगत में तुमहीं, व अलख सुविद्र्थ में तुमहीं।
पथिक में सुपथ में तुमहीं, सुखद शान्ति दरसाते हो।।परमेश तुमहीं0

ईश महिमा 67

भगवन अलख गति तुम्हारी।। अन्तरा।।

विविध विधि नामरूप सों त्रिगुण
सहित अद्भुत माया बिस्तारी।।भगवन0।।

विकसित ब्रह्मा शिव रमेश में।
प्रभो प्रकाशक शशि दिनेश में।
आपुहि शुचि सौन्दर्य वेश में।
प्रकृति प्रपंच प्रचारी।।भगवन0।।

माया प्रेरक जीव नचावत।
नाना विधि निज में भरमावत।
जब चाहत अनुरूप बनावत।
नटवत लीला धारी।। भगवन0।।

लखि न पड़त कौतुक प्रभु तेरे।
अति सुदूर नेरे से नेरे
सत चिद्रूप रूप में मेरे
केवल आनन्दकारी।।भगवन0।।

जीवन धन! निज जीवन दीजै
नामरूप से विरहित कीजै
पथिक विनय चित दै सुन लीजै
हे अच्युत अविकारी।।भगवन0।।

भगवन अलग गति तुम्हारी।

ईश महिमा 68

जगके इन अनन्त रूपों में व्यापक हे भगवान।
छिपे छिपे कैसे दिखते हो हे जीवनधन प्रान।।

दिखला कर नामाऔतियों को बना रहे अनजान।
किस कारण से देरी करते करने में कल्याण।।

तेरी अद्भुत माइक लीला का यह खेल महान।
करने देता है कब मुझको तेरा पावन ध्यान।।

किंचित अपनी झलक दिखाकर होते अर्न्तध्यान।
कुछ भी हो पर छिप न सकोगे करली कुछ पहचान।।

तुम्हें खोज ही लूँगा इकदिन जो तुम दयानिधान।
दे दोगे निज दया दृष्टि से अपना पावन ज्ञान।।

हे प्रभुवर हो तुम्हीं पथिक के सुखद शान्ति सुस्थान।
अब न भुलावो निरावरण से दो निज दरश महान।।

ईश महिमा 69

अब न छिपो मैंने जान पाया
प्रभो! तुम्हीं ये तुम्हारी लीला।

हर एक रंग में हर एक ढ़ंग में
प्रभो! तुम्हीं ये तुम्हारी लीला।।

अनन्त रूपों से तुम भले ही
करो भुलाने की चेष्टा को।

पता लगा प्रेम रूप प्रगटित
प्रभो! तुम्हीं ये तुम्हारी लीला।।

छिपावो कितना ही क्यों न मुखड़ा
ऐ प्यारे मायावी घूँघटों से।
परन्तु हो सब जगह उपस्थित
प्रभो! तुम्हीं ये तुम्हारी लीला।।

नवीन विकसित विविध छटा में
किसी तरह के भी वस्त्र पहनो।
तथापि सौन्दर्य के प्रकाशक
प्रभो! तुम्हीं ये तुम्हारी लीला।।

जो कुछ कि बाह्यान्तरेन्द्रियाँ ये
पथिक में करती हैं जानती हैं।
वो आप द्वारा ही जानता हूँ
प्रभो! तुम्हीं ये तुम्हारी लीला।।

ईश महिमा 70

भुवनमय एक तुम्हीं भगवान,
भक्त भावन भक्ति के ध्यान।
प्रेम के जीवन जीवन ज्योति,
ज्योति के उज्ज्वल चरम स्थान।
अकथ निर्गुण के गुण आधार,
सगुण के शक्ति परा विज्ञान।
प्रऔति के प्रान तुम्हीं भगवान,
भक्त भावन भक्ति के ध्यान।।

कर्म गति के अव्यक्त महान।
रहस्यों के अभिव्यक्त प्रमान।
धर्म के बन्धन बन्धन मुक्त,
मुक्त के अनुभव दृष्टि प्रधान।
वेद की तान तुम्हीं भगवान,
भक्त भावन भक्ती के ध्यान।।

जगत के मूल मूल के हृदय,
हृदय की महिमा के उद्‌गान।
गान के स्वर स्वर के सौन्दर्य,
सरसता मय सुप्रणय आह्वान।
सुरम्य महान तुम्हीं भगवान,
भक्त भावन भक्ती के ध्यान।।

सुमन के सौरभ सौरभ रूप,
रूप के अनुपम उपमावान।
लक्ष्य की दृष्टि प्रभा के हृदय,
हृदय के शुचितम भाव महान।
नेति के गान तुम्हीं भगवान,
भक्त भावन भक्ती के ध्यान।।

सुकोमलता नूतन की अंग,
मधुरता मधु की गति अवधान।
अमरता अमृत के गुणगीत,
आदि के मध्य मध्य अवसान।
पथिक के ज्ञान तुम्हीं भगवान,
भक्त भावन भक्ती के ध्यान।।

ईश महिमा 71

दृगों में सुरति उन्हीं की।
यहाँ अब तो चतुर्दिक ही दिख रही है गति उन्हीं की।।

हृदय गाता गान उनका, बुद्धि में है ज्ञान उनका।
उन्हीं का अभिमान हममें, सदा सुखद सुरति उन्हीं की।।

चल रहा है तन उन्हीं में, मनन करता मन उन्हीं में।
उन्हीं का है जीव जीवन, विधि विधान नियति उन्हीं की।।

वही तो सर्वस्व अपने, और तो सब हुए सपने।
उन्हीं से सुख शान्तिनिर्गत, भक्ति मुक्तिद मति उन्हीं की।।

प्राण उनमें प्राण में वै, रम रहे हैं ध्यान में वै।
हम कहां अब तो वहीं हैं, पथिक प्रकृति सुकृति उन्हीं की।।

ईश महिमा 72

प्रभो माया का तुम्हारी, अकथ यह विस्तार देखा।
दिखाया जिसको तुम्हीं ने तुम्हें सर्वाधार देखा।।

विमुख हो तुमसे विषमता, बिथामय व्यापार देखा।
जीव को रोते हुए ढ़ोते हुए दुःखभार देखा।।

सभी के सन्मुख स्वनिर्मित क्षुद्र इक संसार देखा।
कि जिसमें सुख शान्ति का, मिलता न कुछ आधार देखा।।

जबकि अपने आप पर पा विजय निज अधिकार देखा।
वहीं पर मुदमय स्वसम्पति शक्ति का भण्डार देखा।।

आपके प्रति प्रेम का परमेश जब आकार देखा।
तभी परमानन्दनिधि को स्वइच्छित साकार देखा।।

देह अभिमति छोड़कर जब ज्ञान से सतसार देखा।
पथिक दिव्यालोकमय तब मुक्ति मन्दिर द्वार देखा।।

ईश महिमा 73

गति मति जग व्योपार में, कर्तार की बस प्रभु ही जाने ।

कारण कार्य कहाँ से आया किस प्रकार कब विश्व बनाया।।
विधि प्रपंच विस्तार में, निस्तार की बस प्रभु ही जाने।

जहाँ कुशल मति थाह न पाती, बुद्धि विलक्षण चुप हो जाती।।
प्रऔति विऔति व्योहार में, सत्सार की बस प्रभु ही जाने।

जग के अति सुविशाल सदन में, भ्रमित जीव के करुण रुदन में।।
प्रभु बिन विनय पुकार में, उद्धार की बस प्रभु ही जाने।

रोते को किस तरह हंसाते, सोते को किस तरह जगाते ।।
दुखियों के उपचार में, शुचि प्यार की बस प्रभु ही जाने।

गिरा हुआ किस भाँति चढ़ा है, रुका हुआ किस तरह बढ़ा हैं।।
करुणा पुनरुद्धार में, उपकार की बस प्रभु ही जाने ।

मेरे प्रियतम चिदानन्द धन, सर्व प्रकाशक सबके जीवन ।।
प्रतिपल पथिक विचार में आधार की बस प्रभु ही जाने।

ईश महिमा 74

भगवान हमारे जीवन का कल्याण औपा से ही होता ।।
भव दुःख विनाशक आत्म ज्ञान विज्ञान औपा से ही होता।।

जिससे सब दोष दिखा करते जिससे कि असुर दानव डरते।
उस सद्विवेक का प्रेम सहित सम्मान औपा से ही होता ।।

अच्छे दिन बीते जाते हैं गुरु जन सब विधि समझाते हैं।
भोगस्थल से योगस्थल में प्रस्थान औपा से ही होता ।।

शीतलता जिससे आती है सारी अतृप्ति मिट जाती है।
वह नित्य प्राप्त है शान्ति सुधा पर पान औपा से ही होता ।।

यद्यपि है नित्य सुलभ साधन सब साधन पाते साधक जन।
जो जड़मय है वह चिन्मय हो, यह ध्यान औपा से ही होती।।

वह औपा निरन्तर रहती है कुछ भी न किसी से चहती है।।
हम पथिक उसे देखें ऐसा, उत्थान औपा से ही होता ।।

ईश महिमा 75

हे प्रभु तेरा दर्शन पाकर आँखों में शरूर आ जाता है।
चरणों में जब मैं पहुँचता हूँ। अपने पे गरूर आ जाता है।।

रहनुमां तुम्हीं हों दुनियां में भक्तों के दिलों में उजाला हो।
मिलते ही तुमसे ऐ मालिक, हर चीज पे नूर आ जाता है।।

बिगड़ी तकदीर संभलती है, तेरे सन्मुख आ जाने से।
खुद किस्मत है जो तेरे निकट, हो करके भी दूर, आ जाता है।।

जी भर के तुम्हें मैं देख सकूँ , यह पूरी तमन्ना नहीं होती ।
बेताब निगाहों के आगे, पर्दा सा जरूर आ जाता है।।

दुःख-दर्द के मारे आते हैं, राहत के लिए तेरे दर पर।
रहमत का जलवा उमड़ करके, दिल में भरपूर आ जाता है।।

मिलती है भीख मुहब्बत की, सबको तुमसे ही ऐ दाता।
जीवन है सफल उसका जिसको, जीने का सहूर आ जाता हैं।।

ईश महिमा 76

जगती के कण में व्यापक एक तुम्हारी छवि की छाया।
अणु अणु में माया महान की बिन्दु बिन्दु में सिन्धु समाया।
तुम महान कानन उपवन तरु कोमल किसलय कलित कुसुम हो ।।

कौन प्रातः उठकर प्राची में है बिखेरता स्वर्णिम लाली।
कौन सजाता रात गगन में नक्षत्रों की नित्य दिवाली।
सन्ध्या के कपोल में कर से तुम्हीं लगाते नव कुमकुम हो।।

जड़ चेतन स्थावर जडंगम खग मृग कीट पतंग भुजडंगम ।
सब में सत्ता एक सत्य की एक चेतना का शुचि सडंगम ।
गाते सदा अनाहत स्वर में साम गान बैठे गुम सुम हो ।।

भाव अभाव शुभाशुभ सुख दुःख ऐ सब केवल शब्द जाल हैं।
एक अछेद्य अभेद्य वृक्ष के रंग विरंगे विटप डाल है।।
और तुम्हीं सबकी मन वांछा के पूरक वह कल्पद्रुम हो।।

सुधा मात्र यदि तुम वसुधा पर गरल कहाँ से कैसे आया।
सत् से असत् अचेतन चित् से तम प्रकाश से भिन्न न पाया।
सृष्टि प्रलय है खेल तुम्हारे तुम्हीं प्रकट हो तुम ही गुम हो।।

ईश शरण 77

कहाँ कब मिलोगे ऐ स्वामी हमारे।
यहाँ हम तरसते दरश को तुम्हारे।।

भुलाओ न भगवन पतित जान करके।
शरण आ चुका हूँ सहारे तुम्हारे।।

हमारी तरह हैं आपके अनेकों।
यहाँ तो तुम्हीं एक नैनों के तारे।।

यही आश विश्वास मन में समाया।
तुम्हारी औपा से मिटे क्लेश सारे।।

बुरा या भला यह 'पथिक' है तुम्हारा।
दरश को हृदय धाम में प्राण प्यारे।।

ईश शरण 78

जीवनेश प्रभु जीवन के दिन यूँ ही बीते जाते हैं।
हम तुममें तुम हम में ही हो, फिर भी देख न पाते हैं।।

शान्ति सुलभ पर त्याग नहीं है, शक्ति सुलभ पर तप से हीन।
कैसे सद्गति प्राप्त करें हम, सभी भांति से दुर्बल दीन।
तृष्णा तल पर भटक रहा मन, होकर चंचल महा मलीन।
मेरा उठना तो अब केवल, एक तुम्हारे ही आधीन।
औपा दृष्टि से वंचित रहने तक ही पाप सताते हैं।।

चढ़ा हुआ है जब तक उर में, राग द्वेष का कलुषित रंग।
जब तक दुर्गुण दोषों से, यह शुद्ध न होते दूषित अंग।
तब तक तुमको पा न सकेंगे, कितनी ही हो प्रबल उमंग।
अब कुछ ऐसी शक्ति हमें दो, जिसके बल हो सके असंग।
वही देखते जाते हम जो कुछ भी आप दिखाते हैं।।

जो चाहा वह मिला अभी तक, केवल शेष यही अभिलाष।
सब कुछ तज कर भजूँ तुम्हीं को, कर दो यह भी पूरी आश।
मिट जायें सब दुख हमारे, कट जायें सारे भव पाश।
हर लो मेरी दुर्गति सारी, कर दो पावन ज्ञान प्रकाश।
यही प्रतीक्षा है अब कब तक मेरा मोह मिटाते हैं।।

यह सच है हो चुका अभी तक अगणित पतितों का उद्धार।
मिल न सकेगा ऐसा कोई जिस पर हो न तुम्हारा प्यार।
सर्व समर्थ परम संरक्षक प्राणि मात्र के परमाधार।
हम भी एक पतित प्राणी हैं अब हमको भी कर दो पार।
भूले भटके हुए 'पथिक' हम शरण तुम्हारी आते हैं।।

ईश शरण 79

जो खोजते हैं पायेंगे वह ध्यान किसी दिन।
सद्भाव से मिल जायेंगे भगवान किसी दिन।।

गज गीध अजामिल को गणिकादि को देखो।
इनका भी किया प्रभु ने कल्याण किसी दिन।।

मुनि यती व्रती तपसी सब पीछे रह गये।
शबरी के घर में हो गये मेहमान किसी दिन।।

सुनते हैं वे हृदय की सच्ची पुकार।
दिखलायेंगे फल अपना विनयगान किसी दिन।।

सुमिरन करो हरिनाम का हर काम धाम में।
होगा सभी दुखों का अवसान किसी दिन।।

मिल जाते 'पथिक' प्राणनाथ प्रेम भाव से।
अपने ही को कर देते हैं वे दान किसी दिन।।

ईश शरण 80

तुम्हीं को हे आनन्दघन चाहता हूँ।
जगत् का मैं कोई न धन चाहता हूँ।

न रह जाये मुझमें कहीं मोह माया।
प्रभो तुममें तल्लीन मन चाहता हूँ।।

वही अब करूँ जो कि तुम चाहते हो।
मैं चाहों का अपनी दमन चाहता हूँ।।

जहाँ चित हो चंचल जगत् के सुखों में।
वहीं पर मैं इसका शमन चाहता हूँ।।

मिटे जिस तरह से यह भव दुःख बन्धन
मैं ऐसा ही साधन भजन चाहता हूँ।।

नहीं दिख रहा और कोई सहारा।
'पथिक' मैं तुम्हारी शरण चाहता हूँ।।

ईश शरण 81

देव ! दीन अनाथ के तुम एक प्राणाधार हो।।
शक्तिमान महान योगीराज सुषमासार हो।।

आप परित्राता सुजन के, दीन बलहीन के हो।
पतित जन को करते पावन आप ही करतार हो।।

हे प्रभो ! तुम परम हितकारी, भिखारी हम खड़े।
ज्ञान सद्विज्ञान भिक्षा, आप पालनहार हो।।

आप ही के औपा बल का अब सहारा है हमें।
दिव्य जीवन दिव्य बलयुत शान्ति के अवतार हो।।

आश अभिलाशा तुम्हीं से शरण दो सद्बुद्धि दो।
'पथिक' निर्बल के परम प्रभुवर तुम्हीं आधार हो।।

ईश शरण 82

नाथ हम भी शरण में हैं आये हुये।
आप ही मेरे हैं मन को मनाये हुये।।

मुझ पतित को प्रभो अब तो पावन करो।
अपने पापों से हम हैं लजाये हुये।।

दब रहे हैं दुःखों की कठिन भीड़ में।
मुक्त होने की आशा लगाये हुये।।

अब सुनो हे दयामय हमारी विनय।
दीन-दुःखिया बहुत हम सताये हुये।।

जब कि मायेश हम पर दयादृष्टि हो।
तब बचेंगे तुम्हारे बचाये हुये।।

और किससे कहूँ मैं व्यथा की कथा।
देख लो आप जो हम छिपाये हुये।।

अब उबारो हमें मोह के भार से।
बहुत दिन हो चुके हैं भुलाये हुये।।

रम रहे हो तुम्हीं मेरे मन प्रान में।
फिर भी रहते स्वयं को चुराये हुये।।

'पथिक' के बीच से दो मिटा आवरण।
देखें सब में तुम्हीं को समाये हुये।।

ईश शरण 83

प्रभु अपने शरणागत को स्वीकार किया करते हैं।
अधमोद्धारक हैं सबका उद्धार किया करते हैं।।

कितना कोई पापी हो, द्वेषी परसन्तापी हो।
वे सुहृद परमगुरु सबका उपचार किया करते हैं।।

पूरी होती भक्तों की, बनती है अनुरक्तों की।
वे विमुख जनों को भी तो शुचि प्यार किया करते हैं।।

जिसको सब हैं ठुकराते, प्रभु उसको भी अपनाते।
करुणानिधि ही तो सबका निस्तार किया करते हैं।।

जो अटक रहा हो आकर, जो भटक रहा हो पाकर।
ऐसे सम्भ्रान्त पथिक को प्रभु पार किया करते हैं।।

ईश शरण 84

प्रभु शरण तुम्हारी आता हूँ, जब शान्ति न जग में पाता हूँ।
मन में अनेक अभिमान लिये, वासनायुक्त कुछ ज्ञान लिये।
नश्वर सुख दुख के गान लिये, निज स्वार्थपूर्ति का ध्यान लिये।
मैं बद्ध जीव कहलाता हूँ, प्रभु शरण तुम्हारी आता हूँ।।

है प्रभुता विभव तमाम कहीं, सन्मान पूर्वक नाम कहीं।
दिखता सुन्दर धन धाम कहीं, मिलता सब कुछ आराम कहीं।
इससे मैं अब घबराता हूँ, प्रभु शरण तुम्हारी आता हूँ।।

मेरे सन्मुख कुछ भी आये, आकर चाहे कुछ भी जाये।
मन कितना ही सुख दिखलाये, तुम बिन न मुझे कुछ भी भाये।
तुम में ही चित्त लगाता हूँ, प्रभु शरण तुम्हारी आता हूँ।।

कुछ खोज रहा हूँ इस तन पर, चिढ़ उठता हूँ अशांत मन पर।
चलता हूँ गिर गिर जाता हूँ, प्रभु शरण तुम्हारी आता हूँ।।

मुझको दुख देते पाप कहीं, बाधक बनते अभिशाप कहीं।
करता हूँ व्यर्थ प्रलाप कहीं, होता अति पश्चाताप कहीं।
तुमको ही नाथ बुलाता हूँ, प्रभु शरण तुम्हारी आता हूँ।।

तुमको तज और कहाँ जाऊँ, किससे दुख सुख रोऊँ गाऊँ।
निज मन की किससे बतलाऊँ, मैं 'पथिक' तुम्हें कैसे पाऊँ।
इस धुन में समय बिताता हूँ, प्रभु शरण तुम्हारी आता हूँ।।

ईश शरण 85

प्रभु हम भी शरणागत है, स्वीकार करो तो जाने।
अब हमें पतित से पावन, सरकार करो तो जानें।।

प्रेमी जन तुमको पाते, तुम भक्ति भाव वश आते।
हम कुटिल हृदय के कलुषित, निस्तार करो तो जानें।।

ज्ञानी तुममें तन्मय है, ध्यानी भी तुममे लय हैं।
हम अज्ञानी चंचल चित्, उपचार करो तो जानें।।

क्या मुख ले विनय सुनायें, हम कैसे तुमको भायें।
अगणित अपराध किये हैं, उद्धार करो तो जानें।।

जीवन नैया जर्जर है, क्षण-क्षण विनाश का डर है।
ऐसे भी एक 'पथिक' को अब पार करो तो जानें।।

ईश शरण 86

भगवन मैंने यह देख लिया तुम बिन है हमारा कोई नहीं।
तुम वहाँ सहायक होते जहाँ संगी सुत दारा कोई नहीं।।

मैं दीन हूँ दिखती शक्ति नहीं, सद्भाव नहीं कुछ भक्ति नहीं।
इस भवसागर में भटक रहा, दिखता है किनारा कोई नहीं।।

बहती वासना बयार महा, मुझको अटकाती कहाँ कहाँ।
चक्कर खाती जीवन तरणी है खेवनहारा कोई नहीं।।

मुझ पर हे नाथ दया करिये, मेरी सारी बाधा हरिये।
प्रभु एक तुम्हारी शरण बिना, अब और है चारा कोई नहीं।।

तुम ही हो सुधि लेने वाले, बल बुद्धि तुम्हीं देने वाले।
हो तुम्हीं 'पथिक' के परमाश्रम तुम बिन है सहारा कोई नहीं।।

ईश शरण 87

मेरे प्रभु हमें कभी न कभी निज रूप दिखाओगे।
हम विमुख भले ही हों एक दिन तुम सम्मुख आओगे।।

प्रभु नाम तुम्हारा इतना सुमधुर शुभ मंगलमय है।
जिसका आश्रय लेने से होता दोषों का क्षय है।
हे दुःखहारी मेरे भी सारे दुःख मिटाओगे।।

तुम नित्य एक रस व्याप रहे हो जग के कण-कण में।
तुमहीं से तो है नित नवीन परिवर्तन क्षण-क्षण में।
हम देख सकें तुमको ऐसी साधना बताओगे।।

हम भूले जिसको देख, जो कि अति मोहक सुखकर है।
वह प्रकृति तुम्हारी सत्ता से जब इतनी सुन्दर है।
उसके पीछे तुम कैसे हो यह भेद बताओगे।।

हम छूट सकेंगे जैसे भी सुख-दुःख के बंधन से।
यह तुम्हीं जानते हो, हम तो हारे हैं निज मन से।
शरणागत दीन 'पथिक' को भी तुम मुक्त बनाओगे।।

ईश शरण 88

राखहुँ अब प्रभु लाज हमारी।
हे परमेश्वर हृदय बिहारी।।

मैं दरिद्र हूँ अति उदार तुम, हर लो हे हरि पाप भार तुम।
इस भव दुःख से पार करो तुम, अपकारी मैं तुम उपकारी।।

मैं अशुद्ध हूँ परम शुद्ध तुम, मैं विमूढ़ हूँ महाबुद्ध तुम।
मैं सकाम इसके विरूद्ध तुम, मुझे सुगति दो दुर्गतिहारी।।

गुणाबद्ध मैं गुणातीत तुम, महामलिन मैं अति पुनीत तुम।
फिर भी हो आद्यन्तमीत तुम, मैं विकार युत तुम अविकारी।।

मैं निर्बल हूँ शक्तिमान तुम, महाक्षुद्र मैं हूँ महान तुम।
मैं दुःखपीड़ित दयावान तुम, 'पथिक' पतित हूँ शरण तुम्हारी।।

ईश शरण 89

वह प्रियतम जो अतिशय सुन्दर।।

शक्ति सुशोभित छवि श्रीमुख की, चितवन में धाराएँ सुख की।
परम तृप्ति कर सुधर सलोने, दोनों नयन नेह के निर्झर।।

अन्तर में सौन्दर्य छलकता, रोम-रोम ऐश्वर्य झलकता।
क्षमा, दया, करुणा, सुशीलता, सभी दिव्य गुण मानो अनुचर।।

उसका सब भय खो जाता है, जीवन शीतल हो जाता है।
जिस पर भी वह पड़ जाते हैं, प्रभु के कोमल उभय कमल कर।।

सभी रूप में सभी नाम में, सभी देश में सभी धाम में।
भक्तों की पुकार को सुनकर, देते रहते हैं अभीष्ट वर।।

दीनबन्धु वे कहलाते हैं, उन्हें अकिंचन ही गाते हैं।
मैं अब 'पथिक' शरण आया हूँ, मेरा भी मिट जाये दुःख डर।।

ईश शरण 90

हम आपके गुणगान न गायें तो क्या करें।
दुःखिया हैं आपको न बुलायें तो क्या करें।।

जब आपके सिवा यहाँ कोई न हमारा।
अब आपको अपनी न सुनायें तो क्या करें।।

हैरान हो रहे हैं अपने मन के मोह से।
ये वासनायें हमको भुलायें तो क्या करें।।

सेवा के लिये शक्ति, शान्ति स्वयं के लिये।
हे नाथ चाहते हैं न पायें तो क्या करें।।

है आपकी औपा समर्थ पतित पावनी।
हम दीन 'पथिक' शरण न आयें तो क्या करें।।

ईश शरण 91

हम आये शरण तुम्हारी, दयानिधान हे भगवान।
अब सुध लो नाथ हमारी, जीवन प्राण हे भगवान।।

यही विनय है तुम्हारा हृदय में ध्यान रहे।
तुम्हीं सर्वस्व हो अपने यही अभिमान रहे।
दीन दुनिया का मुझे और न कुछ भान रहे।
जहाँ कहीं भी रहूँ नाथ का गुण गान रहे।
तुम हेतुरहित हितकारी, दयानिधान हे भगवान।।

तुम्हीं आधार हो केवल तुम्हीं सहारे हो।
सभी जीवों के एक तुम्हीं प्राण प्यारे हो।
सभी के मध्य हो सबसे परे किनारे हो।
अनेक हमसे तुम्हें एक तुम हमारे हो।
दुःखियों के तुम दुखहारी, दयानिधान हे भगवान। ।

वही जीवन है जो कि सत्य सुपथ पा जाये।
वही पावन है जो सद्गुरु की शरण आ जाये।
तभी आनन्द है भक्ति का नशा छा जाये।
कि रोम-रोम में प्रभु प्रेम धुनि समा जाये।
मम अन्तर हृदय बिहारी, दयानिधान हे भगवान।।

कुछ भी पाऊँ या मैं खोऊँ तो यही कह करके।
कभी हँसू या रोऊँ तो यही कह करके।
सदा ही जागूँ या सोऊँ तो यही कह करके।
'पथिक' तुम्हारा ही होऊँ तो यही कह करके।
प्रभु सरबस के अधिकारी, दया निधान हे भगवान।

ईश शरण 92

आवो! आवो! आवो! स्वामी
अब तो दरश दिखावो स्वामी।
अब न मुझे भरमावो स्वामी।
आवो आवो आवो स्वामी।।

बल बुद्धिहीन नाथ मैं तुमको किस प्रकार अब पाऊँ।
सर्वव्यापी तुम कहलाते कहाँ खोजने जाऊँ।।
अनिल अनल में नभ जल थल में हृदयस्थल में।।
आवो आवो आवो स्वामी! अब तो दरश0।।

तुम तो हे प्रभु अन्तर्यामी लखते अवगुण मेरे।
हैं हम शोभा रहित यद्यपि पर तौ भी हम हैं तेरे।
शरण में आया करिये दया-छूटै माया।।
आवो आवो आवो स्वामी-अब न मुझे भरमावो स्वामी-आवो0।।

जन्म मरण के कठिन चक्र से लीजै हमें छुड़ाई।
तुमहीं नाथ सहायक मेरे आय परो शरणाई।।
योग मिला दो-ध्यान, दिखा दो-ज्ञान सिखा दो।।
आवो आवो आवो स्वामी अब तो दरश दिखावो स्वामी।

अब न मुझे भरमावो स्वामी।
आवो आवो आवो स्वामी।

ईश शरण 93

दया करो मैं हूँ अति अज्ञान।।

कैसे प्रभु समीप मैं आऊँ नहिं जप तप बल ज्ञान।
मलिन विकारों से मम मन में, चंचलता है इद्रियगन में,
प्रभो बता दो किस विधि से मैं करूँ आपका ध्यान।।

माया के प्रापंचिक छल में, कठिन कर्मगति के हचलच में,

गिरने से तब बच सकते हैं-हो प्रभु दया महान्।।

काम क्रोध मदलोभ दिखावैं, ये अति हिंसक जीव सतावैं,
दुःखप्रद वार कठिन अति इनकी हे जीवन धन प्रान।।

मोह-जाल से मुझे हटा लो, अब न तजो प्रभु शरण मिला लो।
हम असमर्थ समर्थ आप हैं पथिक नाथ भगवान।।

ईश शरण 94

मोरि बिगड़ी बनाना इधर-स्वामी-मोरि बिगड़ी बनाना।।
आय परों प्रभु शरण चरण में-यद्यपि हौं अति खल-कमी।।
मोरि बिग0।।

कल्मष कठिन मिटै किहि विधि सो, तुम जानहुँ अन्तर्यामी।।
मोरि बिग0।।

जस रखिहौ प्रभु रहब वही बिधि-हे प्रियतम सद्गुण धामी।।
मोरि बिग0।।

पथिक निर्धन के तुम ही धन हो, हौं अनुचर तव अनुगामी।
मोरि बिगड़ी ब0।।4।।

ईश शरण 95

हे दयानिधान मेरी भी सुध लेना

करुणानिधि सद्‌गुणधामी तुमही उर अन्तर्यामी,
कहां मेरे भगवान् मेरी भी सुध लेना।।हे दयानिधान0।।

बलहीन दीनबुधि नाहीं उठते विकार मन माहीं,
भरा अतिशय अज्ञान मेरी भी सुध लेना।।हे दयानिधान0।।

शुभ कर्म नहीं कर पाते जीवन दिन बीते जाते,
रहूँ निशि दिन हैरान मेरी भी सुध लेना।।हे दयानिधान0।।

मैं शरण आपकी आया अब करो दयानिधि दाया,
पथिक पर दीजै ध्यान, मेरी भी सुध लेना।।हे दयानिधान0।।

ईश शरण 96

लाजरखि अपनी शरण में मम जीवन को दिव्य ज्योति दरशाना।
प्राणेश प्रणपथ निभाना।।

काम क्रोध मद लोभ संग हरत ज्ञान अति बिघन करत मग तुम समरथ परिताप हरहुँ अब।
पथिक प्रकाश तुम्हारे सहारे ऐ प्यारे तुम्हीं तक आना

प्राणेश प्रणपथ निभाना।।

ईश शरण 97

सुधि लीजै हमारी यहाँ भगवान सुधि लीजै।

बहुत दिवस अब भरमत बीते-दयानाथ सत
बुधि अरुज्ञान, बल दीजै।।
सुधि लीजै हमारी यहाँ0।।

मलिन बुद्धि कछु यतन न सूझै तामस गुण युत अति
अभिमान, कस कीजै।।
सुधि लीजै हमारी यहाँ0।।

मम अवगुण नहिं लखौं नाथ तुम शरण गहे
की लाज धरि ध्यान रखि लीजै।।
सुधि लीजै हमारी यहाँ0।।

सब ही बिधि इस दीन पथिक के तुम ही
हो जगजीवन ध्यान गति दीजै।।
सुध लीजै हमारी यहाँ भगवान सुध लीजै।।

ईश शरण 98

सुधि लीजै हमारी हे कर्तार।।

प्राणाधार! तुम रखवार हम शरण तुम्हारी,
करुणाकर!सुधि लीजै हमारी हे कर्तार।।

यह वपु नैया पाप भार से।
टकराती है मोहधार से।

काम क्रोध मद की बयार से।
अधिक दूर हो रहे पार से।।

स्वामी हमारे! हम हैं तुम्हारे।
पथिक पुकारे तुम्हें। प्राणेश प्यारे।।
लो पतवार। अब इस बार।।
सर्वाधार हे! हृदय बिहारी करदो पार।।

सुधि लीजै हमारी0।।

ईश शरण 99

प्रभु तुमको केहि बिधि पावेंगे,

हममें तो कुछ बल बुद्धि नहीं,
तब किस प्रकार ढ़िग आवेंगे।। प्रभु0।।

यह हृदय अपावन अधम महा,
कल्मष कब नाथ मिटावेंगे।। प्रभु0।।

कुछ भी हैं पर तेरे ही हैं,
तेरे ही अंश कहावेंगे।। प्रभु0।।

पथिक को न तब तक शान्ति यहाँ,
जब तक न नाथ अपनावेंगे।। प्रभु0।।

ईश शरण 100

हे पाप भार से भरी हुई डूबन से नाथ बचा देना।। प्रभु0।।
मद मोह काम क्रोधादिक की ये तुंग तरंग हटा देना।। प्रभु0।।
टकराती विषय समीरण से तृष्णा की भंवर मिटा देना।। प्रभु0।।
यह नाविक मन पतवार यहाँ इसको अनुकूल बना देना।। प्रभु0।।
हे जीवन धन जीवन तरणी को सुघाट लगा देना।। प्रभु0।।

ईश शरण 101

कितने दिवस बीते किन्तु वो न मिली शान्ति,
कैसे क्या करूँ मैं प्रभु किस भांति पाऊँ मैं।

आवरणरूप जबकि माया तुम्हारी नाथ,
तुमको छिपाय रही कसत हटाऊँ मैं।

अब तो हे नाथ क्यों न आप ही सुधारो इसे,
आने दो शरण निज ये ही बिनै गाऊँ मैं।

पथिक तुम्हारा अब भूल न जाऊँ मैं कहीं,
सतचिदानन्द निज रूप में समाऊँ मैं।।

ईश शरण 102

अन्तर्यामी सदगुणधामी
हे स्वामी तुमको कब पावैं।। अन्तरायामी0।।

अनुचितगामी खल कामी, तुमसे न छिपावैं।
कलुषित काया, छूटै माया,
हो दाया प्रभु तब ढ़िग आवैं।।अन्तर्यामी0।।

शरण तुम्हारे हे प्यारे, किस तरह मनावैं।

सुपथ सुझावो, ज्ञान सिखावो,
अपनावो, तुम्ही को ध्यावैं।।अन्तर्यामी0।।

दीन दुखारी, हम भारी, यह किसे बतावैं।
बल बुधि देना, प्रभु सुधि लेना,
बिसरे ना जो विनय सुनावैं।।अन्तर्यामी0।।

तुम हितकारी, दुखहारी, सत वेद बतावैं।
पथिक तुम्हारा करो सहारा,
यहि बारा नहिं भूलन पावैं।।अन्तर्यामी0।।

ईश शरण 103

कवन विधि जाऊँ प्रियतम तीर।

भरमत फिरत कठिन उत्पथ में,
कोउ दिखात न हितकर जग में।
भय दृगभ्रान्ति रहत पग-पग में,
कसत धरूँ अब धीर।।

हे प्रभु जीवन ज्योति हमारे,
हृदयेश्वर दीनन हितकारे।
प्रेरक पार लगावन हारे,
प्रऔति विऔति प्राचीर।।

शरणागत इसको अपनाकर,
दुबिधान्तर अज्ञान मिटाकर।
परम प्रेम का सुपथ बताकर,
हरिये हिय की पीर।।

तबहीं हृदय विथा मिट पाये,
यदि प्रभु प्रेम प्रकाश दिखाये।
नाम लेत ही जब आ जाये,
पथिक नयन सों नीर।।

ईश शरण 104

प्रभू भूले हुए को राह लगाते जावो।
मोह माया से इसे नाथ छुड़ाते जावो।।

खोजते-खोजते मैं खो गया हूँ जाने कहां।
दया निधे इसे अब होश में लाते जावो।।

अपने छिपने के लिये पर्दा बनाया संसार।
कैसे पाऊँ तुम्हें ये युक्ति बताते जावो।।

तुम्हें जो देख सकूँ भक्ति नहीं ज्ञान नहीं।
अब तुम्हीं हे प्रभू बिगड़ी को बनाते जावो।।

ध्यान वो दो कि न भूलूँ तुम्हें कभी निशि दिन।
मगन रहूँ वो लगन प्रेम सिखाते जावो।।

यहाँ वहाँ कहीं कुछ है तो बस तुम्हारा खेल।
छिपो न अब सदा तुम दृष्टि में आते जावो।।

चाहे कैसा ही हूँ पर अब तो आपही का हूँ।
पथिक शरण में है अब इसकी निभाते जावो।।

ईश शरण 105

प्रेममय प्रभो बलिहारी हे नटनागर प्यारे श्याम।
भक्तों के हृदय बिहारी हे नटनागर प्यारे श्याम।।

मन ही मन में ललचाऊँ पर किससे निज भाव बताऊँ।
मैं भी हूँ भक्ति भिखारी हे नटनागर प्यारे श्याम।।

हम इसी आस पर आते प्रभु अधमोद्धारक कहलाते।
तबतो हम भी अधिकारी हे नटनागर प्यारे श्याम।।

जिसको तुमने अपनाया उसने ही प्रेमामृत पाया।
हम पर हो दया तुम्हारी हे नटनागर प्यारे श्याम।।

पथिक के तुम्हीं जीवन हो अर्पण है स्वीकृत तन मन हो।
आपका भरोसा भारी हे नटनागर प्यारे श्याम।।

ईश शरण 106

आने दो। हमें अपने ढ़िग आने दो।।

करो दुखःहरण तुम्हारी शरण, मोहकारी माया आवरण हटाने दो।
त्याग शुचिता मन भाने दो।
आने दो। हमें अपने ढ़िग आने दो।।

प्रेम के अंग शक्ति के संग भक्ति का अपनी अनुपम रंग चढ़ाने दो।
इसी पथ जीवन जाने दो।।

बता सत ज्ञान लखा दो ध्यान प्रभो निज में मन का अवधान जमाने दो। सत्य शुचितम सुख पाने दो।
आने दो। हमें अपने ढ़िग आने दो।।

तुम्हारी आश हरो भवपाश तिमिरहारी तुम दिव्य प्रकाश दिखाने दो। पथिक में शान्ति समाने दो।
आने दो। हमें अपने ढ़िग आने दो।।

ईश शरण 107

हे नाथ परमेश पावन करिये क्यों,
न स्वामी शरणधीन तेरे आये हैं।

हे भक्तभयहारी दीन के हितकारी,
कबहूँ न त्राण में देरी लाये हैं।।

हे देव भुवनेश करुणेश कर्तार,
कारण तुमहीं जग के हे प्रभु सर्वाधार,

मेरा करिये मोह माया से उद्धार,
कितने जनम धरि धोखे खाये हैं।।

दुस्तर को तर सकते किस विधि हम दीन,
क्यों नाचते यूँ न होते जो बलहीन,

तेरी दया के ही हे नाथ आधीन,
मायापति तुमको ही हम धर पाये हैं।।

कैसी मनोहारिणी मोहै संसार,
ऐसा बिछा जाल मिलता ना है पार,

देखा तो रमणीयता का ही विस्तार,
त्यागी विरागी मुनी भरमाये हैं।।

हे प्रभुवर अपना ही दे दीजिये ध्यान,
हरि लीजिये मेरा अभिमान अज्ञान,

मिल जाये अब प्रेम का ही प्रभो दान,
हम तो तेरे ही पथिक कहलाये हैं।।

ईश शरण 108

नाथ हम तो शरण तेरी आये हुए।
उन्हीं चरणों में मन को मनाये हुए।।

मुझ पतित को प्रभो क्यों न पावन करो।
जब कि हम आप ही के कहाये हुए।।

दब रहे हम दुःखों की कठिन भीड़ में।
आज क्यों देव देरी लगाये हुए।।

अब सुनो हे दयामय हमारी विनय।
दीन दुखिया बहुत हम सताये हुए।।

आपकी ही मधुर माया मनमोहनी।
नाचते हम उसी के नचाये हुए।।

जब कि मायेश! हम पर दया दृष्टि हो।
तब बचेंगे तुम्हारे बचाये हुए।।

और किससे कहूं मैं बिथा की कथा।
देख लो आप जो हम छिपाये हुए।।

अब उबारो इसे मोह के भार से।
बहुत दिन हो चुके हैं भुलाये हुए।।

इस हृदय में निकट से निकट हो तुम्हीं।
फिर भी क्यों नाथ रहते चुराये हुए।।

पथिक के बीच से है मिटा आवरण।
हम तुम्हीं में तुम हममे समाये हुए।।

ईश शरण 109

प्रभु अपने शरणागत को स्वीकार किया करते हैं।
अधमोद्धारक हैं सबका उद्धार किया करते हैं।।

कितना कोई पापी हो, द्वेषी परसन्तापी हो।
वे सुहृद परम गुरु सबका उपचार किया करते हैं।।

पूरी होती भक्तों की, बनती है अनुरक्तों की।
वे विमुख जनों को भी तो शुचि प्यार किया करते हैं।।

जिसको सब हैं ठुकराते, प्रभु उसको भी अपनाते ।
करुणानिधि ही तो सबका निस्तार किया करते हैं।।

जो अटक रहा हो आकर जो भटक रहा हो पाकर।
ऐसे सम्भ्रान्त पथिक को प्रभु पार किया करते हैं।।

ईश शरण 110

तुम्हीं को हे आनन्दघन चाहती हूँ, जो तुमसे मिला दे वह धन चाहती हूँ।
न रह जाय तृश्णा न ममता अहंता, अभी तुममें तल्लीन मन चाहती हूँ।
जहाँ चित् हो चंचल जगत के सुखों में, वहीं पर मैं इसका दमन चाहती हूँ।
जहाँ भी रहूँ बस असतसंग तजकर, मैं सत संग का ही व्यसन चाहती हूँ।
सदा प्रेम में ही परम तृप्त रहकर, मैं निष्काम सेवा भजन चाहती हूँ।
तुम्हीं सर्वगत पूर्ण जगदात्मा हो, निरन्तर तुम्हारी शरण चाहती हूँ।
वही अब करूँ जो कि तुम चाहते हो, मैं चाहों का अपनी :ामन चाहती हूँ।

ईश शरण 111

मैं क्या सोचूं जब मेरा सब कुछ भार तुम्हीं में परमात्मन्।
जाने अनजान जीवन का निस्तार तुम्हीं में परमात्मन्।।

धड़कन नाड़ी प्राणों की गति पाचन तन का विधिवत पोषण।
चलता है जन्म मरण तक सब व्यापार तुम्हीं में परमात्मन्।।

यह अहंकार अपने ही दोषों से नाना दुख पाता है।
इस महारोग का होता है उपचार तुम्हीं में परमात्मन् ।।

सुख के पीछे भागते हुए जब हम अतिशय थक जाते हैं।
विश्राम सुलभ होता है मन के पार तुम्हीं में परमात्मन्।

ज्यों सागर में तरंग रहती ऐसे हम रहते हैं तुममें ।
तुम ही तो अपने हो, अपना अधिकार तुम्हीं में परमात्मन्।।

जिसका कोई भी रूप नहीं, वह सर्व रूपमय तुम ही हो।
यह सभी बिगड़ते बनते हैं आकार तुम्हीं में परमात्मन्।।

उत्तर दक्षिण पूरब पश्चिम से पथ कितने ही दिखते हैं।
हम पथिक कहीं हों, मिलते हैं सब द्वार तुम्हीं में परमात्मन्।।

गुरु महिमा 112

क्या अनोखी शान है गुरुदेव के दरबार में।
खुले हाथों ही दया का दान है इस द्वार में।।

तर रहे कितने पतित शठ, ज्ञान-शून्य सुधर रहे।
भर रहे शुचि शान्ति से गुरु ज्ञान के आधार में।।

जिसने देखा है वही बस जानता इस बात को।
कह नहीं सकते कि क्या जादू है इनके प्यार में।।

कीर्ति मति गति बुद्धि वैभव, जिसको जो कुछ है मिला।
गुरु औपा से ही सुलभ सब कुछ हुआ संसार में।।

प्रेममय भगवान प्रियतम हृदय के अतिशय सरल।
रीझ जाते हैं 'पथिक' के तनिक से उद्‌गार में।।

गुरु कृपा 113

गुरु औपा से ही यह सद्‌विचार आया।
अब हमें और कुछ भी नहीं चाहिये।

मैं न कर पाया जो वह सुधार आया।
अब हमें और कुछ भी नहीं चाहिये।।

कामनाओं के पीछे बहुत दुख मिला।
कामना पूर्ति का कुछ क्षणिक सुख मिला।

कामना छोड़ सुख दुख के पार आया।
अब हमें और कुछ भी नहीं चाहिये।।

यहाँ कितना ही ऐश्वर्य धन क्यों न हो।
सुयश सम्मान सुन्दर तन क्यों न हो।

समझ में यह सभी कुछ निस्सार आया।
अब हमें और कुछ भी नहीं चाहिये।।

खोज में जिसकी अब तक भटकता रहा।
वह वहीं था जहाँ मैं अटकता रहा।

बाद मुद्दत के आखिरी द्वार आया।
अब हमें और कुछ भी नहीं चाहिये।।

जहाँ आकर कोई रंक रहता नहीं।
तृप्त हो जाता फिर कुछ भी चहता नहीं।

मेरे सन्मुख वही दरबार आया।
अब हमें और कुछ भी नहीं चाहिये।।

अपने में अपने प्रभु का पता मिल गया।
प्राप्त की प्राप्ति से अब हृदय खिल गया।

तब पथिक में यही उद्गार आया।
अब हमें और कुछ भी नहीं चाहिये।।

गुरु कृपा 114

गुरुदेव अब तो दया करो।।

कितने दिन से भटक रहे हैं, दुख के कांटे खटक रहे हैं।
कहाँ कहाँ हम अटक रहे हैं, करुणाकर मम हाथ धरो।।गुरु।।

मैं आचार विचार हीन हूँ, निर्बल हूँ अतिशय मलीन हूँ।
यही विनय सब भाँति दीन हूँ, मोहि नर परखो खोट खरौ।।गुरु।।

शील धर्म की बात न जानी, अपने स्वारथ की ही ठानी।
करते रहे यही मनमानी, सदा कुसंगति में बिगरौ।।गुरु।।

यह बिगड़ी किस भांति बनाऊँ, स्वामी तब ढिग कैसे आऊँ।
लज्जित हूँ क्या मुँह दिखलाऊँ, महा पतित मैं पाप भरो।।गुरु।।

तुमही मेरे सद्‌गति दाता, तुमही पिता तुम्ही हो माता।
तुम ही सरबस सब विधि त्राता, आज हमारे क्लेश हरो।।गुरु।।

हे प्रभु पावन प्रेम दान दो, जीवन मुक्तिद शान्ति ज्ञान दो।
परमानन्द स्वरूप ध्यान दो, 'पथिक' तुम्हारी शरण परो।।गुरु।।

गुरुवर की मेहर है, जो हम सब इस दर आये जाते हैं।
जो कहीं न मिटते, यहाँ हमारे दुःख मिटाये जाते हैं।।

उसका गरूर गलने लगता, जो झुकता इस दर पर आकर।
जो नासमझी से कायल है, वे जल समझाये जाते हैं।।

श्रद्धा विश्वास प्रेम के बिन सबका आना आसान नहीं।
यूँ तो इनसान की शक्लों में कुछ पशु भी पाये जाते हैं।।

कुछ देर अबेर भले ही हो पूरी होती सबके मन की।
बालक फुसलाये जाते हैं लालची रिझाये जाते हैं।।

बल विद्या धन पद के मद में जो नहीं किसी की सुनते हैं।
जब गिरता उनका अहंकार तब यहीं उठाये जाते हैं।

जो हिम्मत वाले हैं वह नकली दौलत के दानी होते।
ये दानी असली दौलत के फिर धनी बनाये जाते हैं।।

दरबार अनेकों दुनियाँ में पर यह दरबार निराला है।
कुछ खास किस्म के 'पथिक' यहाँ चुन चुन कर लाये जाते हैं।।

गुरु कृपा 115

गुरुदेव अब तो दया करो।।

कितने दिन से भटक रहे हैं, दुख के कांटे खटक रहे हैं।
कहाँ कहाँ हम अटक रहे हैं, करुणाकर मम हाथ धरो।।गुरु।।

मैं आचार विचार हीन हूँ, निर्बल हूँ अतिशय मलीन हूँ।
यही विनय सब भाँति दीन हूँ, मोहि नर परखो खोट खरौ।।गुरु।।

शील धर्म की बात न जानी, अपने स्वारथ की ही ठानी।
करते रहे यही मनमानी, सदा कुसंगति में बिगरौ।।गुरु।।

यह बिगड़ी किस भांति बनाऊँ, स्वामी तब ढिग कैसे आऊँ।
लज्जित हूँ क्या मुँह दिखलाऊँ, महा पतित मैं पाप भरो।।गुरु।।

तुमही मेरे सद्गति दाता, तुमही पिता तुम्ही हो माता।
तुम ही सरबस सब विधि त्राता, आज हमारे क्लेश हरो।।गुरु।।

हे प्रभु पावन प्रेम दान दो, जीवन मुक्तिद शान्ति ज्ञान दो।
परमानन्द स्वरूप ध्यान दो, 'पथिक' तुम्हारी शरण परो।।गुरु।।

गुरुवर की मेहर है, जो हम सब इस दर आये जाते हैं।
जो कहीं न मिटते, यहाँ हमारे दुःख मिटाये जाते हैं।।

उसका गरूर गलने लगता, जो झुकता इस दर पर आकर।
जो नासमझी से कायल है, वे जल समझाये जाते हैं।।

श्रद्धा विश्वास प्रेम के बिन सबका आना आसान नहीं।
यूँ तो इनसान की शक्लों में कुछ पशु भी पाये जाते हैं।।

कुछ देर अबेर भले ही हो पूरी होती सबके मन की।
बालक फुसलाये जाते हैं लालची रिझाये जाते हैं।।

बल विद्या धन पद के मद में जो नहीं किसी की सुनते हैं।
जब गिरता उनका अहंकार तब यहीं उठाये जाते हैं।

जो हिम्मत वाले हैं वह नकली दौलत के दानी होते।
ये दानी असली दौलत के फिर धनी बनाये जाते हैं।।

दरबार अनेकों दुनियाँ में पर यह दरबार निराला है।
कुछ खास किस्म के 'पथिक' यहाँ चुन चुन कर लाये जाते हैं।।

गुरु महिमा 116

जय परमानन्दरूप स्वामी सद्‌गुरुजी।।
ऐसे तुम दयानिधि सुमिरत ही गहत हाथ।
बार-बार नाऊँ माथ, स्वामी सद्‌गुरुजी।।
मेरे आधार तुम्हीं, पतवार तुम्हीं पार तुम्हीं।
हरते दुख भार तुम्हीं, स्वामी सद्‌गुरुजी।।
कोमल चित अति उदार, हमको भी लो उबार।
कर दो भवसिन्धु पार, स्वामी सद्‌गुरुजी।।
'पथिक' प्राण जीवनधन, स्वीकृत हो यह तन मन।
सर्वस तुम में अरपन, स्वामी सद्‌गुरुजी।।

गुरु महिमा 117

मानव तुमने क्या पाया।।
देखो सुख के बदले में कितना है दुःख उठाया।।

इन भोग सुखों के पथ में होकर तन मन के रोगी।
कितने ही पुण्य मिटाकर मर गये करोड़ो भोगी।
उनकी दुर्गति को लखकर शुभमति ने तत्क्षण गाया।।मानव0।।

कितने राजे महाराजे हो गये महा अभिमानी।
वे भी न रहे इस जग में उनकी रह गई कहानी।
इससे तत्वज्ञ जनों ने सुख को दुखान्त बतलाया।।मानव0।।

जिनके महलों में प्रभुता के नवराग सदा बजते थे।

इच्छित सुखदाता सेवक जिनको न कभी तजते थे।
उनकी समाधि के सूनेपन ने यह शब्द सुनाया।।मानव0।।

जिनको इस जग में सुन्दर सुखकर सत्कार मिला है।
जिनको पुण्यों के बदले में उत्तम प्यार मिला है।
उनसे पूछो यदि इतने पर भी सन्तोष न आया।।मानव0।।

जो कुछ है अभी समय है तुम कर लो अपने हित की।
अन्तर्मुख होकर त्यागो चंचलता अपने चित की।
यदि कर न सके तुम ऐसा तो जीवन व्यर्थ गंवाया।।मानव0।।

उन सत्पुरुषों को देखो जो परम तपस्वी त्यागी।
तज मान मोह माया को जो हुए सत्य अनुरागी।
हम 'पथिक' जनों को ऐसे सद्गुरु ने मार्ग दिखाया।।मानव0।।

गुरु महिमा 118

मैं तो उन सन्तन का दास जिन्होंने मन जीत लिया।
वे कबहूँ रहत उदास जिन्होंने मन जीत लिया।।

उनकी समीपता गंगा सी शीतल है।
उनका उर निर्मल दिखता कहीं न छल है।
उनके ढिंग मिलत सुपास जिन्होंने मन जीत लिया।।

उनके वचनों से मोह दूर हो जाता।
मिलता विवेक भीतर का भ्रम खो जाता।
हो जाते पातक नास जिन्होंने मन जीत लिया।।

वे संग रहित हैं प्रभु के ही अनुरागी।
जिनसे दुःख मिलता उन दोषों के त्यागी।
वे जग से रहत निराश जिन्होंने मन जीत लिया।।

उनके जीवन में चिन्ता भय आने का।
अविवेक जनित मानसिक क्लेश पाने का।
मिलता न कहीं अवकास जिन्होंने मन जीत लिया।।

उनको जग में सब दिखता मंगलमय है।
प्रतिकूल परिस्थिति में चित शान्त अभय है।
उन्हें होता कहीं न त्रास जिन्होंने मन जीत लिया।।

मैं 'पथिक' उन्हीं को पुनि-पुनि शीस नवाऊँ।
उनसे ही सुमति आत्मरति सद्गति पाऊँ।
करूँ उनके निकट निवास जिन्होंने मन जीत लिया।।

गुरु महिमा 119

यदि आज सद्विभूतियों का अवतार न होता।
सद्धर्म धरा धाम पै विस्तार न होता।।
अपने को त्याग तप में यदि ये न तपाते।
जीवों का किसी भाँति भी निस्तार न होता।।
सद्ज्ञान का प्रकाश भी मिलता नहीं कहीं।
गुरुदेव का खुला जो दया द्वार न होता।।
कितने अधःपतित हम सबके लिये यहाँ।

यदि ये न उतरते तो उद्धार न होता।।
निर्द्वन्द 'पथिक' हो रहे इनकी ही शरण में।
जिनकी औपा बिना है कोई पार न होता।।

गुरु महिमा 120

यह सद्गुरु दरबार है सबको मिलता प्यार है।
राजा रंक सुखी दुःखियों के लिये खुला ये द्वार है।।

परमेश्वर का ज्ञान तत्व हम जहाँ प्रकाशित पाते हैं।
वहीं हमें गुरु कृपा दीखती भव बंधन कट जाते हैं।
मिटता अहंकार है आता सत्य विचार है।
अपने तन या चंचल मन पर हो जाता अधिकार है।।

गुरुमुख मानव दोष मुक्त हो लघु से गुरु हो जाता है।
जो मनमुख है सुख के पथ में ही अगणित दुःख पाता है।
मनमुख ही मझधार है, गुरुमुख ही भव पार है।
वही जान पाता जैसा कुछ, यह विचित्र संसार है।।

गुरु के संगी निर्मोही निर्लोभी तत्व ज्ञानी हैं।
लघु के संगी तन धन के लोभी मोही अभिमानी हैं।
गुरु के संग विचार है, लघु के संग विकार है।
एक सभी को प्रिय होता है एक भूमि का भार है।।

ज्ञान रूप गुरु की उपासना सारे दोष मिटाती है।
कहीं ज्ञान को नहीं भूलना उपासना कहलाती है।

उपासना ही सार है इससे ही उद्धार है।
'पथिक' गुरुकृपा से गुरुता का देख रहा विस्तार है।।

गुरु महिमा 121

यह समय न सदा रहेगा।।
परिवर्तनशील जगत् में कब तक तू किसे चहेगा।।

जो पुण्य कर सके कर ले, सद्भावों से हिय भर ले।
सद्गुरु का आश्रय धर ले, भवसागर से अब तर ले।

यह कर न सका तो जीवन माया से विवश बहेगा।।
यदि धन है तो दानी बन, विद्या है तो ज्ञानी बन।

परमेश्वर का ध्यानी बन, अति सरल निराभिमानी बन।
चिन्ता न करे तू इस की कोई क्या मुझे कहेगा।।

अब सावधान हो जाना अपना अज्ञान मिटाना।
अब आत्म ज्ञान में आना जो बिगड़ी उसे बनाना।

अभिमान मोह वश प्राणी जग में अति दुःख सहेगा।।
अब तक तू सोता क्यों है, यह अवसर खोता क्यों है।

अपराधी होता क्यों है, भयवश तू रोता क्यों है।
वह 'पथिक' अभय होगा जो सद्गुरु ज्ञान गहेगा।।

गुरु महिमा 122

वही मानव शान्ति जग में पा रहे हैं।
जो सतत गुरु ज्ञान को अपना रहे हैं।।

भोग सुख का अन्त दुःख है किन्तु फिर भी।
जिसे देखो उधर ही ललचा रहे हैं।।

देखते न वियोग को संयोग में जो।
कभी रोयेंगे अभी जो गा रहे हैं।।

जिन्हें जीवन में न दिखती मृत्यु निश्चित।
वही जीवन व्यर्थ खोते आ रहे हैं।।

जगत् दृश्य जिन्हें असत्य न दीखता है।
वही बन्धन मोह व्याधि बढ़ा रहे हैं।।

देह को ही रूप अपना मानते जो।
वही जीव विनाश पथ में जा रहे हैं।।

जो कि अपना सत्स्वरूप न जानते हैं।
वही चिन्तित भयातुर घबरा रहे हैं।।

जिस तरह से मुक्ति मिल सकती दुःखों से।
'पथिक' को गुरुजन यही समझा रहे हैं।।

गुरु महिमा 123

सत्य नाम सद्गुरु से पाया ओम् ओम् ओम्।
सब मन्त्रों का प्राण ओम् है, अक्षर अवधान ओम्।
यही प्रणव वेदों ने गाया ओम् ओम् ओम्।

ब्रह्मा विष्णु महेश ओम् में, स्वर्ग भुवर भूदेश ओम् में।
स्वर निनाद में यही सुनाया, ओम् ओम् ओम्।।

कारण सूक्ष्म स्थूल ओम् में, अन्त मध्य अरु मूल ओम् में।
इसमें ब्रह्म इसी में माया, ओम् ओम् ओम्।।

परम तत्व का ज्ञान ओम् में, ब्रह्मशक्ति का ध्यान ओम् में।
ओमकारमय विश्व दिखाया, ओम् ओम्।

ओम् सच्चिदानन्दधाम है, भक्तिद मुक्तिद पूर्णकाम है।
'पथिक' हृदय में यही समाया ओम् ओम् ओम्।।

गुरु महिमा 124

सद्गुरु एक तुम्हीं आधार।।

जब तक तुम न मिलो जीवन में, शान्ति कहाँ मिल सकती मन में।
खोज फिरे संसार।।

जब दुख पाते अटक अटक कर, सब आते हैं भूल भटक कर।
एक तुम्हारे द्वार।

जीव जगत् में सब कुछ खोकर, बस बच सका तुम्हारा होकर।
हे मेरे सरकार।।

कितना भी हो तैरनहारा, लिया न जब तक शरण सहारा।
हो न सका वह पार।।

हे प्रभु तुम्हीं विविध रूपों से, सदा बचाते भव कूपों से।
ऐसे परम उदार।।

हम आये हैं शरण तुम्हारी, अब उद्धार करो दुखहारी।
सुन लो पथिक पुकार।।

सद्गुरु एक तुम्हीं आधार।।

गुरु महिमा 125

स्वामी श्री सद्गुरु भगवान
तुम शरणागत के प्रतिपालक, अनुपम दया निधान।।

तुम समर्थ सर्वज्ञ सरल चित, प्रेमनिधे अविकारी।
तुम सन्मति सद्गति के दाता, ज्ञाता गुणी महान।।स्वा0।।

अधमोद्धारक तारक तुम ही, सर्व सिद्धि के दानी।
अपने-अपने इच्छित सुख को, तुमसे पाते प्रानी।
करुणावत्सल दया दृष्टि से, करते तुम कल्याण ।।स्वा0।।

इस भूतल पर प्रेमभाव वश, मानव तन धर आते।
प□ पत्र-सम निर्मल रहकर, परहित सदा निभाते।
तुम सच्चिदानन्दघन हे प्रभु, 'पथिक' हृदयधन प्रान ।।स्वा0।।

गुरु महिमा 126

सुनो प्यारे श्रोता सज्जन, सुना हमने यह गुरु प्रवचन।
ज्ञान में जो साधक जागे, विषय सुख को विषवत त्यागे।
देखता रहे साक्षी बन, जो कुछ भी होता हो आगे।
नहीं बँधता वह कर्ता बन, सुना हमने यह गुरु प्रवचन।।

ज्ञान में पाप मिटा करते, सभी संताप मिटा करते।
कष्ट जो कुछ भी आते हैं, सब अपने आप मिटा करते।
प्रेम ही होता जीवन धन, सुना हमने यह गुरु प्रवचन।।

साध कर जो वाणी बोले, बुद्धि साधे अन्तर तोले।
साध कर काम क्रोध के वेग, भेद अपना न कहीं खोले।
साध लेता वह चंचल मन, सुना हमने यह गुरु प्रवचन।।

मन से जो कुछ माना जाता, बुद्धि से वह जाना जाता।
स्वयं में शान्त मौन रहकर, आत्मा पहचाना जाता।
'पथिक' मिल जाता आनन्दघन, सुना हमने यह गुरु प्रवचन।।

गुरु महिमा 127

सोचो किसने क्या पाया, मानव जग में क्यों आया।
देखो सुख के बदले में कितना है दुःख उठाया।।

इन भोग सुखों के पथ में, होकर तन-मन के रोगी।
कितने ही पुण्य मिटा कर, मर गये करोड़ों भोगी।
उनकी दुर्गति को लखकर, सन्मति ने तत्क्षण गाया ।।सोचो0।।

कितने राजे महाराजे, हो गये महा अभिमानी।
वे भी न रहे इस जग में, उन की रह गई कहानी।
अनुभवी जनों ने जग को, है मिथ्या भास बताया ।।सोचो0।।

जिनके महलों में प्रभुता के राग सदा बजते थे।
इच्छित सुख दाता सेवक जिनको न कभी तजते थे।
उनकी समाधि के सूनेपन ने तब यह गीत सुनाया ।।सोचो0।।

जिनको इस जग में सबसे बढ़कर सत्कार मिला है।
जिनको पुण्यों के बदले में उत्तम प्यार मिला है।
उनको देखो क्यों इतना पाकर सन्तोष न आया ।।सोचो0।।

जो कुछ है अभी समय है, तुम कर लो अपने हित की।
अन्तर्मुख हो कर त्यागो, चंचलता अपने चित्त की।
यदि कर न सके तुम ऐसा, तो जीवन व्यर्थ गँवाया ।।सोचो0।।

उन सत्पुरुषों को देखो, जो परम तपस्वी त्यागी।
तज मान मोह माया को, जो हुए सत्य अनुरागी।
हम 'पथिक' जनों को ऐसे सद्गुरु ने मार्ग दिखाया ।।सोचो0।।

गुरु महिमा 128

ममता के छ□रूप में संसार भुलाना।
गुरुदेव की औपा बिना मिलता न ठिकाना।
ममता में देह गेह से ही नेह लगाना।
गुरुदेव की औपा से सत्स्वरूप को जाना।
ममता की मोहनी से गुरु ने ही बचाया।।
सौभाग्य से गुरुदेव की जो शरण में आया।।

ये ममता सदा कामना के सुख में फँसाती।
गुरु औपा सुख के अन्त में है दुख से बचाती।
ये ममता ही संसार में मोही को रुलाती।
गुरु औपा मोह पाश से साधक को छुड़ाती।
ममता ने गिराया वहीं सद्गुरु ने उठाया।।
सौभाग्य से गुरुदेव की जो शरण में आया।।

ममता ने मोही मन को भोग रोग में डाला।
गुरु औपा ने निज साधकों को इनसे निकाला।
ममता में है अज्ञान-तिमिर से पड़ा पाला।
गुरु की औपा से मिल गया सद्ज्ञान उजाला।
ममता ने भुलाया वहीं सद्गुरु ने बुलाया।।
सौभाग्य से गुरुदेव की जो शरण में आया।।

ममता के तागों से ही बँधा सुखासक्त मन।
गुरु औपा से ही दृढ़ता क्षण मात्र में बंधन।
ममता की परिधि में नहीं बन पाता है भजन।
गुरु औपा से लग जाती अनायास ही लगन।
गुरु औपा ने विचित्र चमत्कार दिखाया।।
सौभाग्य से गुरुदेव की जो शरण में आया।

ये माया के पर्दे हैं जो सद्वस्तु छिपाते।
गुरुदेव की दया है जो कि आके लखाते।
ये माया है कि जिसमें सभी गोते लगाते।
गुरुदेव निज दया से उन्हें आके बचाते।
अपना बना लिया कि जिसे सामने पाया।।
सौभाग्य से गुरुदेव की जो शरण में आया।

ममता ही नाम रूप में आसक्त बनाये।
सद्गुरु औपा सदा ही मुक्ति द्वार दिखाये।
ममता विनाशी देह में ही चित्त फँसाये।
गुरु औपा आत्म ज्ञान से अज्ञान हटाये।
ममता ने रुलाया वहीं सद्गुरु ने हँसाया।।
सौभाग्य से गुरुदेव की जो शरण में आया।

ममता में प्यारे लगते हैं सब भोग के सामान।
गुरु औपा से प्रिय दीखता है भक्ति योग ध्यान।
इस ध्यान योग में ही मिल जाते हैं भगवान।
भगवान ही परमगुरु उनका स्वरूप ज्ञान।
गुरु ज्ञान में दिखती 'पथिक' को माया की छाया।।
सौभाग्य से गुरुदेव की जो शरण में आया।

गुरु महिमा 129

हम गुरु संदेश सुनाते हैं, इसको सब कोई क्या जाने।
यह परम लाभ की बातें हैं, इसको सब कोई क्या जाने।।
ऐसा जग में संयोग नहीं, हो जिसका कभी वियोग नहीं।
ऐसा कोई सुख भोग नहीं, जिसके पीछे दुःख रोग नहीं।
भोगी बन सब पछिताते हैं, इसको सब कोई क्या जाने।।

गुरु महिमा 130

हमने सद्गुरु से ज्ञान गीत गाना सीखा है।
समझ पाये हैं जितना वही बताना सीखा है।।

बुद्धि बालकवत जिनकी वह फुसलाये जाते हैं।
रागी मन वालों को कुछ देर रिझाना सीखा है।।

कभी रटते हैं कोई पढ़ते हैं कुछ सीखते हैं।
जो कि विद्वान हैं उनको समझाना सीखा है।।

अभी लेने देने की बात बहुत दूर दिखती।
अधिक जन प्रवचन सुनने भर को आना सीखा है।।

मोहनिद्रा में कोई सोते कोई जाग जाते।
बहुत लोगों ने तो बस मन मनाना सीखा है।।

बिना सीखे ही लोभी मोही कामी क्रोधी थे।
गुरु औपा के बल से अब दोष मिटाना सीखा है।।

जहाँ मानव पशुता का परिचय देता भोगी बन।
हमने पशुता में मानवता लाना सीखा है।।

हमको सतसंगति से जब सद्विवेक मिल पाया।
उसी के द्वारा सबसे नेह निभाना सीखा है।।

जहाँ से प्रियतम प्रभु की खोज का आरम्भ होता।
वहीं पर लौट कर के प्रभु का पाना सीखा है।।

खोजा हमने भी बहुत पाया नहीं कुछ बाहर।
'पथिकमय' प्रभु ही हैं, यह ध्यान लगाना सीखा है।।

गुरु महिमा 131

देव दीन अनाथ के तुम एक प्राणधार हो।
शक्तिमान महान योगीराज सुषमा सार हो।।

आप परित्राता स्वजन के दीन के बलहीन के।
पतित जन को करत पावन आपही कर्तार हो।।

हे प्रभो तुम परम हितकारी भिखारी हम खड़े।
ज्ञान सद्विज्ञान भिक्षा आप डालनहार हो।।

आप के ही औपा-बल का अब सहारा है हमें।
दिव्य जीवन दिव्य बलयुत शान्ति के अवतार हो।।

आश अभिलाषा तुम्हीं तक शरण लो सद्बुद्धि दो।
पथिक निर्बल के परम प्रभुवर तुम्हीं आधार हो।

गुरु महिमा 132

योगी प्रणम्य मम गुरुदेव स्वामीनाथ हो।
दीन हितकारी सदा निज भक्तजन के साथ हो।।

हे दयामय दीन पालन हेतु हो नर-तन धरे।
अष्ट सिद्धी निद्धि नौ युत नाथ पावन गुण भरे।।

गति अलौकिक प्रगट गुप्त अपार लीला रह रहे।
दरश दै निज भक्तजन के मोद हिय में भर रहे।।

हे प्रभू करुणानिधान महान् पावन मूर्ति हो।।
है प्रणाम अनेक हे गुरुदेव मम प्रणमूर्ति हो।।

है अलख गति आपकी हे परम उपकारी प्रभो।
शक्तिशाली निर्विकारी दुरति दुखहारी प्रभो।

प्रार्थना बस है यही पावन हृदय कर दीजिये।
प्रभु शरण में आ चुका हूँ प्रेम भक्ति दीजिये।।

दयामय करिये दया यह आपका ही दास है।
योग जप तप हीन है केवल तुम्हारी आस है।।

करो जो कुछ आपकी रुचि हो मुझे स्वीकार है।
पथिक रक्षा का प्रभो अब आप ही पर भार है।।

गुरु महिमा 133

सुनो मेरी गुरूजी पुकार-सविनय पैरों पड़ूँ।।

हट ठाने मन माने नाहीं-समुझायो बहु बार-निशि दिन यापै मरूँ।।
कठिन कलुषता छाया रही उर में अज्ञान अपार-कसत अब मैं उबरूँ।।

रही लालसा भजन करन की हटत न मलिन विकार-हे प्रभु कैसे करूँ।।
जीवन बीत रहो याही विधि स्वामिन करो सुधार-प्रभू को चित में धरूँ।।

पथिक पतित अति शरण तूम्हारे नाशहु कुटिल विचार-दिवस निशि भजन करूँ।।
सुनो मेरी गुरुजी पुकार सविनय पैरों पड़ूँ।।

गुरु महिमा 134

हमारे जीवन धन गुरुदेव,
तुम्हीं अन्तर सुख के अवधान।

तुम्हीं हो प्रभु इसके आधार,
तुम्हीं से त्राणु प्राण का दान।।

तम्हीं से है आनन्द प्रमोद,
तुम्हारा ही अन्तर में गान।

तुम्हारी चिद-छाया में नाथ,
शान्ति पाते हैं आकुल प्रान।।

यहाँ तिमिरावृत हृदय निकेत,
न किन्वित भक्ति शक्ति आलोक।

वासना कलुषित काया यहाँ,
बुलाऊँ योग्य नहीं सुस्थान।।

तुम्हीं प्रभु मन मन्दिर में देव,
दया कर आते रहते नाथ।

कहाँ यह अधम अपावन निलय,
उसी की सुचिता पर है ध्यान।।

तुम्हारी महिमा अमित अपार,
तुम्हीं जानो जी इसका खेल।

भला हम कैसे बल बुधि हीन,
जान सकते तुमको भगवान।।

तुम्हारा ही अवलम्बन नाथ,
तुम्हीं हो एकमात्र आधार।

पथिक को दो निज निश्चल प्रेम,
कि जिससे इसका हो कल्याण।।

गुरू महिमा 135

हे सद्‌गुरू स्वामी अबकी बार उबार।।

जीरण छिद्रमई तरणी मम भरी पाप के भार।।हे सद्0।।

डगमगात अति बीच भवार्णव नाविक मन पतवार।। हे सद्0।।

मोहनिशा हिय उठत हिलोरें बहती विषय बयार।।हे सद्0।।

काम क्रोध मद जन्तु भयंकर घेरत बारंबार।।हे सद्0।।

इन्द्रियगण स्वारथ की केहि हित असमय छेड़त रार।।हे सद्0।।

हे जीवन धन जीवन तरणी करो पथिक की पार।।हे सद्0।।

गुरू महिमा 136

जय गुरूदेव आनंदकंद।।

मुक्त जीवन विदय ब्रह्म स्वरूप लहत अनंद।
शक्तिधारी शक्ति में देखत फिरत ब्रम्हाण्ड।।

नग्न वपु मदनारि सम विहरत सदा स्वछन्द।
दरश दै निज भक्तजन के हरत सब दुःख द्वन्द।।

उभय पद अरविन्द में यह मुग्ध मन मकरन्द।
शरण लेना नाथ दुःख के द्वार होवैं बन्द।।

पतित पावन तुम कहाते मैं पतित मतिमन्द।
पथिक की पथ लाज राखहु कटहिं सब भवफन्द।।

गुरु महिमा 137

कुसमय कौन संगी चहत।।

परम प्रिय अरविन्द को रवि लखत विकसित रहत।
ग्रीष्म में सोई सलिल सोषत तपत, कमलहि दहत।।

कामिनी लखि रूप सुन्दर प्रेम करि मन गहत।
समय बीते सुख मिलत नहिं दुःख कारण कहत।।

करत प्रेम मिलिन्द मधु में लीन है सुख लहत।
ये मधुरता तजत तुरतहि निरस जानि न रहत।।

भ्रमत सगरे जीव जग में मोह धार बहत।
पथिक सद्गुरु शरण क्यों नहिं नाम नौका गहत।।

गुरु महिमा 138

बता दे गुरु कौनी डगरिया मैं जाँव।।

अति कंटक मय विपिन बीच में
बैठन को नहिं ठांव।।बता0।।

काम क्रोध मद लोभ लगत ठग
सोचि सोचि भय खांव।।बता0।।

मोहनिशा में पथ नहिं सूझै
लटपटात पड़ै पांव।।बता0।।

भ्रमित बुद्धि कछु यतन न आवै
है पुकार तब नांव।।बता0।।

किहि विधि पथिक मिलै प्रभु तुमसों
जीवन को लगो दांव।।बता0।।

गुरु महिमा 139

हमहूँ पतित अधम अभिमानी।।

हंसत रहत नित पर अवगुण लखि
आप बनत अति ज्ञानी।।

कठिन कलुषता छाय रही उर
तृष्णा मन लपटानी।।

नहिं मति स्थित चंचलता अति
विषय बयारि समानी।।

भूल्यों निज को निज कर्मन सों
बुद्धि भ्रमित बौरानी।।

हे सर्वान्तर्यामी स्वामी
तेरे ही हम प्रानी।।

तुम्हीं सुधारक पथिक पन्थ में
हे प्रभु सद्गुण दानी।।

गुरु महिमा 140

बड़ी दूरी डगरिया जाना रे।।

कण्टक बिघन नाहिं चलि जावै,
कठिन पिया को पाना रे।। बड़ी दूरी0।।

जीवन पथ में चोर लगत हैं,
लूटत धरम खजाना रे।। बड़ी दूरी0।।

हिंसक जन्तु काम क्रोधादिक,
इनकी वार बचाना रे।। बड़ी दूरी0।।

भूलि न जाय पथिक या सेतु,
सद्गुरु को अपनाना रे।। बड़ी दूरी0।।

गुरु महिमा 141

जय हो गुरुदेव महाराजजी तुम्हारी जै हो,
तुम्हीं तो आदर्शरूप सत्य अवतारी हो।

पावन महान शक्तिशाली दीनहितकारी,
पतित अपावन जीवों के अघहारी हो।

दया के हो सागर अथाह सद्ज्ञान भरे,
अतिशय सरलचित परउपकारी हो।

बारम्बार तुमको प्रणाम हे परमदेव,
दुःख निवारण पथिक हियबिहारी हो।

गुरु महिमा 142

किस तरह मन को मनाऊँ।
मलिनता अति छा रही कैसे मिटाऊँ।।किस तरह0।।

पूर्व संचित वासनायें। नित्य नूतन आयें जायें।
बँधा मायापाश में दुख उठाऊँ।।किस तरह0।।

विजयप्रद शक्ति नहीं है। प्रभु चरण भक्ती नहीं है।
व्यर्थ की उलझनों में जीवन बिताऊँ।।किस तरह0।।

कलुषता किहि विधि मिटावैं। कब स्वगुरु पद प्रेम पावैं।
शून्यवत संसार में किसको बुलाऊँ।।किस तरह0।।

तुम्हीं हे प्रभु खबर लेना। सुखद शान्ति सुज्ञान देना।
पथिक हूँ तेरा तुम्हारे पास आऊँ।।किस तरह0।।

गुरु महिमा 143

समझते जिसको हमारा।
एक दिन कोई न होगा।।

वो हृदय जो प्राण प्यारा।
एक दिन कोई न होगा।।

आज जिनके गर्व में तुम
फूलकर इतरा रहे हो।

खींच लेंगे सब किनारा।
एक दिन कोई न होगा।।

हो रहे जो आज तेरे
हृदय तन धन रहित अर्पन।

बने जो आँखों का तारा।
एक दिन कोई न होगा।।

अभी ही जीवन डगर में
किस तरह मिल कौन भूले।।

तभी विस्मित हो पुकारा।
एक दिन कोई न होगा।।

कौन ऐसा संग है
जिसमें कि परिवर्तन नहीं हो।

पथिक सद्गुरु बिन तुम्हारा।
एक दिन कोई न होगा।।

गुरु महिमा 144

जै जै श्री गुरुदेव दयामय
भक्त-प्राण आधार प्रभो।
अधम उधारन हेतु सत्य के
अति पवित्र अवतार प्रभो।।

नाथ करैं हम विनय किस तरह
भेंट आपके क्या लायें।
कुछ भी ऐसी वस्तु नहीं
क्या देकर तुमको अपनायें।।

सब विधि हीन दीन कलुषित मन
भक्ति नाथ कैसे पाऊँ।
किस विधि प्रभो आपकी
करुणा का सुपात्र मैं बन जाऊँ।।

हम समान अति पतित जनों के
हे प्रभु तारनहार तुम्हीं।
शरणागत असमर्थ दुखी जन का
ले सकते भार तुम्हीं।।

विदित नहीं क्या कारण है जो
देरी नाथ लगाते हो।
कितने दिन हो चुके अभी तक
माया में भरमाते हो।।

हे पालक प्रभु परमपिता अब
हम सबका कल्याण करो।
इस भव में दुर्गम माया के
कठिन पाश से त्राण करो।।

हे आनन्दरूप पावन प्रभु
शक्तिमान सदगुणधामी।
दीनदयाल भक्त संरक्षक
हे समर्थ अन्तर्यामी।।

छिपे हुए मानव प्रतिमा में
हे जगजीवन सर्वाधार।
हे गुरूदेव पथिक शरणागत,
है प्रणाम प्रभु बारम्बार।।

गुरु महिमा 145

सद्‌गुरु से ही परमानन्द पाते हैं हम।
नित नव आमोद के दिन बिताते हैं हम।।

निर्भय पावन सुखद चरणों में बैठकर।
जन्म जन्मों की बिगड़ी बनाते हैं हम।।

सुमधुर मन्जुल सुधामय सद्‌उपदेश से।
मोह अविद्या की ग्रन्थी छुड़ाते हैं हम।।

प्रभु के परमोज्ज्वल विज्ञान आलोक में।
देखो कल्मष हृदय के मिटाते हैं हम।।

मेरे सर्वेश तुम ही करुणामय प्रभो।
जिनकी साया में सुखगीत गाते हैं हम।।

अब श्रीचरणों में भवभय मिटा जा रहा।
पथिक गुरुदेव के ही कहाते हैं हम।।

गुरु महिमा 146

जब हम ज्ञान प्रकाश न पाते । पथ में चलते गिर गिर जाते।
अन्धकार में रत्न समझकर कंकड़ पत्थर ही चुनते हैं।

मूल्य न मिलता जब उनका कुछ तब हम अपना सिर धुनते हैं।
काल कर्म को दोश लगाते । जब हम ज्ञान प्रकाश न पाते ।।

मिले हुए घर धन स्वजनो को बिना विचारे अपना कहकर ।
भोग जनित सुख के पीछे ही जीवन में कितने दुःख सहकर ।
लोभ मोह अभिमान बढ़ाते । जब हम ज्ञान प्रकाश न पाते ।।

अविनाशी अपना जीवन है हम कहते हैं मरना हमको।
देख न पाते अपने सम्मुख जो कुछ भी है करना हमको।
यद्यपि गुरुजन हैं समझाते। जब हम ज्ञान प्रकाश न पाते ।।

सुख में हम सेवा कर सकते पर बन जाते उसके भोगी।
सुख में त्याग और तप द्वारा हो सकते है सुन्दर योगी ।
किन्तु समय खोकर पछताते। जब हम ज्ञान प्रकाश न पाते।।

निज स्वरूप को जान न करके मुग्ध हुए नश्वर काया में।
मैं मेरी कह कहकर नटवत नाच रहे हरि की माया में।
अनजाने ही कष्ट उठाते । जब हम ज्ञान प्रकाश न पाते ।।

जो अज्ञान विनाशक है वह ज्ञान स्वरूप हमारा गुरु है।
जिससे हमको गुरुता मिलती अन्तिम यही सहारा गुरु है।
वही पथिक हम ठोकर खाते जब हम ज्ञान प्रकाश न पाते।।

गुरु महिमा 147

परिवर्तनशील जगत में कब तक तू किसे चहेगा।।

जो पुण्य कर सके कर ले, सद्भावों से हिय भर ले।
सद्गुरु का आश्रय धर ले, भव सागर से अब तर ले।
यह कर न सका तो जीवन, माया से विवश रहेगा।।

यदि धन है तो दानी बन, विद्या है तो ज्ञानी बन।
परमेश्वर का ध्यानी बन अति सरल निरभिमानी बन।
चिन्ता न करे तू इस की, कोई क्या मुझे कहेगा।।

अब सावधान हो जाना,अपना अज्ञान मिटाना ।
अब आत्म ज्ञान में आना, जो बिगड़ी उसे बनाना।
अभिमान मोहवश प्राणी, जग में अति दुःख सहेगा।।

अब तक तू सोता क्यों है, यह अवसर खोता क्यों है।
अपराधी होता क्यों है, भय वश तू रोता क्यों है।
वह पथिक अभय होगा जो सद्गुरु का ज्ञान गहेगा।।

गुरु महिमा 148

ज्ञान अद्वय जब प्रकाशित वहीं भगवद् अवतरण है।
वहीं सद्गुरु अवतरण है।।
तभी दर्शन सुलभ होता शुद्ध जब अन्तःकरण है।

आत्मा आनन्दमय है सर्वमय है नित्य चेतन।
अहंकार विमूढ़ दुख-सुख भोक्ता है संग तन-मन।
प्रेम में गलता पिघलता जब कि श्रद्धायुत शरण है।।

मैं ही खुद खोया हुआ था खोज में ही जब तुला था।
अनदिखा आनन्द का यह द्वार तो सब दिन खुला था।
यहाँ मिटता ज्ञान में अज्ञान का जो आवरण है।।

कौन हमको जानता था शरण में आने के पहले।
अब जमाना जानता है शक्ल दिखलाने के पहले।
बिना अपने कुछ किये ही हो रहा पोषण-भरण है।।

जो कहीं भी पा न सकते वह यहाँ पर पा रहे हैं।
जो कहीं भी गा न सकते वह यहाँ हम गा रहे हैं।
जो कहीं भी बन न सकता बन रहा वह आचरण है।।

जब कभी ममता मिटे तब अहं के आकार टूटें।
इसी को तो मुक्ति कहते मान्यता के बन्ध छूटें।
यही परम स्वतंत्रता है यही ज्ञानामृत झरण है।।

यहाँ आने पर ही जाना कहीं कुछ पाना नहीं है।
स्वयं में ही प्राप्त प्रभु है अब कहीं जाना नहीं है।
'पथिक' का विश्राम धाम स्वज्ञान ही सब दुःख हरण है।।

गुरु महिमा 149

ज्ञान में जब दिखा देते हो तुम, बात बिगड़ी बना देते हो तुम।।
जिसे हम दूर नहीं कर पाते, दोष मेरा हटा देते हो तुम।।
बिना तुमसे मिले जो बुझती नहीं, प्यास ऐसी जगा देते हो तुम।।
गरूर अपने आप झुक जाता, चोट ऐसी लगा देते हो तुम।।
हम तो भूले स्वयं को तुमको भी, याद अपनी दिला देते हो तुम।।

ज्ञान में यह जागरण का समय है सोते न रहना।
सुखद स्वप्नों में न हँसना दुःखद में रोते न रहना।।

मन विषय विष से सना है निर्विषय इसको बनाओ।
प्रेममय होकर सदा आनन्द के ही गीत गाओ।
कामना वश कर्म के अब बीज तुम बोते न रहना।।

शान्ति शाश्वत प्राप्त ही है अहंकार अशान्त रहता।
सत्य से दूरी नहीं है मन विमुख हो भ्रान्त रहता।
क्षणिक सुख के लिये जीवन व्यक्ति अब खोते न रहना।।

तुम सदा ही मुक्त हो यदि अब कभी मन की न मानो।
रहो जग में मोह तज कर सभी प्रभु की वस्तु जानो।
व्यर्थ असत् के संग से अब भिखारी होते न रहना।।

तीन गुण के साथ ही जग में प्रऔति कुछ कर रही है।
तत्व के आश्रित निरन्तर रूप अगणित धर रही है।
'पथिक' कर्तापने का अब भार तुम ढोते न रहना।।

गुरु महिमा 150

जब हम ज्ञान प्रकाश न पाते ! पथ में चलते गिर गिर जाते।

अन्धकार में रत्न समझकर कंकड़ पत्थर ही चुनते हैं।
मूल्य न मिलता जब उनका कुछ तब हम अपना सिर धुनते हैं।
काल कर्म को दोष लगाते ! जब हम ज्ञान प्रकाश न पाते।।

मिले हुए घर धन स्वजनों को बिना बिचारे अपना कहकर।
भोग जनित सुख के पीछे ही जीवन में अगणित दुख सहकर।
लोभ मोह अभिमान बढ़ाते ! जब हम ज्ञान प्रकाश न पाते।।

अविनाशी अपना जीवन है हम कहते हैं मरना हमको।
देख न पाते अपने सन्मुख जो कुछ भी है करना हमको।
यद्यपि गुरु जन हैं समझाते ! जब हम ज्ञान प्रकाश न पाते।।

सुख में हम सेवा कर सकते पर बन जाते उसके भोगी।
दुख में त्याग और तप द्वारा हो सकते हैं सुन्दर योगी।
किन्तु समय खोकर पछताते ! जब हम ज्ञान प्रकाश न पाते।।

निज स्वरूप को जान न करके मुग्ध हुए नश्वर काया में।
मैं मेरी कह कह कर नटवत् नाच रहे हरि की माया में।
अनजाने ही कष्ट उठाते ! जब हम ज्ञान प्रकाश न पाते।।

जो अज्ञान विनाशक है वह ज्ञान स्वरूप हमारा गुरु है।
जिससे हमको गुरुता मिलती अन्तिम यही सहारा गुरु है।
वही 'पथिक' हम ठोकर खाते ! जब हम ज्ञान प्रकाश न पाते।।

प्रेम तत्व 151

अब अपने को हमसे छिपाना न स्वामी,
भूले हुये को भुलाना न स्वामी।।
मुझे मूर्ख चंचल प्रमादी समझकर,
औपा दृष्टि अपनी हटाना न स्वामी।।
यही धुन है निष्काम प्रेमी बनूं में
परीक्षा कठिन कोई लेना न स्वामी।।

यह मन है महानीच पापी हमारा
प्रलोभन सुखों के दिखाना न स्वामी।।
मैं दुर्बल हूँ पथ में कहीं न गिर जाऊँ
बचाने में देरी लगाना न स्वामी।।
बहुत सो चुके मोह निद्रा में अब तो
जगा कर 'पथिक' को सुलाना न स्वामी।

प्रेम तत्व 152

प्रेम ही है इस जग में सार, प्रेम वश प्रभु लेते अवतार।
प्रेम बिन पूर्ण नहीं होते, प्यार सम्मान दान उपकार।
प्रेममय ही हो जायें हम, आज आनन्द मनायें हम।।
ध्यान से देखें सब तन को, विचारों को चंचल मन को।
नहीं दिखता है कुछ अपना, हटाते ही अपने पन को।
'पथिक' क्या बने बनायें हम आज आनन्द मनायें हम।।

प्रेम तत्व 153

कल्याण दुःखी जीवन का बस भगवान औपा से ही होता।
जिससे भय भ्रान्ति मिटा करती वह ज्ञान औपा से ही होता।।

जिससे निज दोष दिखा करते, पापों अपराधों से डरते।
उस सद्विवेक का प्रेम सहित सम्मान औपा से ही होता।।

शीतलता जिससे आती है सारी अतृप्ति मिट जाती है।
वह नित्य प्राप्त है प्रेम सुधा पर पान औपा से ही होता।।

यद्यपि है सुलभ साधन, सब साध न पाते साधक जन।
जो जड़मय है वह चिन्मय हो, वह ध्यान औपा से ही होता।।

वह औपा निरन्तर रहती है कुछ भी न किसी से चहती है।
हम 'पथिक' उसे देखें ऐसा उत्थान औपा से ही होता।।

प्रेम तत्व 154

कहीं भी चैन जो लेने न दे वह चाह सच्ची है।
रहे उनकी फिकर हर दम यही परवाह सच्ची है।।

इसी को हम असर समझें कसर बिल्कुल न रह जाये।
विरह का दर्द भड़काती रहे वह आह सच्ची है।।

बहुत कुछ पाठ पूजा और तप व्रत करके यह समझे।
विकल होकर के रोना ही मिलन की राह सच्ची है।।

यहाँ जीते हुए ही मुक्ति मिलती मौत मरती है।
ये पहुँचे प्रेमियों की ही कहीं अफवाह सच्ची है।।

कहीं बाहर न भटको अब तो खोजो उनको अपने में।
'पथिक' यह देह मन्दिर और दिल दरगाह सच्ची है।।

प्रेम तत्व 155

जिसे जाना है भव से पार, प्रेम से प्रभु को भजो।
जो है सब जग का परमाधार, प्रेम से प्रभु को भजो।।

प्रेमियों के प्रभु सदा भूखे प्रेम भाव के हैं।
इसके ही बस किन-किन से मिताई की।
भोजन जनकपुर के भी न सराहे कभी।
भीलनी के बेरों की है कितनी बड़ाई की।
फल छिलके और शाक कौन-सा थे स्वाद लिये।
जेहि हेतु विदुर के घर पहुनाई की।
विप्र सुदामा घर सम्पत्ति अतुल कर।
चावलों की भर-भर मुट्ठियों सफाई की।
छोड़ कर मन के सारे विकार प्रेम से प्रभु को भजो ।।जिसे0।।

यूँ तो दीनबन्धु को पुकारते हैं सभी भक्त।
किन्तु गजराज की पुकार कुछ और थी।
विपद समय में दुःखी रोते हैं प्रभु से पर।
दीन द्रौपदी की अश्रुधार कुछ और थी।
ध्रुव प्रहलाद और शबरी विदुर आदि।
इनकी लीलाओं की बहार कुछ और थी।
सूरदास तुलसी जी मीरा आदि भक्तन के।
विरही हृदय की यादगार कुछ और थी।
सबसे मन को हटा बार-बार, प्रेम से प्रभु को भजो ।।जिसे0।।

उस भक्त व्याध में था आचरण कौन वह।
जिस पुण्य बल द्वारा पावन सुजान था।
विदुर शबरी की जाति पांति कौन सी थी।
प्रभु के बुलाने का अनोखा अभिमान था।
कौन सी थी आयु भला ध्रुव ऐसे बालक की।
पथिक अटल पद पाया वरदान था।
गज अरु गीध अन्त क्षण अजामिल देखो।
सबके हृदय में प्रेमभाव ही प्रधान था।
चाहे आये विपत्ति हजार, प्रेम से प्रभु को भजो ।।जिसे0।।

कामना यही हो और कामना न रह जाये।
सदा होके निष्काम जीवन बिताओ तुम।
प्रेम सिन्धु में उन्हीं के यह मन मीन सा हो।
उन्हें छोड़ अन्य कहीं जीवन न पाओ तुम।
उनको ही देखो और उनकी ही सुनो बात।
सभी भाँति उनमें ही आनन्द मनाओ तुम।
मोह ममता को छोड़ भोगों से मन को मोड़।
प्रभु को ही ध्याओ प्रभुमय बन जाओ तुम।
पथिक जीवन में यही है सार प्रेम से प्रभु को भजो ।।जिसे0।।

प्रेम तत्व 156

प्रियतम का तब पाना कठिन है।।
जब अभिमान मिटाना कठिन है।।

जिसके जीवन में दुःखदायी दोषों का ही त्याग न होता।
उसके उर में प्रियतम के प्रति काम शून्य अनुराग न होता।।
तब तो ध्यान लगाना कठिन है।।प्रियतम0।।

भोग जनित सुख की आशा से बंधे हुये हैं प्राणी जग में।
सदविवेक बिन देख न पाते कष्ट उठाते हैं पग-पग में।
श्रद्धा बिना समझाना कठिन है।।प्रियतम0।।

जहाँ चैन आती रहती है, समझो सच्ची चाह नहीं है।
सच्ची चाह हुये बिन मिलती सत्य प्रेम की राह नहीं है।।
प्रीति को पूर्ण बनाना कठिन है।।प्रियतम0।।

जो आस्तिक प्रेमी कहला कर चिन्ता करता है तन धन की।
जो स्वामी का सेवक होकर पूर्ति चाहता अपने मन की।।
'पथिक' सुपथ में आना कठिन है।।प्रियतम0।।

प्रेम तत्व 157

यह प्रेम पंथ ऐसा ही है, जिसमें सब कोई चल न सके।
कितने ही बढ़े थके फिसले, कुछ आगे गये सम्हल न सके।।

जो कुछ न चाहते हैं जग में, वह कहीं रुकते है जग में।
है सुन्दर सांची प्रीति वही, जो उर से कभी निकल न सके।।

वे प्रेमी ही अधिकारी हैं जो इतने धीरजधारी हैं।
चाहे कितना ही दुःख आये तन जाये पर प्रण टल न सके।।

वे मिलते सब कुछ खोने से, उर का मल धुलता रोने से।
प्रियतम का वह प्रेमी कैसा, जो बिरह अग्नि में जल न सके।।

जो भोग सुखों का त्यागी है, प्रभुता से पूर्ण विरागी है।
वह 'पथिक' पहुँच पाता जिसको यह मन की माया छल न सके।।

प्रेम तत्व 158

वह जीवन क्या जिस जीवन में जीवन को पूर्ण बना न सके।
वह अज्ञान अभिमानी है जो मन का मोह मिटा न सके।।

कोई बल-मद में फूल रहे, ऊँचे पद पाकर झूल रहे।
लेकिन वह शक्ति निरर्थक है, जो काम किसी के आ न सके।।

जो भ्रमवश भोगासक्त बने, जो अपने मन के भक्त बने।
विषयों से यदि न विरक्त बने, सतपथ में पैर बढ़ा न सके।।

जिस संगति से सद्ज्ञान न हो, कर्तव्य धर्म का ध्यान न हो।
हम उसे सुसंगति क्यों समझें, जो हमें प्रकाश दिखा न सके।।

मिटती है जिससे भ्राँति नहीं, मिलती है जिससे शान्ति नहीं।
ऐ 'पथिक' प्रेम का पथ वह क्या जो प्रियतम तक पहुँचा न सके।।

प्रेम तत्व 159

वहीं सुलभ भगवान होता।।
किसी बहाने प्रीतिपूर्वक जब उसका आवाह्न होता।।

जिसकी जग में रही न आशा भक्ति योग की ही अभिलाषा।
प्रेम भाव से जब उसका ही निशिदिन चिन्तन ध्यान होता।।

जिसमें सुन्दर भाव तरलता, सहिष्णुता सन्तोष सरलता।
दया क्षमा करुणा से रंजित जहाँ स्वतंत्र विधान होता।।

सदा अतिथि सत्कार जहाँ है सबके प्रति शुचि प्यार जहाँ है।
जहाँ सर्वहितकर प्रवृत्ति में भी निवृत्ति का भान होता।।

जिसका है सेवामय जीवन भोग सुखों से अति विरक्त मन।
जिसकी संगति से मानव का निश्चित अभ्युत्थान होता।।

जहाँ विरह में आँसू बरसें, व्याकुल हृदय दरश को तरसे।
जब वियोग में भी स्वरूप से अभिन्नता का ज्ञान होता।।

अग्नि तत्व सर्वत्र व्याप्त है, घर्षण बिन होता न प्राप्त है।
इसी भाँति उस व्यापक हरि का जहाँ सतत् गुणगान होता।।

तन धन में न जहाँ ममता है स्वार्थ रहित जिसमें समता है।
'पथिक' शान्ति पद वह पाता है जिसका लक्ष्य महान् होता।।

प्रेम तत्व 160

सदा प्रेम में आते प्रभु तुम, सब कुछ देते जाते प्रभु तुम।
तुम ही परम सुहृद सुखकारी, सबके प्रिय तुम हृदय बिहारी।
बिगड़ी दशा बनाते प्रभु तुम, सदा प्रेम में आते प्रभु तुम।।

निर्विकार तुम शान्तिधाम हो, भक्तिदाता मुक्तिदाता पूर्णकाम हों
संशय शोक मिटाते प्रभु तुम, सदा प्रेम में आते प्रभु तुम।।

तुम ही गुणमय गुणातीत तुम, पतित उदारक अति पुनीत तुम।
अन्तर तिमिर हटाते प्रभु तुम, सदा प्रेम में आते प्रभु तुम।।

तुम अनित्य में नित्य प्रकाशित, तुममें सारा जड़जग भासित।
सोये 'पथिक' जगाते प्रभु तुम, सदा प्रेम में आते प्रभु तुम।।

प्रेम तत्व 161

अब स्वामी से मोरी लगन लागी।।
बिन दरशन मोहि चैन न आवे विरह विथा अति तन जागी।
मन थिर नहीं प्राण प्रियतम बिन जाऊँ कहाँ कितै भागी।
मिलहि नाथ जब उर अन्तर में सुरति सनेह प्रनय पागी।
यहां प्रेम ही का याचक हूँ और न कुछ हम धन मागी।

प्रेम तत्व 162

विनय मोरि सुनियो हे भगवान।।विनय मोरि0।।

बाह्यान्तर में तुम व्यापक हो, हे जीवन धन प्रान।।विनय मोरि0।।
कब देखूंगा हृदय नयन सों, विकसित पट विज्ञान।।विनय मोरि0।।

विश्व प्रपंच तुम्हारी लीला, तुम अनादि सुस्थान।।विनय मोरि0।।
पथिक तुम्हारा, इसे लखादो, परम प्रेममय ध्यान।।विनय मोरि0।।

प्रेम तत्व 163

विरह की वेदना से हृदय विदीरण हो,
तब तो कछुक शान्ति मनमाहिं दरसत।।

करषत सत्य प्रेम हृदय निकेतन में,
जबकि उसी के लिए यह मन तरसत।।

परसत मन में न किंचित विकार तभी,
निरस विषय रस जानि हिय हरषत।

सरसत तबलौं न आनन्द विविध भांति,
जबलौं पथिक नहिं प्रेम अश्रु बरसत।।

प्रेम तत्व 164

आता नहीं है जबलौं अन्तर में प्रेमोन्माद,
तपता नहीं ये हृदय विरह तपन में।।

तबलौं निरसता ही हिय में बिराजी रहे,
कारण कि दुरवासना है भरी मन में।।

करुणानिधान की हो जबलौं न कृपादृष्टि,
लगता न मन सतनाम की लगन में।

पाता है न सुख शान्ति तबलौं पथिक हाय,
बहते न प्रेम अश्रु जबलौं भजन में।।

प्रेम तत्व 165

इतनी तो दीन पर अपनी सुदृष्टि करो,
महती दया का हूँ भिखारी इसे आने दो।।

मायिक प्रलोभनों से अब न भुलावो नाथ,
सत्यप्रेम हेतु आज आँसू ही बहाने दो।।

अन्तर की कलिल कलुषता मिटाने हेतु,
अपने स्वरूप ज्ञानोदधि में नहाने दो।।

पाने दो ये पथिक को जीवन प्रकाश नित्य,
सच्चिदानन्द निज रूप में समाने दो।।

प्रेम तत्व 166

प्रभु पतित उबारनहारे-अब मेरी भी सुख लेना।।

किस बिधि से तुमको पाऊँ। मैं कहां खोजने जाऊँ।
वह प्रेम कहाँ से लाऊँ। जिसके बल तुम्हें मनाऊँ।
अन्तर की जानन वारे। सत ज्ञान बुद्धि बल देना।।

माया बस फिरैं भुलाने। मन अपनी ही हठ ठाने।
कछु योग ध्यान नहिं जाने। कैसे तुमको पहिचाने।
हम बहुत यतन कर हारे-अन्तर अज्ञान मिटै ना।।

बिगड़ी मम तुम्हीं बनावो। अब अधिक न नाथ भुलावो।
पावन सुख रूप दिखावो। आवो प्रभु सत्वर आवो।
हे प्राणाधार हमारे यह विनय मोरि बिसरे ना।।

कब सुदिन सुखद आवैंगे। कल्मष सब मिट जावैंगे।
बस आपही को ध्यावैंगे। आपहि में मिल जावैंगे।
बस आपहि को पथिक पुकारे है और कोई हमरे ना।।

प्रेम तत्व 167

हृदय को हम भूले अज्ञान।
हृदय ही में व्यापक भगवान।।

किन्तु आवरण डालकर स्वयं।
भ्रमित भूला हूँ बन अनजान।।

बहुत कुछ सुनने पर भी यहाँ।
न सोचा समझा कुछ भी ज्ञान।।

कि जितने जग में विस्तृत रूप।
सभी के अन्तर में भगवान।।

स्वात्ममय मानूँ जगदाकार।
अहा कब होगा ऐसा ध्यान।।

अरे मेरे अन्तर के देव।
तुम्हीं में हो मन का अवधान।।

करो पावन प्रभु मेरा हृदय।
और दे दो स्वप्रेम का दान।।

तुम्हीं से है ये आशा नाथ।
खोल दो अन्तरपट विज्ञान।।

सुनो प्रभु करुण कथा से भरी।
पथिक की आज बेसुरी तान।।

प्रेम तत्व 168

कुलज़्मेइश्क में जो खुद को महू कर पाता।
उसको दुनियां में फिर अरायार कब नज़र आता।।

गर्चे होते न तेरे चुगुलख़ोर या कि रक़ीब।
राहेग़फलत में तू जाने कहाँ किधर जाता।।

लग़जिसें भी तो तेरी मेअराज चढ़ने की।
जो उनके अलम से दानिश में होश आ जाता।।

मुजतरिब तपिश से होता न जो तू गाह कहीं।
लुत्फसाये में बैठने का भला क्या पाता।।

नजात असना में हासिल है मंज़िले मक़सद।
पथिक तौहीद तसव्वुफ़ से जो समा जाता।।

प्रेम तत्व 169

प्रेम के अनुपम मनोहर रंग हैं।
विविध अभिनय रूप से वै संग हैं।।

अहा क्या ही मनोरम आनन्द है।
उभयकर बिन दृढ़ पकड़ का फन्द है।।

मुख रहित संलाप के शुचि भाव में।
नयन रहित सुदृष्टि के अपनाव में।।

शब्द के बिन शब्द कैसे आ रहे।
चित्त रहित विचार चित ले जा रहे।।

मौन भाषा में हृदय की मृदु व्यथा।
वेदना द्वारा हुई अंकित कथा।।

उष्णता से रहित प्रणय प्रकाश में।
लीन हो जाती निराशा आश में।।

अन्धकार विहीन तम की रम्यता।
पंख रहित उड़ान की उपशम्यता।।

अंग रहित प्रगाढ़ आलिंगन प्रदान।
कथन बिन हृद कथामृत का श्रवन पान।।

क्या अपूर्व वियोग का ये योग है।
काम रहित सुप्रीति का उपभोग है।।

कथन करने हेतु वाणी मौन है।
प्रगट करदे भेद को वह कौन है।।

शुचि मृदुस्मित अरुण अधरों से कभी।
झांकते तुम प्रगट हो जाते तभी।।

नयन के मृदु हास्य में तुम खिल उठे।
देखते ही रूप अन्तर हिल उठे।।

प्रगट हो सौन्दर्य के शुचि वेष में।
मोह लेते हृदय को निर्देश में।।

धन्य है महिमा तुम्हारी क्या कहैं।
है नहीं कुछ बिन तुम्हारे क्या चहैं।।

हो अरूप छिपे हुये तुम ओट में।
नाम रूपों के सुरम्य प्रकोट में।।

सामने आते तुम्हें पाते नहीं।
तुम जहाँ होते वहाँ आते नहीं।।

भूल जाते हम वहाँ तुम हो जहाँ।
जानते हैं हम यहाँ तुम हो कहाँ।।

पथिक इतनी खोज ही में खो रहे।
तुम निकट से भी निकट तुम हो रहे।।

तत्वमसि का गान आया ध्यान में।
पथिक के अन्तर हृदय में प्रान में।।

प्रेम तत्व 170

जबकि असंग एक शुद्ध-बुद्ध नित्यमुक्त।
साक्षी निर्विकार परमात्मा को माना है।।

तब पाप पुण्य आदि सुख अरु दुःख कहाँ।
ये तो सब माया औत खेल मन माना है।।

देह मन प्राण नहीं बुद्धि अहंकार नहीं।
सबसे अतीत होके सबको भुलाना है।।

आना है न जाना है न पाना है कुछ भी यहाँ।
प्रेम में समाना पथिक प्रेम हो जाना है।।

प्रेम तत्व 171

इन नयनों में नटवर समाय रहे री।।

जागत में छिनहू नहिं भूलत
सोवत अपने दिखाय रहे री।।

दुःख सुख हानि लाभ वाको सम
नर्कहु स्वर्ग बनाय रहे री।।

रूप कुरूप शुभाशुभ में निज
सुन्दरता दरसाय रहे री।।

जित देखहिं तितही वाको प्रभु
सुख सम्पति सरसाय रहे री।।

प्रियतम में तन्मय मन प्रमुदित
रोम रोम हरशाय रहे री।।

बयन नयन लखि पथिक विमोहित
प्रेम सुधा बरसाय रहे री।।

प्रेम तत्व 172

सुदिन बीत रहे प्रीतम बस कर पायो ना।।

अन्तर अनुरक्ति नहीं करन की कुछ शक्ति नहीं।
चरनन में भक्ति कहीं धर पायो ना।।
सुदिन बीत रहे0।।

ध्याऊँ कस जीवन धन रहती अन्तर अनबन।
अब तक यह चंचल मन मर पायो ना।।
सुदिन बीत रहे0।।

परत नहीं कल निशि-दिन हृदयनाथ दर्शन बिन।
पापों का अबतक रिन भर पायो ना।।
सुदिन बीत रहे0।।

तब तक ही है भवभय मिलत न सुख शान्ति निलय।
जब तक हरि पथिक हृदय-हर पायो ना।।
सुदिन बीत रहे0।।

प्रेम तत्व 173

अपने प्यारे से जिनकी है लागी लगन।
फिरते रहते सदा मस्त दीवाना बन।।

कभी रोना कभी हंसना गाना कभी।
वो सदा प्रेम उन्माद में हैं मगन।।

भूलता खान औ पान विश्राम भी।
जबकि उठती विरह की हृदय में जलन।।

कोई कुछ भी कहे एक लगती नहीं।
वहाँ तो रम रहे बस वहीं प्राणधन।।

बावले प्रेम के वे छके से फिरैं।
दिख रहे आँसुवों से ही भीगे नयन।।

छुट गये साज श्रंगार सुध बुध नहीं
रहें तन मन से उनके पथिक अरपन।।

प्रेम तत्व 174

सजनि पराई पीर कोई जानै ना।।

दिल जानै या दिलबर जानै।
और तमाशेगीर कोई जानै ना।।

तरस भरी चितवन की करुणा।
बहत रहत दृग नीर कोई जानै ना।।

इक आशा लालसा चाह इक।
किहि विधि करत अधीर कोई जानै ना।।

बेसुध मगन लगन इक लागी।
बिरहाकुल गम्भीर कोई जानै ना।।

एकहि नाम ध्यान इक गायन।
एक बसी तस्वीर कोई जानै ना।।

जाके लगे पथिक सोइ जानै।
और प्रेम को तीर कोई जानै ना।।

प्रेम तत्व 175

हे हृदय नाथ जीवन प्राण आओ।
भक्त भावन प्रभो भगवान आओ।।

रह न जाये जगत की कहीं वासना।
तुमको ध्याऊँ सदा वो ही ध्यान आओ।।

अब भुलाना न मुझको ये संसार में।
मन में अपनाहि दो अवधान आओ।।

बस प्रभू प्रेम का ही दीवाना रहूँ।
रात दिन गाऊँ मैं नाम गान आओ।।

वो हृदय नयन दो तुम्हें देखा करूँ।
फिर न भूलूँ कहीं दिव्य ज्ञान आओ।।

आपका ही पथिक है भिखारी बना।
नाथ दे दो इसे प्रेम दान आओ।।

प्रेम तत्व 176

इतनी दया ये कहां कम है
जो रात-दिन नाम को गाया करूँ।।

प्यारे के वियोग ही का योग हो
कभी भूल से भी न भुलाया करूँ।।

दर्शन नही ंतो प्रेम वेदना दें
कभी आँखों से आँसू बहाया करूँ।।

पथिक का भी सुभाग्य उदय होगा
इसी भाँति से आपको ध्याया करूँ।।

प्रेम तत्व 177

हम आपही की शरणागत हैं,
प्रभु योहीं इसे भरमावो नहीं।।

कितने युगों से हम भूल रहे,
नाथ आप भी यूँ फुसलावो नहीं।।

औपया इस प्रेम ही का दान दो
मेरे प्राणेश देरी लगावो नहीं।।

तन्मयता पथिक की आप में हो,
आपका नाम लूँ तरसावो नहीं।।

प्रेम तत्व 178

निकलती हैं क्या-क्या सदायें तुम्हारी।
ये किसलिये हैं अदायें तुम्हारी।।

बजात अपने में कैसा पर्दा बनाया।
तुम्हीं को ये सूरत छिपायें तुम्हारी।।

खुला राज बातिन तुम्हारा तुम्हीं से।
हकीकत ये किससे बतायें तुम्हारी।।

यहां सारी दुनियां की ये सूरतें सब।
शकल आईना बन दिखायें तुम्हारी।।

मेहर माह तारे जिया के हो अफगन।
ये सनअत निशानी जतायें तुम्हारी।।

नहीं दूसरा कोई यहाँ तुम्हीं तुम हो।
पथिक सब तुम्हारे छटायें तुम्हारी।।

प्रेम तत्व 179

ऐ दिल जो तू आशिक है, फिर क्या कहीं घबराना।
सीखो अभी तुम चलकर, जीते हुए मर जाना।।

मुश्किल है राहे उल्फत, चल पाता जो कादिर हो।
आसान न समझो तुम, दिलबर वसाल पाना।।

तालिब को तलब हक में, रोने पे ही मजा है।
गम खाना ही खाना है, और घर बना वीराना।।

माशूक मै मिट जाना ही, सच्ची मुहब्बत है।
देखो शमा में जलकर, बतलाता है परवाना।।

अबदी वही पथिक हो, जो मौत जिन्दगी में।
हैं देखते आंखों से खुद को फना हो जाना।।

प्रेम तत्व 180

दर्दे उल्फत दिल से मिट जाये नहीं।
रूबरू जब तक सनम आये नहीं।।

इससे बेहतर दिल की तसकीं के लिये।
शक्ल दीगर और दिखलाये नहीं।।

बेकरारी ही तुझे देती करार।
नगमें दिलकश राग कुछ भाये नहीं।।

अश्क पुर हों चश्म आहें साथ हों।
इस तसव्वर में कि वो आये नहीं।।

फुरकते तनहाई में जलता जिगर।
पथिक जो जी खोल रो पाये नहीं।।

प्रेम तत्व 181

किस तरह हम उनको पायें देखना है।
अभी वह क्या क्या दिखायें देखना है।।

यास हसरत सोज से माजूर दिल पर।
सरीहन कब रहम लायें देखना है।।

मेरी किस्मत के सफह वो देखते हैं।
नतीजा फिर क्या सुनायें देखना है।।

वो समा जायें नजर में फिर कहां क्या।
उनकी ही प्यारी अदायें देखना है।।

दिल में दिलबर का न हो दीदार जब तक।
पथिक तब तक ही जफायें देखना है।।

प्रेम तत्व 182

मालूम हुआ मिलना तेरा आसान नहीं है।
है कौन जो राहे उल्फत में हैरान नहीं है।।

राये न गमे हिज्र में तो कुछ लुफ्त ही नहीं।
आशिक कैसा जो जी जां से कुरबान नहीं है।।

अफसोस रन्जो यास से जायल दिलफगार को।
प्यारे की लापरवाही पर अरमान नहीं है।।

जो अपनी जिन्दगी में ही मर कर न दिखा दें।
तालिब का तब तक तुमको इतमीनान नहीं है।।

पा सकते नहीं दिलबर को होकर भी अनकरीब।
ऐ पथिक कि जो दिल दुनियां से वीरान नहीं है।।

प्रेम तत्व 183

ऐ प्यारे मेरी ये इल्तिजा तेरा ही दीवाना रहूँ।
मिलने को तेरे ही इश्क में मानिन्द परवाना रहूँ।।

तेरे तसव्वर फैज से ये मर्जे दुनिया हो अलविदा।
तेरे मए उल्फ़त का मैं खैरात मैखाना रहूँ।।

दिलये वसीयत पाक से तादमे मर्ग जुदा न हो।
तेरी ही हस्ती जलाल से कादिर अजादाना रहूँ।।

ये दिल वो दीमाग जिस्म जां ये चश्म ओ गोश औजुबां
ये इस कदर महजूब हों तेरा ही अफसाना रहूँ।।

हो जायें हकबीना चश्मदिल नज्जारा तेरा हो सूबसू।
हरसत सदाये पथिक की है खिदमत तहे जाना रहूं।।

प्रेम तत्व 184

फुरकते तनहाई में किसको दिखायें दर्दे दिल।
किसके दिल से दिल मिलाकर आजमायें दर्दे दिल।।

क्या करूँ मजमून में आता नहीं रुकती कलम।
खत में दिलबर के यहां गर लिख पठायें दर्दे दिल।।

कोई ढब ऐसी नहीं वो देख लें अब हालेजार।
बस बजरिये अश्क चश्मों से बहाये दर्दे दिल।।

राहे उल्फत तंग में ये सब्र की आवाज है।
दिल ही दिल में अपने दिलबर को सुनायें दर्दे दिल।।

मुत्तसिल जानां के रहकर ही पथिक में जान हो।
तखलिया उल्फत में अपना कब मिटायें दर्दे दिल।।

प्रेम तत्व 185

रहते हैं तसव्वर में वो याद ही करेंगे।
मुमकिन नहीं कि बरहम बरबाद ही करेंगे।।

जो उनके दर पै आया खुशहाल हो गया है।
अपना भी कभी दिलबर दिलशाद ही करेंगे।।

तसकीन दिल यही है आलम-नवाज प्यारे।
ये देख नातवां है इमदाद ही करेंगे।।

तौहीद तसव्वुफ से सुनसान दिल हमारा।
चश्मे-करम से अपनी आबाद ही करेंगे।।

मुर्शद ही रहनुमा है लाहूत के मरकज में।
ये जिन्दगी पथिक की आजाद ही करेंगे।।

प्रेम तत्व 186

दिल में आता है कुछ करार नहीं।
साथ देता है दर्दे जार नहीं।।

जिस तरह चाहें जफायें आयें।
हमें भी कुछ कभी इनकार नहीं।।

यही बदबख्ती जो तसकीं के लिए।
इन्जतारी में अश्कतार नहीं।।

इश्कपुर शैदा तो यूं कहते हैं।
अभी दिल चाह में बीमार नहीं।।

राहे उल्फत में मजा क्या जब तक।
तीर नज़रों से दिलफिगार नहीं।।

पथिक को फुरकते तनहाई में।
दर्द ही है अगर दीदार नहीं।।

प्रेम तत्व 187

हम तो गुदाज़े-इश्क में बीमार हो रहे हैं।
पर मेरे लिए आप यूँ दुश्वार हो रहे हैं।।

आता नहीं करार किसी भी तरह कहीं पर।
मरगूब दिल जो गुल थे वो खार हो रहे हैं।।

हैं लुत्फो जीस्त आता जब दीदये दिल से हीं।
ख्वाबों हजूरी में जिसे दीदार हो रहे हैं।।

फिरदौस भी तसद्दुक हो चश्मे करम पर वो।
जिसके लिए कितने ही इजतरार हो रहे हैं।।

हम भी जयाये हुस्न तुम्हारी कभी देखेंगें।
मायूस न करना अब लाचार हो रहे हैं।।

आलम नवाज तुमसे पथिक की ये इल्तिजा है।
लेंगे तुम्हीं को तेरे तलबगार हो रहे हैं।।

प्रेम तत्व 188

मंज़िले इश्क़ में है सफर कर रहे।
कुछ न पूछो कि कैसे बसर कर रहे।।

अब यहां जिस्मों जां की खबर क्या करें।
हम तो दिलबर के दिल में हैं घर कर रहे।।

यासे हसरत अलम से गमेहिज्र में।
हम चले जा रहे हैं सबर कर रहे।।

आशिके दिल को ये एक न्यामत मिले।
जब कभी अश्कों से चश्म तर कर रहे।।

राहे उल्फत में गर जान जाये तो क्या।
हम बड़े शौक से सर नजर कर रहे।।

दिल से उनका तसव्वर न जाये कभी।
बस इसी पर पथिक हैं गुजर कर रहे।।

प्रेम तत्व 189

मैं न रह जाऊं यहां मुझमें मेरा यार रहे।
जान से दिल से हर इक लमहा यादगार रहे।।

कभी छुट जाय न तेरा वो तसव्वर दिल से।
करार आये जो हर वक्त बेकरार रहे।।

बहक जाये न किसी और कभी दिले नादान।
आशिकी पुर हो कि इस कदर गिरफ्तार रहें।।

सोजे उल्फत कभी बेताबिये बेहद बढ़ जाय।
क्या ही अच्छा हो चश्म तर हों आहे जार रहे।।

है लुत्फेजीरत ये जां हो न जां नवाज के बिन।
जज्ब कामिल के लिए तेरा इन्तिजार रहे।।

इश्क अन्जाम पथिक आशिक से बन माशूक।
महू मुतलक शरूर हो न कुछ इसरार रहे।।

प्रेम तत्व 190

दो प्रेमदान करुणानिधान!

क्षुद्रहमिति में हम फूल रहे, दुःख सुख में किस विधि झूल रहे,
प्राणेश! यहां हम भूल रहे, रचकर अपनी विधि का विधान।।

अब तक अतिशय दुख पाये हैं, प्रभु शरण आपकी आये हैं,
भेंट में स्वयं को लाये हैं, यदि ले लो तुम हे दयामान।।

परमेश प्रभो मेरा तनमन, स्वीकृत हो चरणों में अरपन,
तेरा हो यह क्रीड़ाकानन इसमें तेरी ही छिड़े तान।।

अब इस विधि तुमको चहा करें, बस सदा ध्यान में रहा करें,
नयनों से आँसू बहा करें, दिव्य हों पथिक सर्वांग प्रान।।

दो प्रेमदान करुणानिधान।

प्रेम तत्व 191

तमन्ना ये कि वाहद इश्क से मकदूर हो जाऊँ।
तुम्हारा हूँ तुम्हारे सामने मजकूर हो जाऊँ।।

खुशी है आशिकों की आह में तुम वाह करते हो।
हमें शौक फुरकत में अगर महजूर हो जाऊँ ।

यही अरमान है तुम सामने रहते नहीं जब तक।
दिलो जां से तुम्हारी चाह में बस चूर हो जाऊँ।।

जहां देखूँ तुम्हें देखूँ सिवा तेरे कहाँ क्या है।
जगह वह हो नहीं सकती कि तुमसे दूर हो जाऊँ।।

यही बदकिस्मती मेरी कि तुम बातिन निहाँ होकर।
हमेशा दे रहे धोखा कि मैं मजबूर हो जाऊँ।।

तुम्हारे ही तसव्वुफ से पथिक की इल्तिजा यह है।
कि तुझमें ही फना होकर तुम्हारा नूर हो जाऊँ।।

प्रेम तत्व 192

परम प्रियतम प्रभु सर्वाधार प्रेम का प्यार पा जाऊँ।
अहा फिर क्या! अनुपम आनन्द मुक्ति का द्वार पा जाऊँ।।

सदा तुम तक हो गति निर्बाध यही है इस जीवन की साध।
जीव के मिट जायें अपराध सुलभ अधिकार पा जाऊँ।।

तुम्हारी लीला अलख अपार भुवन मनमोहन लीलाधार।
तुम्हारे छद्म वेश विस्तार मोह का पार पा जाऊँ।।

सृष्टि का तुम देते अवधान तुम्हीं से वृहद विश्व के प्रान।
किसी विधि तेरा केन्द्रस्थान हृदय का द्वार पा जाऊँ।।

युगों से खोज फिरे संसार पथिक पर औपा करो इस बार।
तुम्हारा निरावरण अविकार प्रभो आकार पा जाऊँ।।

प्रेम तत्व 193

आशिक जो कि सच्चे हैं वो क्या नहीं पाते हैं।
जब जान को भी अपनी बाजी में लगाते हैं।।

इस इश्क की मंजिल में हर जा पै ठोकरें हैं।
गिर के वो उठते हैं फिर कदम बढ़ाते हैं।।

दीवाने तलब हक में सुखनींद नहीं सोते।
आहों से जिगर तर कर गम की गिजा खाते हैं।।

वो मस्त अपनी धुन में प्यारे को ढूंढ़ते हैं।
दुनियां में किसी की भी सुनते न सुनाते हैं।।

बस बेकरार रहते दिन रात तसव्वर में ।
वहशी की तरह जब तक रोते कभी गाते हैं।।

आता सरूर उल्फत मतलूबले बातिन में।
जिसको कि पथिक पाकर कुल राज मिटाते हैं।।

भक्तमन संवाद 194

अब और कहाँ जायें, प्रभु आपके गुण गायें।

संसार में सब कुछ के, हे नाथ प्रकाशक तुम।
शरणागतों के रक्षक, हो विघ्न विनाशक तुम।
संगी जनम मरण के, सर्वस्व तुम्हें ध्यायें।।अब0।।

जब तक कि तुममें रहकर, तुमसे बने विमुख हैं।
तब तक सुखों के पीछे, मिलते महान दुःख है।
इस दुर्दशा से हे हरि, अब आप ही बचायें।।अब0।।

हे हृदय निवासी तुम सुधि ले रहे जन जन की।
कुछ करने के पहले ही, सब जानते हो मन की।
तुमसे ही पूरी होती हैं, मेरी कामनायें।।अब0।।

हे दीन बन्धु मेरा, अब किस प्रकार हित हो
बतलाओ वही साधन, जिससे प्रशान्त चित हो
मुझ पथिक के हृदय का, सब भेद भ्रम मिटायें।।अब0।।

भक्तमन संवाद 195

अपना दुःख प्रभु किसे सुनाऊँ ।
तुमही केवल देख रहे हो जो कुछ मैं रोऊँ गाऊँ ।।

इस जग में जब रहना ही है, सुख के संग दुःख सहना ही है ।
यही बता दो हे जीवन धन, किस विधि से अब दिवस बिताऊँ ।।

जब तक यह मोहान्धकार है, दीख न पड़ता कहीं सार है ।
वह प्रकाश दो जिससे अपनी, गति मति सुन्दर शुद्ध बनाऊँ ।।

विघ्न, रोकते राह हमारी, दुर्बल हैं कुछ चाह हमारी ।
ऐसी शक्ति मुझे दो भगवन, जिससे अपने दोष मिटाऊँ ।।

तुमसे ही अनुराग करूँ मैं, सकल कामना त्याग करूँ मैं ।
'पथिक' तुम्हारा होकर अब तो, जैसे भी हो तुमको पाऊँ ।।

अपने अन्तर में कब हे प्रभु, सत्स्वरूप का अवलोकन हो।
कब होगी यह बुद्धि निष्कलुष, कब निर्मल यह मेरा मन हो ।।

माया के प्रपंच विप्लव में, कर्म भोग के भीषण रव में ।
भटक रहा हूँ दुःखप्रद भव में, कब स्वामी संकट-मोचन हो ।।

मिलती शान्ति न भगवन तुम बिन, आयु विगत होती है छिन-छिन ।
चिन्तित रहता हूँ मैं निशिदिन, कब मेरा विरक्त जीवन हो ।।

किस साधन से पायें तुमको, कैसे नाथ रिझाये तुमको ।
प्रियतम भूल न जायें तुमको, चाहे घर हो चाहे बन हो ।।

अब न देव हमको भटकाओ, जन्म मरण का त्रास मिटाओ ।
सत चित आनन्द रूप लखाओ, 'पथिक' पतित के जीवन धन को ।।

भक्तमन संवाद 196

अभिलाष यही निशिदिन, प्रियतम तुम्हें पाऊँ मैं।
जिस भाँति बने तन मन, सेवा में लगाऊँ मैं ।

अपने हृदय मन्दिर में, आसन बिछा श्रद्धा का ।
तुमको बुला-बुला कर, प्राणेश बिठाऊँ मैं ।।

तप त्यागमयी शुचिता से, विमल हृदय होकर ।
कर्तव्य की सुविधि से, श्रृंगार सजाऊँ मैं ।।

अति तरस दीनता से, तल्लीन हुये मन से ।
निस्वार्थ प्रणय भावों की, भेंट चढ़ाऊँ मैं ।।

निज भाग्यवश कहीं भी, जीवन दिवस बिताऊँ ।
पर नाथ तुम्हें दुःख सुख में, भूल न जाऊँ मैं ।।

हूँ 'पथिक' तुम्हारा ही, तुम बिना न कुछ अब चाहूँ ।
निष्काम होके तुममें, आनन्द मनाऊँ मैं ।।

भक्तमन संवाद 197

अधम उधारन मेरे श्याम सुध लेते रहना ।।
भूल न जाना लीलाधाम सुध लेते रहना ।।

नाथ तुम्हारी यदि दाया है, भुला न सकती फिर माया है ।।
हो जाऊँ निर्भय सब ठाम, सुध लेते रहना ।।

परम प्रेममय अन्तर्यामी, अकथ अनोखे सब के स्वामी ।।
मेरे जीवनधन अभिराम, सुध लेते रहना।।

जब अपना मन निष्छल होगा, जहाँ प्रेम का कुछ बल होगा।।
मिलते तभी हो तुम बिन दाम, सुध लेते रहना ।।

'पथिक' आ चुका शरण तुम्हारी यही विनय है भवभय हारी।।
देकर भक्ति इसे निष्काम, सुध लेते रहना ।।

भक्तमन संवाद 198

असफल को प्रभु सफल बनाते, तुमको अब मैंने पहिचाना।
भूले को तुम राह दिखाते, भूल भूल कर तुमको जाना ।।

देख न पाऊँ तुम्हें भले ही, पर मैं तुमसे दूर नहीं हूँ।
तुम सागर मैं हूँ तरंगवत, तुममें ही हूँ जहाँ कहीं हूँ।

तुम ही मेरा चित्त चुराते, अब मायिक सुख में न भुलाना ।।
कैसे मैं उन्मुक्त हो सकूँ रोक रहे हैं स्वरचित बन्धन।

नाथ बता दो ऐसा साधन जीत सकूँ अपना चंचल मन।
तुम ही मेरे दुःख मिटाते और कहीं मेरा न ठिकाना ।।

सभी रूप में तुमको देखूँ, जो कुछ करूँ वही हो पूजा।
जो कुछ बोलूँ वही स्तुति हो, मन को भाये और न दूजा।

तुम प्रियतम हमसे न भुलाते, हमको तो तुम को ही पाना ।।
यही चाह अब शेष रही है, सब चाहों का त्याग करूँ मैं।

हे चिद्घन आनन्दरूप, तुमसे ही दृढ़ अनुराग करूँ मैं।
'पथिक' तुम्हारे ही गुण गाते, जैसे भी हो पार लगाना ।।

भक्तमन संवाद 199

इस दुनियाँ में सार यही है मिल जायें भगवान किसी दिन।।

नाम कीर्तन में या जप में, इन्द्रिय संयम, हठ व्रत तप में।
साधन का आधार यही है, मिल जायें भगवान किसी दिन।।

तीर्थ धाम में दान धर्म में, योग यज्ञ निष्काम कर्म में।
पापों से उद्धार यही है, मिल जायें भगवान किसी दिन।।

चतुर शिरोमणि पण्डित ज्ञानी, निश्चल चित अभ्यासी ध्यानी।
भक्तों का उद्‌गार यही है मिल जायें भगवान किसी दिन।।

अपने सर्वस जीवनधन से, कर्मों से वाणी से मन से।
पथ में 'पथिक' पुकार यही है, मिल जायें भगवान किसी दिन।।

भक्त मन संवाद 200

कब पाऊँ तुमको जीवन धन ।।

रहते हैं तुम बिन बिकल प्रान, भाये न किसी का ज्ञान ध्यान।
आ चुका तुम्हारी शरणागत सर्वस्व तुम्हीं में है अरपन।।

हो रहा आज यह हृदय दीन, तुम अति पावन मैं अति मलीन।
हे प्रभु किस विधि सन्मुख आऊँ, लेकर अपना कलुषित तन-मन।।

अब इतनी कर दो कृपा नाथ, दे दो अपना वह पुण्य हाथ।
जिसका बल पाकर धन्य बनूँ, है अपने मन की यही लगन।।

हे सुन्दर हे प्रेमावतार, हे करुणामय सुन लो पुकार।
मैं भिक्षु 'पथिक' हूँ तेरा ही मिलनाशा में नित रहूँ मगन।।

कब पाऊँ तुमको जीवन धन।।

भक्तमन संवाद आर्त 201

क्या करें भगवन बता दो।
तिमिर घोर दीख रहा है प्रभु मिटा दो।।

दोष अन्तर में भरे हैं, हार कर इनसे डरे हैं।
दुर्दशा हैं कर रहे, इनको हटा दो।।

उम्र बीती जा रही है, मृत्यु सन्मुख आ रही है।
कुछ न कर पाया, तुम्ही बिगड़ी बना दो।।

और अब मैं कहाँ जाऊँ, निज व्यथा किसको बताऊँ।
दया निधि करके दया, दर्शन दिखा दो।।

सुनी है महिमा तुम्हारी, तुम्हें कहते दुखहारी।
शरण हूँ मैं 'पथिक' मेरा भय भगा दो।।

भक्त मन संवाद 202

किस तरह मन को मनाऊँ।
मलिनता अति छा रही कैसे मिटाऊँ।।

पूर्व संचित वासनायें, नित्य नूतन आयें जायें।
बंधा मायापाश में अति दुःख उठाऊँ ।।किस0।।

विजयदायिनि शक्ति के बिन, प्रभुचरण में भक्ति के बिन।
मोहवश उलझनों में जीवन बिताऊँ ।।किस0।।

व्यर्थ बीते जा रहे दिन, बताओ हे नाथ तुम बिन।
शून्यवत संसार में किसको बुलाऊँ ।।किस0।।

तुम्हीं हे प्रभु खबर लेना, सुखद शान्ति सुज्ञान देना।
मैं 'पथिक' कैसे तुम्हारे पास आऊँ ।।किस0।।

भक्तमन संवाद 203

किस विधि ज्ञान चक्षु को खोलें।

हे प्रभु हमको यही बता दो, अन्तस में आलोक दिखा दो।
कब तक अन्धकार में रहकर, सत परमार्थ टटोलें।।

जो कुछ इन आँखों से देखा, वह सब विद्युत की सी रेखा।
है प्रतीति पर प्राप्ति कुछ नहीं किस से किस को तोलें।।

सावधान रहकर अनर्थ से, शक्ति बचाये सदा व्यर्थ से।
मोह लोभ से सने हुए निज, अन्तस्तल को धो लें।।

दान त्याग तप से न डरें हम, जग प्रपंच से अब न मरें हम।
बचें पाप से पुण्य करें नित, सत्य मधुर प्रिय बोलें।।

जग में बन्धन दुःख न सहें हम, निज में ही सम शान्त रहें हम।
'पथिक' विनाशी का संग तजकर अविनाशी संग हो लें।।

भक्त मन संवाद 204

खोजन हारा खोज लगाये, तुम मुझ में हो मैं तुममें हूँ।
जो जाने सोई यह गाये तुम मुझ में हो मैं तुममें हूँ।।

कहाँ-कहाँ पर भूले भटके, बंद रहे पर अंतर घट के।
अब तक हम यह समझ न पाये तुम मुझ में हो मैं तुममें हूँ।।

खोज फिरे मंदिर मूरत में मुग्ध हुए अपनी ही कृति में।
दृष्टि खुली तो यही दिखाये तुम मुझ में हो मैं तुममें हूँ।।

कोई तुमको निर्गुण माने कोई तुम को सगुण बखाने।
अकथ विश्वमय रूप बनाये तुम मुझ में हो मैं तुममें हूँ।।

तुम ऐसे हो या वैसे हो, जो कुछ भी हो या जैसे हो।
'पथिक' यही आनन्द मनाये तुम मुझ में हो मैं तुममें हूँ।।

भक्तमन संवाद 205

जो जन चलते राह विरह की ।
किसहू विधि कहुँ चैन न पावत, रह रह निकसत आह विरह की।
मन झुलसे तन तपै निरन्तर, उठत हिये में दाह विरह की।
भूख मरै नींदहु हरि जावै, उपजत विथा अथाह विरह की।
सुध बुध तजि गावत हूँ रोवै, अति दुःख भरी कराह विरह की।
जीवत मारै मारि जियावै, इक आशा इक चाह विरह की।
'पथिक' विरह गति विरही जानत, उनको ही परवाह विरह की।

भक्तमन संवाद 206

तुम साधे हुए अगाध मौन, हो सबके अन्तर में बैठे।
कोई तुमको बाहर खोजे, कोई जग के भीतर बैठे।
तुम सबको नहीं दीखते हो, पर सबको राह बताते हो।।

तुममें ही प्रलय सृजन होता तुममें प्राणी जगते सोते।
तुमसे कर्मों का फल पाकर कोई हँसते कोई रोते।
तुमही तो अपनी माया में सारा संसार नचाते हो।।

कितने ही असुरों के समान, यूं कहकर के ललकार रहे।
ईश्वर है तो सन्मुख आकर, अपने होने की बात कहे।
तुम सुन लेते हो सबकी, पर सबको अपनी न सुनाते हो।।

कोई तुमको पाना चाहे तन मन व्रतादि साधन बल से।
पर आगे आता अहंकार तुम सब देखा करते छल से।
फिर जिसे चाहते उसी पथिक को अपना भेद लखाते हो।।

भक्तमन संवाद 207

तुमने मुझको कभी न छोड़ा, मैंने ही तुमसे मुख मोड़ा।
भोग सुखों में मुग्ध हुआ मन, तुम्हें भूलकर हे जीवनधन।
परम तृप्ति की आशा लेकर नश्वर जग से नाता जोड़ा।।

मिले हुये शुभ अवसर खोकर, मैं अक्षम्य अपराधी होकर।
देखूँ एक तुम्हीं को ऐसा, कभी कृपा का तार न तोड़ा।।
क्या मुख लेकर मैं कुछ मागूँ, दोष बहुत है किस विधि त्यागूँ

तुम तक आने में मेरे ही, पाप बन रहे पग के रोड़ा।।
जहाँ कहीं आता जाता हूँ, अपने को तुममें पाता हूँ।
इतना अतुलित प्यार 'पथिक' पर, जितना भी समझें वह थोड़ा।।

भक्तमन संवाद 208

तुम्हीं में यह जीवन जिये जा रहा हूँ।
जो कुछ दे रहे हो लिये जा रहा हूँ

तुम्हीं से चला करती प्राणों की धड़कन।
तुम्हीं से सचेतन अहंकार तन मन।
तुम्हीं में यह दर्शन किये जा रहा हूँ।। जो कुछ0।।

असत् के सदा आश्रय हो तुम्ही सत्।
तुम्हीं में विषय विष तुम्हीं में है अमृत।
पिलाते हो जो कुछ पिये जा रहा हूँ।। जो कुछ0।।

जहाँ भी रहूँ ध्यान में तुमको देखूँ।
तुम्हीं में हूँ ज्ञान में तुमको देखूँ।
'पथिक' मैं यह अरजी दिये जा रहा हूँ।।जो कुछ0।।

भक्तमन संवाद 209

देख रहा हूँ ध्यान लगाये, तुम मुझ में हो मैं तुम में हूँ।
जो जाने सोई यह गाये, तुम मुझ में हो मैं तुम में हूँ।।

कहाँ-कहाँ पर भूले भटके, बन्द रहे पट अन्तर घट के।
जब तक हम यह समझ न पाये, तुम मुझ में हो मैं तुम में हूँ।।

कोई तुमको निर्गुण माने, कोई तुमको सगुण बखाने।
अकथ विश्वमय रूप बनाये, तुम मुझ में हो मैं तुम में हूँ।।

तुम ऐसे हो या वैसे हो, जो कुछ भी हो या जैसे हो।
'पथिक' यही आनन्द मनाये, तुम मुझ में हो मैं तुम में हूँ।।

भक्तमन संवाद 210

नमो नारायण नमो नारायण नमो नारायण ही नित गाऊँ।

यही एक अभिलाष हृदय की किस विधि से प्रभु तुम को पाऊँ।
तुममें ही अपने को खोकर, हे प्रियतम तुममय हो जाऊँ।।

तुम्हीं बताओ कौन जतन से पूरी हो यह मेरी आशा।
किस प्रकार के प्रिय शब्दों में, अपने प्रेमोद्गार सुनाऊँ।।

जिन अन्तर की अकथ वेदना, मूक भावनाओं के द्वारा।
कब तक चुपके-चुपके रहकर, कैसे उर की प्यास बुझाऊँ।।

मैं अति दीन मीन अकिंचन, आज क्या करूँ क्या न करूँ मैं।
बोलो किस विधि प्रिय मनमोहन, तुम संग मिलनान्द मनाऊँ।।

किस विधि मुक्त हो सकूँ अब मैं जग प्रपंच के बंधन दुख से।
मुझे वही साधन बतला दो कैसे मन का राग मिटाऊँ।।

नाथ तुम्हारी औपा-किरण से चमक उठे यह मेरा जीवन।
योग्य तुम्हारे बनूँ 'पथिक' मैं तुमको निज सर्वस्व बनाऊँ।।

भक्त मन संवाद 211

प्रभु तुम कब कैसे आते हो।।

क्या हम भी तुमको पायेंगे, अपने उद्गार सुनायेंगे।
यह जीवन पूर्ण बनायेंगे, सब बन्धन दुख मिट जायेंगे।
मेरी इस सहज लालसा को देखें कब सफल बनाते हो।।

अपने में तुमको देखे बिन, बीते जाते हैं जीवन दिन।
पापों अपराधों को गिन गिन, दिखता है पाना बहुत कठिन।
फिर भी हम जैसे हैं हमको, देखें क्या राह बताते हो।।

यह सच है हम में भक्ति नहीं प्रेमी की सी अनुरक्ति नहीं।
भोगों से हुई विरक्ति नहीं, हम हैं अधिकारी व्यक्ति नहीं।
सुनता हूँ सच्चे प्रेमी को ही इच्छित दरश दिखाते हो।।

हम हैं कठोर अति औपण हृदय, पर तुम तो हो अतिकरुणामय।
तुम पापों का कर सकते क्षय, हर सकते हो सब संकट भय।
हम 'पथिक' के लिये अब देखें कैसे क्या रूप बनाते हो।।

भक्त मन संवाद 212

प्रभु तुम साँचे सबके मीत।।

किसी किसी ने तुमको जाना और तुम्हें जैसा भी माना।
भक्तों के भावानुसार बन नित्य निबाही प्रीत।।

तुम रहते हो सत्संग में शक्ति तुम्हारी अंग अंग में।
किन्तु तुम्हें प्रभु पहिचाने बिन हम दुर्बल भयभीत।।

तुममें कुछ भी चाह नहीं है यहाँ चाह की थाह नहीं है।
तुमसे ही सब कुछ पाकर हम गाते सुख के गीत।।

तुम ही दुखियों के दुख हरते तुम पतितों को पावन करते।
नाथ तुम्हारे चिन्तन से ही होता चरित पुनीत।।

तुमने हमको कभी न छोड़ा हमने ही तुमसे मुख मोड़ा।
इसीलिये भूलते भटकते गये बहुत दिन बीत।।

हर लो अब अज्ञान हमारा रहे सदा ही ध्यान तुम्हारा।
देख सके सर्वत्र 'पथिक' हम तुमको मायातीत।।

भक्त मन संवाद 213

प्रभु तुमको न भूलें यही सौभाग्य हमारा है।
तुमने ही तो लाखों को तारा है उबारा है।।

जो अशुभ किया मैंने तुमने न किया कुछ भी।
दुःख उस किये का फल है तुमने न दिया कुछ भी।
जो तुमसे मिल रहा है वह दान ही न्यारा है।।

जो बिगड़ी वो हमसे ही तुमसे नहीं कहीं पर।
तुम तो बनाने वाले हम देखते यहीं पर।
फिर भी मुझे यह अपना अहंकार ही प्यारा है।।

जब भूले हमीं भूले तुमको तुम्हीं में रहकर।
तुमने कभी न छोड़ा हमको अयोग्य कह कर।
बदले के बिना अनुपम यह प्यार तुम्हारा है।।

जो कुछ न कर सके हम या जो रहा अधूरा।
वह सब तुम्हारे बल से होता ही गया पूरा।
ऐसा ही मुझ 'पथिक' को आगे भी सहारा है।।

भक्त मन संवाद 214

प्रभु तुम्हींमय हो रहे हम।।

विमुख हो जड़मय बने थे, मोह दलदल में सने थे।
बुद्धि के आगे घने अज्ञान के बादल तने थे।
आज ज्ञानालोक में, निज कालिमा को धो रहे हम।प्रभु0।।

किस तरह हम शान्ति पाते, क्यों तुम्हारी शरण आते।
स्वयं ही यदि औपा करके तुम नहीं हमको जगाते।
स्वप्न में अटके हुए थे, मोह निशि में सो रहे हम।प्रभु0।।

कुछ न पाया कहीं जाकर, साथ की पूँजी गवांकर।
नहाँ से हम चले थे ठहरे वहीं के वहीं आकर।
अभी तक नितप्राप्त की ही खोज में थे खो रहे हम।प्रभु0।।

इन्द्रियाँ थीं ही बहिर्मुख, मन सदा था चाहता सुख।
उसी सुख के अन्त में हम भोगते आये महा दुःख।
'पथिक' अब आनन्द में हैं जो कभी थे रो रहे हम।प्रभु0।।

भक्त मन संवाद 215

प्रभु मेरा उद्धार करो।।

कितने अभिशापों को लेकर, आया हूँ पापों को लेकर।
बोझिल हूँ, गिर गिर पड़ता हूँ, तुम्हीं उचित उपचार करो।।

तुमसे ही सब कुछ पाता हूँ, खोता हूँ लेता जाता हूँ।
अब जैसे भी मेरा हित हो, इसका तुम्हीं विचार करो।।

मैं अभिमान रहित हो जाऊँ, सत्यज्ञान जिस विधि से पाऊँ।
उस विधि से ले चलो दयामय, अब तो शीघ्र सुधार करो।।

जग से पूर्ण विरक्त बनूँ मैं, नाथ तुम्हारा भक्त बनूँ मैं।
शरणागत मैं दीन 'पथिक' हूँ, सेवा में स्वीकार करो।।

भक्त मन संवाद 216

प्रभु मेरी भी सुध लो।।

सुनता हूँ कि तुम मिलते हृदय की पुकार में।
पूजा तुम्हारी होती है दीनों के द्वार में।
तुम रीझते हो भक्त के भावोद्‌गार में।
मैं क्या करूँ मेरे लिये कुछ साधना बल दो ।।प्रभु मेरी0।।

कोई तुम्हें कहते हैं कि निर्गुण हो निराकार।
कोई तुम्हें हैं मानते ऐश्वर्यमय साकार।
कोई तुम्हारा ध्यान करे लेके कुछ आधार।
करते विभूतियों में कोई तुमको नमस्कार।
कुछ खोज लगाते हैं कि तुम कैसे हो क्या हो ।।प्रभु मेरी0।।

कुछ मानते हैं मन्दिरों में तुमको ही भगवान्।
कुछ मस्जिदों में खोजते हैं तुमको शक्तिमान।
कुछ कहते यह सब झूठ है बस सत्य आत्मज्ञान।
कोई तुम्हें भजते हैं अखिल विश्वरूप जान।
सब कोई विविध भाँति चाहते हैं तुम्हीं को ।।प्रभु मेरी0।।

मुझको भी दो वह शक्ति जिससे हो सकूँ अभय।
निर्दोष होके पा सकूँ आनन्द निरतिशय।
मैं अपने रूप में तुम्हें ही देखूँ सर्वमय।
जैसे हो किसी रूप से मेरी सुनो विनय।
इस 'पथिक' का पतन नहीं अब चाहते हो जो ।प्रभु मेरी0।।

भक्त मन संवाद 217

प्रभु मेरा मोह मिटाओ, मिल जाओ।।

किस साधन से तुम को पाऊँ, क्या लेकर मैं सन्मुख आऊँ।
कैसे तुमको नाथ रिझाऊँ, किन भावों में विनय सुनाऊँ।
देव यही बतलाओ, मिल जाओ।।

तुमही हो जीवन के जीवन, प्राणों के अरु मन के भी मन।
निर्बल के बल निर्धन के धन, तुममें ही है सब कुछ अरपन।
बिगड़ी दशा बनाओ, मिल जाओ।।

वही दृष्टि दो हे करुणामय, अहंभाव तुममें ही हो लय।
मैं तुम में हो जाऊँ निरभय, इतनी स्वामी सुन लो अनुनय।
यह आवरण हटाओ, मिल जाओ।।

यद्यपि दूर नहीं तुम स्वामी, घट घट व्यापक अन्तर्यामी।
अज सच्चिदानन्द गुणधामी दिव्य प्रेममय देव नमामी।
पथिक हृदयधन आओ, मिल जाओ।।

भक्त मन संवाद 218

प्रभु के नाम पै मन को मनाये बैठे हैं।
कभी होगी दया आशा लगाये बैठे हैं।।

बहुत कुछ सोचने पर नहीं कुछ कर पाते।
हमारे पाप ही हमको दबाये बैठे हैं ।प्रभु0।।

देखना है वह हमें किस तरह अपनाते हैं।
धर्म से हीन हैं दुर्गुण छिपाये बैठे हैं।।

अब तो जैसे भी हैं हम शरण पतितपावन की।
तमाम ठोकरें जन्मों की खाये बैठे हैं ।प्रभु0।।

द्वार खोलेंगे कभी देख करके दीन दशा।
'पथिक' अब उनके ही सत्यपथ में आये बैठे हैं।।

भक्त मन संवाद 219

प्रभो अपने मन में बसाऊँ तुम्हीं को, हृदय-धन बिठाऊँ तुम्हीं को।।

यही एक स्वीकार मेरी विनय हो।
विमल हो मलिन मन सदा ध्यान लय हो।
तुम्हीं में हमारा ये जीवन अभय हो।
स्वचित चेतना वृति मति प्रेममय हो।
हर इक स्वास से अब बुलाऊँ तुम्हीं को।प्रभु0।।

दिखाया है मुझको किनारा तुम्हीं ने।

दिया मुझ निर्बल को सहारा तुम्हीं ने।
सुपथ में कुपथ से पुकारा तुम्हीं ने।
जगत् में दयानाथ पाऊँ तुम्हीं को।प्रभु0।।

कहीं भी रहूँ पर रहे ध्यान तुम पर।
निकलते रहें यह विरह गान तुम पर।
रमो प्रान में तुम रमे प्रान तुम पर।
निरन्तर रहे ज्ञान अवधान तुम पर।
सुनूँ मैं तुम्हारी सुनाऊँ तुम्हीं को।प्रभु0।।

तुम्हीं एक हो जीवनधार भगवन।
तुम्हीं प्रेमियों के हो साकार भगवन।
तुम्हीं देखे जाते निराकार भगवन।
तुम्हीं जग के इस पार उस पार भगवन।
'पथिक' के तुम्हीं एक ध्याऊँ तुम्हीं को,
प्रभो अपने मन में बसाऊँ तुम्हीं को।।प्रभु0।।

भक्त मन संवाद 220

प्रभो किस विधि तुम्हें पाऊँ।।
बता दो इस हृदय का अज्ञानतम कैसे मिटाऊँ।।

भरी मन में वासनायें, कामनाओं को जगायें।
उन्हीं की ही पूर्ति सुख के अन्त में अति दुख उठाऊँ।।

दिव्य सद्गुण शक्ति के बिन, सद्विवेक विरक्ति के बिन।
अहंता ममता परिधि में भ्रमित हो जीवन बिताऊँ।।

सरकते जा रहे निशि दिन, आत्म ज्ञान प्रकाश के बिन।
कठिन बंधन ग्रन्थियों में बँधा मन कैसे छुड़ाऊँ।।

दूर किंचित नहीं हो तुम, जहाँ मैं हूँ वहीं हो तुम।
'पथिक' अनुभव हेतु कैसे स्वयं में गोता लगाऊँ।।

भक्त मन संवाद 221

प्रभो तुमसे आनन्द पाते हैं हम।
नित्य आमोद के दिन बिताते हैं हम।।

आपके नाम सुमिरन से गुण ध्यान से।
जन्मों जन्मों की बिगड़ी बनाते हैं हम।।

जो फँसाती है हमको महा मोह में।
उस अविद्या की ग्रन्थी छुड़ाते हैं हम।।

आपके ज्ञान विज्ञान आलोक में।
सारे कल्मष हृदय के मिटाते हैं हम।।

अभी तक तो दुखों में ही रोते रहे।
शरण आकर के सुख गीत गाते हैं हम।।

नाथ अब भव भ्रमण से बचा लीजिये।
'पथिक' जन आपके ही कहाते हैं हम।।

भक्त मन संवाद 222

प्रभो तुम्हीं को अपना पायें, सदा तुम्हारे ही गुण गायें।।

मान रहे थे जिसको अपना, अब जाना वह है सब सपना।
एक तुम्हीं से नेह लगाये।।

तुम्हीं दिखाते चलो नाथ पथ, अधिक नहीं बस एक एक पग।
सकुशल हम तुम तक आजायें।।

रोक न दे हमें प्रगति प्रलोभन, लगा रहे तुममें ही यह मन।
मिटती जायें सब बाधायें।।

जिस प्रकार से मेरा हित हो, वही करो जो तुम्हें उचित हो।
अब यह जीवन सफल बनायें।।

ऐसे हम हो जायें ज्ञानी, रहें न मोह भ्रमित अभिमानी।
हम माया में मन न फँसायें।।

अहंकार यह तुम में खोकर, हे परमेश्वर तुममय होकर।
'पथिक' मुक्ति आनन्द मनायें।।

भक्त मन संवाद 223

प्रभो तुम्हें हम खोज रहे थे, यहाँ स्वयं की खबर नहीं है।
ये आयु कम होती जा रही है, किसी तरह से सबर नहीं है।

कोई कहीं पै मना रहा मन, किसी को प्यारा है अपना तन धन।
बिना तुम्हारी शरण के भगवन, कहीं चैन उम्र भर नहीं है।।

अगर तुम्हें प्रेम से बुलाते, तुम अपने को यूँ छिपा न पाते।
इन आहों से खिंच के आ ही जाते, यही कसर है असर नहीं है।।

कहो किस तरह तुम्हें पुकारूँ, कहाँ प्रेममय वो छवि निहारूँ।
मैं अपना सर्वस तुम्हीं पै वारूँ और किसी विधि गुजर नहीं है।।

यही विनय है न भूल जाऊँ, सभी तरह से तुम्हीं को ध्याऊँ।
'पथिक' तुम्हारा हूँ तुमको पाऊँ, हमें और कुछ फिकर नहीं है।।

भक्त मन संवाद 224

प्रभो माया का तुम्हारी, अकथ यह विस्तार देखा।
दिखाया जिसको तुम्हीं ने, तुम्हें सर्वाधार देखा।

विमुख हो तुमसे विषमता, व्यथामय व्यापार देखा।
जीव को रोते हुये, ढोते हुए दुख भार देखा।

सभी के सम्मुख स्वनिर्मित क्षुद्र इक संसार देखा।
जहाँ निर्भय शान्ति का, मिलता न कुछ आधार देखा।।

जब कि अपने आप पर पा विजय निज अधिकार देखा।
तभी अपने साथ दैवी शक्ति का भण्डार देखा।

आपके प्रति प्रेम का जब प्रवाहित उद्गार देखा।
तभी परमानन्द निधि को हृदय भर साकार देखा।

देह अभिमत छोड़ कर जब ज्ञान से सतसार देखा।
'पथिक' दिव्यालोकमय तब मुक्तिमंदिर-द्वार देखा।।

भक्त मन संवाद 225

प्रियतम दयानिधान तुम्हें हम कैसे पायें।।
भक्तों के भगवान तुम्हें हम कैसे पायें।।

जब कि ध्रुव के समान, तप के लिये शक्ति नहीं।
और शबरी की भाँति भाव नहीं भक्ति नहीं।
मन में मीरा की तरह, धुन नहीं अनुरक्ति नहीं।
त्यागियों की तरह, भोगों से है विरक्ति नहीं।
ऐसे पतित महान्, तुम्हें हम कैसे पायें।।

जगत् को ब्रह्ममय देखें हम में वह ज्ञान कहाँ।
करें विचार तो हैं ऐसे बुद्धिमान कहाँ।
जागते सोते तुम्हें ध्यायें, ऐसा है ध्यान कहाँ।
तुम हो घट-घट में रमे, पर हमें पहिचान कहाँ।
हैं मूरख नादान, तुम्हें हम कैसे पायें।।

कोई दिन रात भजन में समय बिताते हैं।
कोई तप करके मन की वासना जलाते हैं।
कोई हठ से कुछ शक्तियाँ जगाते हैं।
हमीं ऐसे हैं जो कुछ भी नहीं कर पाते हैं।
हो किस विधि कल्याण तुम्हें हम कैसे पायें।।

तीर्थों में गये तुमको वहाँ नहीं पाया।
यज्ञ व्रत दान ने तो स्वर्ग मार्ग दिखलाया।
जिधर देखा उधर ही घोर अंधेरा छाया।
तुम कहीं भी न मिले, मिली तुम्हारी माया।
हुये देख हैरान, तुम्हें हम कैसे पायें।।

तुम्हारी खोज में लाखों यहाँ भटकते हैं।
जिधर ही जाते हैं, उस ओर ही अटकते हैं।
तरह-तरह की ख्वाहिशों में सब लटकते हैं।
घूम फिर करके फिर यहीं पै सर पटकते हैं।
खो करके अभिमान, तुम्हें हम कैसे पायें।।

बहुत से तपसी व्रती सत्य मार्ग भूल गये।
वो सिद्धियों के ही अभिमान में बस फूल गये।
बहुत से जान कर भी, धर्म के प्रतिकूल गये।
कण से पर्वत बने पर्वत से फिर बन धूल गये।
अजब निराली शान तुम्हें हम कैसे पायें।।

तुम्हारी राह में कोई तो सूली चढ़ के चले।
बहुत से वेदों व शास्त्रों को ही पढ़-पढ़ के चले।
गिरे हुये भी उठे जोश में फिर बढ़ के चले।
कुछ तो मत सम्प्रदाय और धर्म गढ़ के चले।
बिरले पाये जान तुम्हें हम कैसे पायें।।

गिरे हुये के लिये तुम ही उठाने वाले।
दुःखों से रोते हैं जो उनको हँसाने वाले।
सदगुरु रूप में सोते से जगाने वाले।
सुन लो भूले हुये को राह दिखाने वाले।
दीन 'पथिक' का गान तुम्हें हम कैसे पायें।।

भक्त मन संवाद 226

प्रियतम मन के चोर तुम्हें मैं कैसे पाऊँ।।

घर बैठूँ या वन को जाऊँ, वस्त्र रंगूँ या खाक रमाऊँ।
होकर भाव विभोर तुम्हें मैं कैसे पाऊँ।।

कौन जतन से बन्धन खोलूँ किस विधि मन के मल को धो लूँ।
चलता नहिं कुछ जोर तुम्हें मैं कैसे पाऊँ।।

किस साधन से नाथ रिझाऊँ मूरख हूँ क्या रोऊँ गाऊँ।
बिना प्रेम की डोर तुम्हें मैं कैसे पाऊँ।।

हमसे तो कुछ बनि नहिं आवे तुम चाहो तो सब बनि जावे।
लखो 'पथिक' की ओर तुम्हें मैं कैसे पाऊँ।।

भक्त मन संवाद 227

प्राण तुम बिन रो रहे हैं।।

हृदय धन तुमको न पाकर, शून्यता की शरण जाकर।
मनो मन्दिर में तुम्हारी, मानसिक प्रतिमा बिठाकर।
इस सुलभ सद्भाव से, निज कलुषता को धो रहे हैं।।

आज सूनी राह मेरी कौन जाने आह मेरी।
यह अरण्य रुदन हमारा विफल है सब चाह मेरी।
भग्न उर अरमान मेरे व्यथा मूर्छित सो रहे हैं।।

विभव भूति असार तुम बिन शून्य सब श्रृंगार तुम बिन।
उठ रहे क्या-क्या हृदय में मूक हृदयोद्गार तुम बिन।
तुम्हीं देखे किस तरह हम व्यर्थ जीवन खो रहे हैं।।

तुम्हें तज हम कहाँ जायें, तुम्हीं को अपनी सुनायें।
बता दो क्या करें जिससे, तुम्हें परमाधार पायें।
हम 'पथिक' अब तो तुम्हारे ही भिखारी हो रहे हैं।।

भक्त मन संवाद 228

प्राणधन यह प्राण अब घबरा रहे हैं।
व्यर्थ जीवन दिवस बीते जा रहे हैं।

इसी आशा में कभी प्रियतम मिलेंगे।
विरह पीड़ा बीच मोद मना रहे हैं।।

इस अनाश्रित के परम आश्रय तुम्हीं हो।
आपका गुणगान निशिदिन गा रहे हैं।।

स्वर्ग भी सूना मुझे है देव तुम बिन।
ये मनोहर सुख दुःखद दिखला रहे हैं।।

छ□ वेशी रुचिर भोग विलास सारे।
रम्य उपवन तपन सी अब ला रहे हैं।।

निरख पाऊँ कब तुम्हारी प्रेम छवि को।
दरस बिन हम बहुत ही दुःख पा रहे हैं।।

मुझ 'पथिक' को हे प्रभो पावन बनाओ।
आप ही का नाम लेते आ रहे हैं।।

भक्त मन संवाद 229

बता दो प्रभो तुमको पाऊँ मैं कैसे।
विमुख होके सम्मुख अब आऊँ मैं कैसे।।

विषय वासनायें निकलती नहीं हैं।
ये चंचल चपल मन मनाऊँ मैं कैसे।।

कभी सोचता तुमको रोकर पुकारूँ।
पर ऐसा हृदय को बनाऊँ मैं कैसे।।

प्रबल है अहंकार साधन न संयम।
ये अज्ञात अपना मिटाऊँ मैं कैसे।।

कठिन मोह माया में अतिशय भ्रमित हूँ।
प्रभो बिन दया पार जाऊँ मैं कैसे।।

दयामय तुम्हीं मुझ 'पथिक' को सम्भालो।
मैं कितना पतित हूँ दिखाऊँ ये कैसे।।

भक्त मन संवाद 230

बताऊँ कैसे मन की बात।

हे मनमोहन प्रियतम तुम बिन और न कछू सुहात।
जग प्रपंच के कोलाहल से रहि रहि जिय अकुलात।।

नाथ किसी विधि मोहि उबारो अवसर बीतौ जात।
कब वह दर्शन द्वार खुलेंगे मन निरखत दिन रात।।

मेरी जो कुछ पतित दशा है मुख सों कहत लजात।
एक तुम्हारी दया दृष्टि पर हमहुँ लगाये घात।।

तुम्हीं एक सबके परमाश्रय ज्ञात और अज्ञात।
'पथिक' तुम्हें जितनों ही समुझत सुध बुध जात भुलात।।

दुःख सहने पर भी इस मन को सुख ही सदा सुहात।
सुख का अन्त दुःखद देखत ही हृदय सदा अकुलात।।

किस विधि राग द्वेष को छोडूँ अवसर बीतौ जात।
भोग हितु अति करत परिश्रम, भजन करत अलसात।।

परमेश्वर को व्यापक मानत पाप करत न लजात।
लोहा देत स्वर्ण पाने की सदा लगावत घात।।

हे प्रभु वह विवेक दो जिससे सजग रहूँ दिन रात।
तुम्हीं 'पथिक' के परमाश्रय हो ज्ञात और अज्ञात।।

भक्त मन संवाद 231

बड़ी मुश्किल से तलबगार तुम्हारा हूँ मैं।
देखते क्या हो ऐ सरकार तुम्हारा हूँ मैं।।

जानता हूँ मेरे दिल से तुम्हें नफरत होगी।
माफ कर देना गुनहगार तुम्हारा हूँ मैं।।

नहीं कुछ तुमसे छिपा मेरा जाहरोवातिन।
यही हर वक्त है इजहार तुम्हारा हूँ मैं।।

मेरी बरबादियों की भी तो करो कुछ परवाह।
किस तरह हो रहा लाचार तुम्हारा हूँ मैं।।

उठा-उठा के मुझे तुम कहाँ बिठाते हो।
कोई कर ले न गिरफ्तार तुम्हारा हूँ मैं।

तुम्हारी चाह में डूबे हुये दिल को लेकर।
हो रहा आज बेकरार तुम्हारा हूँ मैं।।

इश्क की राह में मैं, कब से भटकता देखो।
काबिले दीद हूँ, बीमार तुम्हारा हूँ मैं।।

बहुत कुछ हो चुका अब यों न भुलावो प्यारे।
'पथिक' हूँ जैसा खाकसार तुम्हारा हूँ मैं।।

भक्त मन संवाद 232

भगवान तुम्हें हम भी कुछ अपनी सुनाते हैं।
जो दुर्दशा है मन की कहने में लजाते हैं।।

हे नाथ तुम्हीं से तो मिलता है हमें सब कुछ।
तुमको ही भूल करके हम दुख उठाते हैं।।

अभिमान, मोह, माया में मग्न हो रहे हम।
उद्धार के लिये अब प्रभु तुमको बुलाते हैं।।

वह ज्ञान शक्ति देदो जिससे कि शान्ति पाये।
हम 'पथिक'प्रभु से यह आश लगाते हैं।।

भक्त मन संवाद 233

मेरे उर की पीर कोई जाने ना ।।
मैं जानूँ या प्रभु जानो, और तमाशेगीर कोई जाने ना।।
तरसभरी चितवन की करुणा, बहत रहत दृगनीर कोई जाने ना।।
इक आशा लालसा चाह इक, केहि विधि करत अधीर कोई जाने ना।।
बेसुध मगन लगन इक लागी, रहूँ सदा गम्भीर कोई जाने ना।।
एकहि नाम 'ध्यान इक गायन', एक बसी तस्वीर कोई जाने ना।।
जाके लगे 'पथिक' सोई जाने, और प्रेम की पीर कोई जाने ना।।

भक्त मन संवाद 234

मेरे परमाधार यहीं हो पर हम तुमको कैसे जानें।।

जड़ तन मन के जीवन हो तुम नित्य सत्य आनन्दघन हो तुम।
सर्वकला भण्डार यहीं हो पर हम तुमको कैसे जानें।।

अलख अनन्त नित्य अविकारी भक्तिभाव वश लीलाधारी।
दाता परम उदार यहीं हो पर हम तुमको कैसे जानें।।

परम मधुर है प्रीति तुम्हारी सुखकर हितकर नीति तुम्हारी।
निराकार साकार यहीं हो पर हम तुमको कैसे जानें।।

कहीं न भूले ध्यान तुम्हारा रहे निरन्तर ज्ञान तुम्हारा।
रक्षक सभी प्रकार यहीं हो पर हम तुमको कैसे जानें।।

कभी 'पथिक' से दूर नहीं तुम जहाँ रहे हम नित्य वहीं तुम।
एक अनन्त अपार यहीं हो, पर हम तुमको कैसे जानें।।

भक्त मन संवाद 235

यह मन चंचल चोर किस तरह बस कर पाऊँ।

घर बैठूँ या वन को जाऊँ, वस्त्र रंगूँ या खाक रमाऊँ।
हो सद्भाव विभोर, किस तरह बस कर पाऊँ।।

कौन जतन से बन्धन खोलूँ, किस विधि ममता मल को धो लूँ।
चलता नहीं कुछ जोर, किस तरह बस कर पाऊँ।।

दुःख में रोऊँ सुख में गाऊँ, अहंकार के वेष बनाऊँ।
लोभ रहा झकझोर किस तरह बस कर पाऊँ।।

हमसे तो कुछ बनि नहीं आवै प्रभु तुम चाहो सब बनिजावे।
लखो 'पथिक' की ओर किस तरह बस करि पाऊँ।।

भक्त मन संवाद 236

हम बड़े भाग्यवान हैं भगवान की सुनते हैं।
होता यथार्थ दर्शन उस ध्यान की सुनते हैं।।

सर्वत्र असत् चर्चा सुनने को मिला करती।
अगणित प्रपंचियों से यह भरी हुई धरती।
प्रभु की औपा से आज आत्मज्ञान की सुनते हैं।।हम0।।

हम रूप में मनन को ही ध्यान मानते थे।
ग्रन्थों के अध्ययन को ही ज्ञान मानते थे।
पर ये हैं जानकारी विद्वान की सुनते हैं ।।हम0।।

आसक्त हो चुके हैं जन-धन में सुखी होकर।
अब मुक्ति चाहते हैं बन्धन से दुःखी होकर।
तब विरति के लिये स्वधर्म दान की सुनते हैं ।।हम0।।

हमने न शान्ति पायी धन धाम छोड़ कर के।
निष्कामता न आई सब काम छोड़ कर के।
यह लीला अहंकार के अभिमान की सुनते हैं ।।हम0।।

धन स्वर्ण न छूने को हम त्याग समझते थे।
ममता भरे क्रन्दन को अनुराग समझते थे।
अब भ्रम निवृति के लिये महान की सुनते हैं ।।हम0।।

जब बुद्धि विमोहित है मोहान्ध मन के पीछे।
मन भाग रहा इन्द्रिय सुख और तन के पीछे।
हम 'पथिक' आज अपने उत्थान की सुनते हैं ।।हम0।।

भक्त मन संवाद 237

हम जान गये तुम हो पर यह कुछ भी नहीं हो।
जो कुछ हो विलक्षण हो तुम जैसे भी कहीं हो।।

तुम झलक दिखाते कभी ज्ञानी के ज्ञान में।
तुम समझ में आते कभी ध्यानी के ध्यान में।
तुम चेतना बन चमकते हो स्वाभिमान में।
तुम क्षुद्र में हो और तुम्हीं हो महान् में।
इस झूठ के पर्दे में हो जो कुछ हो सही हो ।।हम0।।

जिस दर पै आके फिर कहीं जाना नहीं रहे।
मन के लिये कोई भी बहाना नहीं रहे।
माया के लिये मन में ठिकाना नहीं रहे।
पाकर तुम्हें फिर कुछ कहीं पाना नहीं रहे।
मेरी ये चाह है कि तुम्हारी ही चाही हो ।।हम0।।

तुमको कभी दूरातिदूर मान रहे हम।
आनन्दमय चिन्मात्र कभी जान रहे हम।

अपने ही रूप में कहीं पहिचान रहे हम।
संसार में क्या सार है यह छान रहे हम।
हमसे वो दूर कर दो जो कुछ भूल रही हो ।।हम0।।

तुमसे ही मिला करता पुण्य पाप का जीवन।
तुमसे मिला करता है वर या शाप का जीवन।
तुमसे ही दीखता है शीत-ताप का जीवन।
मुझ 'पथिक' को दिखते नहीं हो फिर भी यहीं हो ।।हम0।।

भक्त मन संवाद 238

हम पथिक हमारा और ढंग, मेरा औरों का कौन संग।

मैं किसे बताऊँ राह कौन, मेरे दिल की है चाह कौन।
समझेगा मेरी आह कौन, करता किसकी परवाह कौन।
अपनी-अपनी बज रही चंग, हम पथिक हमारा और ढंग।।

है वैभव सुख की शान कहीं, है जाति देश अभिमान कहीं।
है मत समाज का गान कहीं, स्वारथ युक्त धर्म विधान कहीं।
सुन-सुन कर हम हो गये तंग, हम पथिक हमारा और ढंग।।

कोई कुछ ज्ञान सिखाते हैं, कितनी विधि ध्यान बताते हैं।
पर हम जो रोते गाते हैं, वह विरले ही लख पाते हैं।
सुन देख सभी हो गये दंग, हम पथिक हमारा और ढंग।।

हम चलना खा ठोकर सीखे, दिल पाना दिल खोकर सीखे।
जो कुछ हँसकर रोकर सीखे, सच्चे आशिक होकर सीखे।
हो गया निराला राग रंग, हम पथिक हमारा और ढंग।।

हम जंगल में हैं या घर में, दिल लगा एक उस दिलवर में।
वह मेरे बाहर भीतर है, व्यापक हर शै में हर दर में।
बस रही मिलन को ही उमंग, हम पथिक हमारा और ढंग।।

हम भला बुरा क्या पहचाने, हम तो प्रीतम के दीवाने।
बस एक उन्हीं को ही जाने, हमको कोई कुछ भी माने।
चल पड़े जिधर मन को तरंग, हम 'पथिक' हमारा और ढंग।।

भक्त मन संवाद 239

हम सबको इक दिन जाना है इस जग में आके देख लिया।।
कुछ दिन तक ही रह पाना है घर-घर में जाके देख लिया।।

ऐसा कोई अब तक न मिला जो आकर के फिर गया न हो।
फिर भी मूरख रहना चाहे, उनको समझाकर देख लिया।।

भोगी जन तो वाणी के मधुर मन के कठोर ही दिखते हैं।
प्रेमी योगी विरले कोई यह खोज लगा के देख लिया।।

अपना माना था जिसको भी वह कोई अपना रह न सका।
हम भी तो किसी के हो न सके कुछ समय बिता के देख लिया।।

हम भी तो धन की मान भोग की पूर्ति चाहते आये हैं।
तृष्णा की आग न बुझती कभी बहुतेरा बुझा के देख लिया।।

जब तक भीतर से त्याग न हो कामना अहंता ममता का।
तब तक सन्यास नहीं होता सब वेष बना के देख लिया।।

जब तक कि आत्मा में निश्चल सन्तुष्टि तृप्ति दृढ़ प्रीति न हो।
तब तक विश्राम नहीं मिलता सब नियम निभा के देख लिया।।

सब दौड़ रहे हैं जिधर, उधर से लौटने वाले कहते हैं।
जो कुछ भी मिला वह रह न गया, दुनिया को रिझा के देख लिया।।

जिस अमृत्व को खोज रहे थे, इधर उधर मर कर जी कर।
हम 'पथिक' उसे अपने में अहं का परदा उठा के देख लिया।।

भक्त मन संवाद 240

हमारे प्रेमनिधे भगवान ।।

तुम्हीं ऐसे सुन्दर श्रद्धेय, परमधन जीवन के आधार।
तुम्हारी अकथ प्रीति प्रिय नीति, तुम्हारा अतुलित अनुपम प्यार।
रमे यह रोम रोम में ध्यान ।।

आज किस मुंह से विनती करूँ, जबकि मैं अति मलीन मतिमन्द।
पतित हूँ निर्बल हूँ सब भाँति, कहूँ क्या क्या हे आनन्दकंद।
जानते सब तुम दयानिधान ।।

जहाँ इतना अपनाया मुझे, कहीं मैं भूल न जाऊँ नाथ।
सफल हैं जनम जनम के पुण्य, थाम लो हे प्रभु मेरा हाथ।
तुम्हीं तो अपने प्रियतम प्रान ।।

तुम्हारा विरही हूँ फिर भला, चाह कब लेने देती चैन।
सदा उत्सुक उत्कण्ठित हृदय, व्यथित रहता तुम बिन दिन रैन।
'पथिक पथ' में गाकर यह गान।।

हमारे प्रेमनिधे भगवान।।

भक्त मन संवाद 241

हे जीवनधन मिल जाओ ।।

मैंने देख लिया जग सारा, मिला न मुझको कहीं सहारा।
होश हुआ तब तुम्हें पुकारा, अब मत देर लगाओ।।

तुम किस विधि देते हो दर्शन, कैसे निश्चल हो चंचल मन।
कौन सुलभ मिलने का साधन, वही मुझे बतलाओ।।

तुम ही अपना ऐसा बल दो, तुम्हीं हमारे दोष कुचल दो।
तुमही मुझको मति निर्मल दो, निज अनुकूल बनाओ।।

अब प्रभु तुम बिन कुछ न सुहाये, चाहे कुछ भी आये जाये।
'पथिक' हृदय तुमको ही ध्याये, अब न कहीं भरमाओ।।

भक्त मन संवाद 242

हे दयानिधान तुम्हारे ही गुण गाते जायेंगे।।
जो कुछ भी अपने मन में तुम्हें सुनाते जायेंगे।।

बस तुम्हीं एक ऐसे संगी हो दीख रहे जग में।
जो कभी न तजते हमें प्रेरणा देते पग-पग में।
अब हम हर एक बहाने तुम्हें बुलाते जायेंगे।।

जो कुछ भी मेरे लिये उचित है वही करोगे तुम।
हे देव कभी न कभी मेरे सब दुःख हरोगे तुम।
तुमसे बल पाकर अपने दोष मिटाते जायेंगे।।

यह सच है प्रियतम तुम्हें खोजने दूर नहीं जाना।
दर्शन देने को दूर कहीं से तुम्हें नहीं आना।
फिर भी हमको जाने कब तक तरसाते जायेंगे।।

प्रभु क्या दूँ तुमको, जो कुछ है सर्वस्व तुम्हारा है।
अपने इस तन मन पर भी क्या अधिकार हमारा है।
हम 'पथिक' सदा तुमसे ही सब कुछ पाते जायेंगे।।

भक्त मन संवाद 243

हे दुःखहारी शरण तुम्हारी तुम से निज दुःख रो न सके हम।
नाथ तुम्हारे प्रेमामृत में अब तक हृदय भिगो न सके हम।।

तीरथ गये किया जप तप भी शास्त्र पढ़े ज्ञानी कहलाये।
किन्तु खेद सब कुछ के पीछे अहंकार को खो न सके हम।।

व्यर्थ गया दीखता हमारा सद्विवेक बिन सकल परिश्रम।
यदि मुनियों की भाँति जगत् में जाग सके या सो न सके हम।।

जीवन कुछ करते ही बीता फिर भी हो न सका वह कुछ भी।
जिससे सब अभाव मिट जाते ऐसी शक्ति संजो न सके हम।।

देव तुम्हारे द्वारा ही हो सकता है यह निर्मल जीवन।
कृपा दृष्टि से घुल जायेगा जो मल अब तक धो न सके हम।।

हे सुखदाता दोष विनाशक पूरी हो यह भी अभिलाषा।
जीवन बीत रहा पर अब तक 'पथिक' तुम्हींमय हो न सके हम।।

भक्त मन संवाद 244

हे नटवर श्याम मुरारी ! गिरधारी ।।
विनय यही है तुमसे दीनानाथ, दे दो अपना हे जीवनधन हाथ।

जिसके बल से तज दूँ जग की, माया ममता सारी गिरधारी।।
तुम बिन मेरी और सुनेगा कौन, पतित समझ कर मत हो जाना मौन।

देव तुम्हारी शरणागत हूँ, रखना लाज हमारी गिरधारी।।
यद्यपि मैं हूँ तपबल साधनहीन, विषय विकारों से है हृदय मलीन।

किन्तु यही आशा बल मुझको, तुम दीनन हितकारी गिरधारी।।
हे परमेश्वर असुरारी ! दुःखहारी।।

विनय यही है तुमसे दीनानाथ।
सब कुछ देखूँ बुद्धियोग के साथ।।
विवेक बल से तज दूँ जग की माया ममता सारी ।।हे दुःख0।।

तुम बिन मेरी और सुनेगा कौन।
तुम्हें सुनाने को रहना है मौन।।
तुम्हीं हृदय निवासी प्रभु हो परम सुहृद हितकारी ।।हे दुःख0।।

यद्यपि मैं हूँ तप बल साधनहीन।
विषय विकारों से है चित्त मलीन।।
कृपा दृष्टि से बन जायेगी बिगड़ी दशा हमारी ।।हे दुःख0।।

मुझको तो कुछ अधिक नहीं है ज्ञान।
करुणानिधि की करुणा का है ध्यान।।
मैं हूँ 'पथिक' तुम्हारा हे प्रभु, चाहूँ भक्ति तुम्हारी ।।हे दुःख0।।

भक्त मन संवाद 245

हे प्रभु तुम अपनी माया में क्यों हमें भुलाते हो।
मेरे इस मूरख मन की पूरी करते जाते हो।।

तुमसे मैंने सब कुछ पाया पर तुम न मिले अब तक।
मिलते भी कैसे, उर में सच्ची चाह नहीं जब तक।
तुम तो सच्चे प्रेमी को ही प्रभु दरश दिखाते हो।।

हे नाथ बता दो हम भी ऐसा प्रेम कहाँ पायें।
तुम से ही माँग रहे हैं बोलो और कहाँ जायें।
हम योग्य नहीं हैं इसीलिये तो देर लगाते हो।।

हे दानी, वह बल दो जिससे हम हो जायें त्यागी।
अब देख सकें प्रियतम तुमको हम होकर अनुरागी।
सुनता हूँ एकाकी होने पर ही मिल जाते हो।।

अज्ञान तिमिर छाया है तुमको पहिचानें कैसे।
यह अहंकार बाधक है तब तुमको जानें कैसे।
हम दीन 'पथिक' के दोषों को अब क्यों न मिटाते हो।।

भक्त मन संवाद 246

हे प्रभु तुम आके चले गये।।
सोचा था तुमको पायेंगे, अपने उद्गार सुनायेंगे।
यह जीवन सफल बनायेंगे, मेरे सब दुःख मिट जायेंगे।
पर मेरी सब आशाओं को, क्यों व्यर्थ बना के चले गये।।

अब देखो हे भगवन् तुम बिन, यूँ ही बीते जाते हैं दिन।
मिलनाशा में घड़ियाँ गिन-गिन, होते रहते अधीर छिन-छिन।
किन अपराधों से तुम हमको, इक राह बता के चले गये।

यह सच है हममें भक्ति नहीं, साधन में भी अनुरक्ति नहीं।
भोगों से अभी विरक्ति नहीं, हम हैं अधिकारी व्यक्ति नहीं।
क्या इसीलिये हे दीनबन्धु, हमको फुसला के चले गये।।

हम होकर अतिशय दीन हृदय, हैं शरण तुम्हारी करुणामय।
मेरे पापों का कर दो क्षय, जिससे मैं हो जाऊँ निर्भय।
फिर मिलो 'पथिक' के मनमोहन क्यों झलक दिखा के चले गये।।

भक्त मन संवाद 247

हे प्रभु शरणागत हम हैं स्वीकार करो।
अधमोद्धारक तुम हो मेरा उद्धार करो।।

हम माया मानबद्ध अजितेन्द्रिय औपण दीन।
राग-द्वेष परिपूरित मेरा मन अति मलीन।
मुझको शुभ मति गति दो मेरा उपचार करो।।

दूर करो दुःखहारी दुर्गम देहाभिमान।
देख सके सत्स्वरूप ऐसा दो विशद ज्ञान।
हे समर्थ मेरे प्रति भी यह उपकार करो।।

बन जायें हम पवित्र प्रेमी निष्काम हृदय।
और अचंचल चित् हों, मिल जाये आत्म विजय।
मेरे दुःख दोषों का स्वामी संहार करो।।

हम तुममय हो जायें, तब समझें सत्यसंग।
मिट जाये अन्तर से जो कुछ भी असत रंग।
'पथिक' तुम्हारे पथ में परमेश्वर पार करो।।

भक्त मन संवाद 248

हे प्रभो यह प्राण अब घबरा रहे हैं।
व्यर्थ जीवन दिवस बीते जा रहे हैं।।

इसी आशा में कभी प्रियतम मिलेंगे।
विरह पीड़ा बीच मोद मना रहे हैं।।

इस अनाश्रित के परम आश्रय तुम्हीं हो।
तुम्हीं से हम रो रहे हैं गा रहे हैं।।

अब हमें परिणामदर्शी बुद्धि द्वारा।
ये मनोहर सुख दुःखद दिखला रहे हैं।।

छद्मवेशी रुचिर भोग-विलास सारे।
रम्य उपवन तपन सी अब ला रहे हैं।।

पा सकें हम शान्ति अब ऐसी औपा हो।
सुखों के पीछे बहुत दुःख पा रहे हैं।।

हम 'पथिक' हैं, हे प्रभो पावन बनाओ।
आप ही का नाम लेते जा रहे हैं।।

भक्त मन संवाद 249

हे प्रियतम भगवान प्रेममय, मेरे परमाधार प्रभो।
हे समर्थ सबके संरक्षक, हे अच्युत अविकार प्रभो।।

हे समदर्शी पूर्ण परात्पर, हे सबके आश्रय दाता।
बिना हेतु के प्राणिमात्र पर करते हो उपकार प्रभो।।

कितना ही कोई पापी हो, फिर भी नहीं किसी का त्याग।
शरणागत का जैसे भी हो करते तुम उद्धार प्रभो।।

हममें सारी शक्ति तुम्हीं से तुममें ही हम रहते नाथ।
किन्तु तुम्हारा ध्यान न रखकर करते स्वेच्छाचार प्रभो।।

हममें कितने ही दुर्गुण हैं, अगणित होते आये पाप।
फिर भी हम पाते रहते हैं, नित्य तुम्हारा प्यार प्रभो।।

हम कितना ही भूले भटके पाते तुम में ही विश्राम।
सन्मुख आ जाते हम जब भी कर लेते स्वीकार प्रभो।।

हे दानी तुम सब विधि पूरण, हे करुणानिधि हे निष्काम।
हम लेते तुम देते रहते अनुपम परम उदार प्रभो।।

जितने बन्धन दुःख यहाँ हैं, वह निज मन से ही उत्पन्न।
तुम तो परमानन्द रूप हरि हरते हो दुःख भार प्रभो।।

हम विचित्र अपराधी हैं, पर यही सोचकर हैं निश्चिन्त।
कितने ही हम पतित 'पथिक' हों, तुम कर दोगे पार प्रभो।।

भक्त मन संवाद 250

हे भगवन् भूल रहा भव में, भ्रम विपति छुटैया कोई नहीं।
यदि तुम भी नाथ सुधि लोगे, तब और सुनैया कोई नहीं।।

भूलते हुए ऐसे ही क्या, जीवन दिन सब खो जावेंगे।।
शरणागत हूँ प्रभु आप बिना, सत सुपथ दिखैया कोई नहीं।।

इतने पर भी यदि अधम जान, अनुऔपा दृष्टि से काम लिया।।
तब तुम बिन मेरा इस जग में, दुःख द्वन्द मिटैया कोई नहीं।।

सन्तोष हेतु तुम ही धन हो, तुम बिन तो कुछ आधार नहीं।।
हम निर्बल अपावन जन को तो, तुम बिन अपनैया कोई नहीं।।

हे अधमोद्धारक दीनबन्धु, मैं सत्य प्रेम का भिक्षुक हूँ।।
भूलना न हे विभु आप बिना, पतित 'पथिक' रखैया कोई नहीं।।

भक्त मन संवाद 251

हे नाथ तुम्हारे दर्शन की कब पूरी होगी आश।
सेवा में सफल बने तन-मन यह जीवन की अभिलाष।।

वासना जगत् के भोगों की इस जग में लाती है।
अब समझे हमको कहाँ-कहाँ कामना नचाती है।
हे देव हमें वह बल दो, जिससे तोड़ सकें यह पाश।।

सुनता हूँ निर्मल मन जिनका वे तुमको पाते हैं।
फिर पतित जनों को भी तो पावन आप बनाते हैं।
पर हमको ही सन्मुख होने का मिल न सका अवकाश।।

सब कुछ पाया पर तुम न मिले दिन बीत गये इतने।
हम बता न सकते हैं, अब तक अपराध किये कितने।
बस तुम्हीं एक मेरे दोषों का कर सकते हो नाश।।

अभिमान-शून्य हो जाऊँ सब कुछ तुमको ही मानूँ।
जो कुछ भी देखूँ सब में केवल तुमको ही जानूँ।
मैं दीन 'पथिक' हूँ मुझको दे दो अपना ज्ञान प्रकाश।।

भक्त मन संवाद 252

हे मनमोहन ! हे जीवन धन।

प्रेम निधे अनुपम महान तुम, हो समर्थ सद्‌गुण निधान तुम।
तुम में ही सर्वस्व समर्पन।।

तुम जैसे हो कहे न जाते, किसी तरह से गहे न जाते।
हो जाता तुम में तन्मय मन।।

कहीं तुम्हारा ध्यान न भूलूँ, तुम अनन्त यह ज्ञान न भूलूँ।
तुम सब विधि सुन्दर आनन्दघन।।

तुम अपने प्रियतम अपने में हो, जागृति सुषुप्ति सपने में।
अनुभव करते प्रेमी 'पथिक' जन।।

हे समर्थ प्रभु दया तुम्हारी मेरे सारे दुख हरती है।।
तुमसे मिलकर ही हे प्रियतम अनुपम शान्ति मिला करती है।।

इसी दया से प्राणिमात्र को तुमने बहुविधि दान दिया है।
शरणागत अधमातिअधम को अपने निकट स्थान दिया है।

सबको सबकी इच्छित विधि से अपनी गति का ज्ञान दिया है।
अपने से अनुरक्त जनों को सर्वोपरि सम्मान दिया है।

पतित पावनी इसी दया से असुरों की माया डरती है।।
करते आये और करोगे स्वीकार नाथ सदा तुम प्यार हमारा।

तुम्हीं जानते हो किस विधि से होना है उपचार हमारा।
तुमसे हमने सब कुछ पाया तुममें ही संसार हमारा।

तुमको ही तो भव बन्धन से करना है उद्धार हमारा।
नाथ तुम्हारे चिन्तन से ही मेरी सब बाधा हरती है।।

हम न समझ पाते हैं तुम किन रूपों में क्या कर जाते।
जहाँ भूलते हैं इस जग में तुम करुणानिधि राह दिखाते।

गिर पड़ते हैं जहाँ कहीं हमें तुम्हीं शक्ति दे शीघ्र उठाते।
सुख से अधिक सदा दुःख में हम अपने निकट तुम्हीं को पाते।

हम तुम में ही हैं इस अनुभव से चित की चिन्ता मरती है।।
अब समझे हैं अन्तर्यामी तुम किंचित भी दूर नहीं हो।

कितना ही हम भूलें तुमको तुम न भूलते हमें कहीं हो।
तुम्हीं चाहते हो जब जिसको तत्क्षण मिलते उसे वहीं हो।

मेरे जन्म-मृत्यु के संगी नित्य सत्य तुम अभी यहीं हो।
'पथिक' हृदय में भक्ति तुम्हारी अति आनन्द सुधा भरती है।।

भक्त मन संवाद 253

कहाँ कब मिलोगे ऐ स्वामी हमारे।
यहाँ हम तरसते दरस को तुम्हारे।।

भुलावो न भगवन् पतित जान करके।
शरण आ चुका हूँ तुम्हारे सहारे।।

हमारी तरह आपके हैं अनेकों।
यहाँ तो तुम्हीं एक नयनों के तारे।।

यही आश विश्वास मन में समाया।
तुम्हारी औपा से मिटै क्लेश सारे।।

बुरा या भला पथिक है तुम्हारा।
दरश दो हृदय-धाम में प्राण प्यारे।

भक्त मन संवाद 254

अब तो मेरे स्वामी सुरतिया दिखाना।
सुरतिया दिखाना, भूल नहीं जाना-करना न कोई बहाना।।

घर नहिं भावै, वन न सुहावै, दरश बिना।
भावै अति जिय अकुलावे-कोई न ठीक ठिकाना।। अब तो मेरे0।।

जीवन बिरथा प्रियतम प्रभु बिन, यहि सो लगन लगी।
अब निशि दिन-पथिक नाथ मिल जाना।। अब तो मेरे0।।

भक्त मन संवाद 255

हमें इस तरह से क्यों नाथ भुलाया तुमने।
बढ़ा के किस लिए वो प्यार घटाया तुमने।।

क्या खबर थी कि सबक इस तरह पढ़ना होगा।
रन्ज राहत का अजब राज बताया तुमने।।

देखते देखते हैरत से मैं हैरान हुआ।
खेल फितरत का हमें खूब दिखाया तुमने।।

फिर भी रहमत ही रही आपकी क्या शुक्र करैं।
हम तो मिट ही चुके पर पीछे बनाया तुमने।।

अब तो तस्कीन यही चश्मे-करम होगी जरूर।
पथिक को साते हुए जबकि उठाया तुमने।।

भक्त मन संवाद 256

वक़्त खुफ्तां से मुझे आके जगा देना तुम।
राहे-उल्फत मुझे दिलबर वो बता देना तुम।।

दिले नादान कहाँ खींच के ले आयेगा।
इसी मुश्किल से हमें आके बचा देना तुम।।

यहाँ बस यार के दीदार का प्यासा है दिल।
तिश्नगी दिल की यहीं आके बुझा देना तुम।।

है फिक्र मन्जिलें-मकसूद किस तरह पहुँचूँ।
वो तरीका भी मुझे आके बता देना तुम।।

यही फरियाद है अब कैदे-जहाँ से निकलूँ।
जाल-फितरत से पथिक को भी छुड़ा देना तुम।।

भक्त मन संवाद 257

भगवन अब मेरी पुकार सुनो तुम बिन है हमारा कोई नहीं।
तुमही सर्वस्व हमारे प्रभो संगी सुत दारा कोई नहीं।

बलहीन हूँ दीन हूँ शक्ति नहीं मैं भटक रहा भवसागर में।
यह झाँझरी नाव है भार भरी दिखता है किनारा कोई नहीं।

द्रुतगामिनी विषय समीरण से अतिउन्नत मोह हिलोर उठें।।
टकराती फिरै जीवन तरणी हा खेवनहारा कोई नहीं।

ये अनाथ पै नाथ दया करिये, हो जाये बेड़ा पार मेरा।
करुणानिधि के कृपाकर बिना अब और है चारा कोई नहीं।।

अपने बल के ही अभिमति में दुर्दैव कुफल से भूला रहा।
अब विदित हुआ भगवान् बिना पथिक पथ सहारा कोई नहीं।।

भक्त मन संवाद 258

इन्तजारी में शबोरोज मुझे रहना है।
बहरे उल्फत में खुले दस्त मुझे बहना है।।

मिलैगी वस्ल की सूरत न जब तलक उनसे।
शौक से रन्जोग़म फुरक़त में मुझे सहना है।।

ऐशोइशरत की न दरकार कभी है कुछ भी।
रमी है खाक क्या परवान तन बरहना है।

वो सुनैं या न सुनैं ख्याल करैं या न करैं।
मैं तो कहता ही रहूँगा जो मुझे कहना है।।

ऐसा कुछ हो कि पथिक रमके उन्हीं-सा बन जाय।
अद्वैत आत्मज्ञान ही मुझे चहना है।।

भक्त मन संवाद 259

हे प्रभु दीजै ध्यान मिलूँ मैं तेरे संग में।।

कैसी करुँ मैं मन चन्चल अति-भूल्यों फिरत अजान,
ये माया ही के रंग में।। हे प्रभु दीजै0।।

विश्व-विपिन में विचरत भटकत अन्तर चोर समान,
ये सारे अंग-अंग में।। हे प्रभु दीजै0।।

देखहुँ किहि विधि रूप तुम्हारो चन्चल दरपन ज्ञान,
ये मन की तरंग में।।हे प्रभु दीजै0।।

पथिक तुम्हारी प्रभु आशा पर करत विनययुत गान,
मिलन की उमंग में।।हे प्रभु दीजै ध्यान मिलूँ
मैं तेरे0।।

भक्त मन संवाद 260

स्वामी सुरतिया दिखानी पड़ैगी।
विथ मेरे मन की मिटानी पड़ैगी।।

तुम्हीं मेरे पितु मात स्वामी सहायक।
दया दृष्टि मुझपै जमानी पड़ैगी।।

नहीं कुछ बनै शुद्ध करनी बनाये।
ये बिगड़ी दशा को बनानी पड़ैगी।।

नहीं शक्ति जो मैं तेरे पास आऊँ।
मेरी लाज तुमको निभानी पड़ैगी।।

कलिल कालिमा ये हृदय की मिटाकर।
पथिक ज्ञान-बूटी पिलानी पड़ैगी।।

भक्त मन संवाद 261

अबकी बार उबारो करुणानिधि स्वामी।।
अति मलीन मन मानत नाहीं-
योग-ज्ञान कछु जानत नाहीं-
तुमही मोहि सम्हारो-उर अन्तर्यामी।।
दयामय दीन को बस आपही उबारोगे।।
पतित को गिरते हुए आपही सम्हारोगे।।

मोह माया से नाथ आपही निकारोगे।।
मेरी बिगड़ी को प्राणनाथ तुम सुधारोगे।।
कपटी मन किहि विधि समझाऊँ-
किहि प्रकार प्रभु तुमको पाऊँ-
पथिक के मन को मारो अतिशय खल कामी।।
अबकी बार उबारो करुणानिधि स्वामी।।

भक्त मन संवाद 262

करुणानिधान पालक हे नाथ कहाते हो।
क्यों इसकी दुर्दशा पर फिर ध्यान न लाते हो।।

हो प्रयत पथप्रदर्शक प्राणेश! तुम हमारे।
मायानुरक्त हैं हम अब क्यों न हटाते हो।।

अवगाह ज्ञानप्रतिभा मुझमें प्रकाश करके।
अनुरूप आप अपने प्रभु क्यों न बनाते हो।।

इसको अधम समझ कर यों ही न छोड़ देना।
आधार न तुम बिनु कुछ यदि नाथ भुलाते हो।।

भयभीत हो रहा हूँ अनुताप जिय भरी है।
है आश ये पथिक को निज ओर बुलाते हो।।

भक्त मन संवाद 263

हे प्यारे दिलवर तुम्हारी फुरकत में
क्यों न आंसू निकल रहे हैं।

कभी वो दिन होगा हम कहेंगे
कि इश्क आतिश में जल रहे हैं।।

है सख्त मंजिल अभी ही जाना
हो मर्जी तेरी तभी हो आना।

कभी सम्हलकर फिसल रहे हैं
कभी फिसलकर सम्भल रहे हैं।।

तुम्हारी फितरत का ही तमाशा
जमाना दिलकश बना हुआ है।

उसी में जिस्मोइस्म के परदे
हमारे दिल को मसल रहे हैं।।

मैं तुमको हरजा पै देखता हूँ
तु अपनी खूबी से छिप रहे हो।

इसी ही धोखे में भूलकर हम
हजारों सूरत बदल रहे हैं।।

जो जी में आये ऐ प्यारे दिलवर
उसी तरह नाच तुम नचा लो।

पथिक तुम्हारे ही हो चुके हैं
तेरे इशारों पै चल रहे हैं।।

भक्त मन संवाद 264

कब पावैं परम प्रभु को पहिचान कब पावैं।।

अति पावन शुभ घड़ी दिवस निशि,
जब प्रभु ज्ञान दिखावैं प्रान सुख पावैं।।कब0।।

हम अति दीन दीनहितकर प्रभु,
हिय कलुषित बेदना महान मिटावैं ।।कब0।।

दानी परम प्रेम भक्ती के कब,
प्रदान कर अनुपम शान्ति दिखावैं ।।कब0।।

हम तो भूले पथिक पंथ निज,
जब चाहें तबहीं धरि ध्यान बचावैं।।कब0।।

भक्त मन संवाद 265

पथिक को जाने दो इस बार।।
इसे सुपथ सत्वर दिखला दो, होती बड़ी अबार।।पथिक0।।

तेरे अन्तर में प्रेमोदधि वत्सलता का प्यार भरा हुआ है
अन्त में मिलता गया तैर कर हार।।पथिक0।।

उद्गारोल्लासित तेरा वो प्रियता का व्यापार।
जिसको पा करके तुझमें ही आकर्षित संसार।।पथिक0।

व्यष्टि रूप से तू मम जननी लेती रक्षाभार।
पुनि समष्टि जगदुत्पादन कर केवल एकाकार।।पथिक0।।

उसी रूप में हे विभु माता तुमसे यही पुकार।
अब अनन्त अच्युत उछंग को लेने दो आधार।।पथिक0।

अपनी त्रिगुणात्मक लीला से करके इसको पार।
पुत्र पथिक के हेतु खोल दो परमपिता का द्वार।।पथिक0।।

भक्त मन संवाद 266

(उस दिन वह प्रात का समय था)

विदा भेंट की तैयारी थी,
रोती सुख सम्पति सारी थी।
तद्नुसार ही उन घड़ियों में,
कितना सकरुण मौन विनय था।।

निसंकोच सुचि प्रीति सरलता,
सुसौम्यता सद्भाव तरलता।
मूर्तिमान ही सी शोभित थी,
मैं भी दर्शन में तन्मय था।।

मुख से आते नहीं बयन थे,
किन्तु कह रहे उन्हें नयन थे।
नत अतृप्त अभिलाष रुदन से,
हृदय विदारक मृदु अनुनय था।।

चितवन में इक तरस भरी थी,
म्लान निःरसता बरस पड़ी थी।
अधीरता की थी बेहोशी,
इधर दोषदृग जग का भय था।।

मिलन रूप में नवीनता थी,
कमी पूर्ति में प्रवीणता थी।
किया न था सो इस असमय में,
निशंक विकसित प्रयत प्रणय था।।

बिखर रहे आंसू के कण थे।
मिलन समय के किंचित क्षण थे।
प्राण प्राण से हृदय हृदय से,
अभिन्नता का भावप्रचय था।।

मौन रूप में अमित चाह थी,
कुछ कहने की जगह आह थी।
निरावरण हृदयालिंगन था,
इधर निठुर कर्तव्य अदय था।।

इस मिलाप में क्षणिक संग था,
मनोज्ञता से मुषित रंग था।
वियोग मिस से पथ चलने को,
शीघ्र पथिक का भाग्य उदय था।।

भक्त मन संवाद 267

(पथिक क्या खोये हुए से)
मौन बैठे विचरते हो तुम कहां सोये हुए से।।पथिक0।।

म्लानता की ओट में मुख हैं दुराये कौन सा दुख।
किस बिथा में छिप रहे हो - आज तुम रोये हुए से।।पथिक0।।

कहाँ सुख-सम्पति तुम्हरी किसे दी शुचिशान्ति प्यारी।
जान पड़ते अश्रु द्वारा - नयन हैं धोये हुए से।।पथिक0।।

कौन सी पकड़े लगन हो - किस सुरति में तुम मगन हो।
कर रहे कुछ करूण क्रन्दन मोह में मोये हुए से।।पथिक0।।

हृदय कर्षक कौन बोधन भूलता जिसको न है मन।
श्रान्त हो किसकी प्रतीक्षा भार को ढ़ोये हुए से।।पथिक0।।

हो रहा है ध्यान किसका छेड़ देते गान किसका।
पथिक किसके नेहरजु में रूक रहे नोये हुए से।।पथिक0।।

भक्त मन संवाद 268

देख ली सबकी प्रीति प्रतीति।।

जब तक पूर्ण मनोभिलाषित रूचि तब सब मीत।
विरह वेदना के उठने से रहते बने विनीत।।

जब तक रूचिकर मोह वासना होती नहीं अतीत।
अपना ही अन्तर सुख जानैं गाते स्वारथ गीत।।

पर दुःख कोई अब लखते हैं, निज मन की ही जीत।
यही देखते प्रणयपन्थ में गये बहुत दिन बीत।।

स्वयं सच्चिदानन्द आत्मा केवल परम पुनीत।
यद्यपि उसी के अन्वेन्षण में किन्तु कर्म विपरीत।।

पथिक तुम्हारे ही अन्तर में व्यापक मायातीत।
तन्मय हो जावो उसमें ही छूट जाय भयभीत।।

भक्त मन संवाद 269

ऐ पथिक कहाँ के भूले,
फिरते हो विश्व विपिन में।।

सुपथान्वेन्षण करना हो,
तो कर लो दिन ही दिन में।।

दिवसावसान जब होगा,
फिर क्या तुम कर पाओगे।।

छायेगी घोर तमिस्रा,
वो देखो कुछ ही छिन में।।

अविराम चाल से जीवन,
घड़ियां बीती जाती हैं।।

पर चेत नहीं होता है,
अब तक भी हृदय मलिन में।।

इस सघन कुँज में कितने,
नाना विधि पुष्प खिले हैं।।

लावण्य लसित लिप्सा का,
मन मोहक जाल बिछा है।

फंस जाता है ललचा कर,
सत्वर कलित कलिन में।।

ये सब आंखों के आगे,
मायामय दृश्य छिपे हैं।।

दुर्मष निदान है जिनका,
तुम भटक रहे हो तिन में।।

मद मोह काम क्रोधादिक,
ठग कुशल छ□वेशी हैं।।

इनके ही प्रलोभनों में,
फिरते हो गलिन गलिन में।।

अब भी सतपथ में आकर,
तुम सावधान हो जावो।।

देखो तुम पथिक कहाँ के,
अब उलझ रहे हो किन में।।

भक्त मन संवाद 270

शान्ति अन्वेषण में किस भांति,
भटकाये बहुत गये दिन बीत।

मूक आशा को ऐ प्रिय शान्ति,
बता दे तेरा कहाँ निवास।

गुफा में गिरि में वन में बसी,
याकि सरिता दुकूल पर वास।।

नहीं ! इन सुस्थानों में मुझे,
दिखायी देती है कब शान्ति।

कहीं सन्तप्त हृदय की हाय,
न मिट पाई अब तक की भ्रान्ति।।

तब मुझे अब खोजूं मैं कहाँ,
विलासी की है आयी याद।

छिपाये तुझको क्या है वही,
उसी की विलासता उन्माद।।

या कि तुझको है वश में किये,
देव धनपति की वैभवराशि।

कि तू है भव्य भवन में बसी,
लिया सौभाग्य सुयश ने फांसि।।

किन्तु ये केवल भ्रम सब भांति,
वहाँ तो तेरा झूठा रूप।

अरे मुझको दो कोई बता,
मिलैगा किस बिधि शान्ति सरूप।।

देख ! क्या दीन कुटी में शान्ति,
वहाँ तो दरिद्रता का वास।

ठीक है पता लगा ये एक,
सुहृद दानी के हृदय निवास।।

नहीं ! तो तू उत्तम व्रत जहाँ,
छिड़ा है अन्तर पर उपकार।

देख मन शान्ति झलक है यहाँ,
किन्तु ये क्षणिक अस्थिराकार।।

अस्तु कुछ और बढ़ा लो देख,
मिल गया एक दिव्य सुस्थान।

परम आत्मा पूरण चिद्रूप,
इसी में सत्य शान्ति अवधान।।

त्याग दो कुवासना भ्रम जाल,
इसी का निशि-दिन कर लो ध्यान।

पथिक अन्तर ही में हैं छिपे,
परम प्रभु शान्ति-रूप भगवान।।

भक्त मन संवाद 271

ऐ पथिक देखते क्या हो
क्यों पड़े हुए उलझन में।
अपने प्यारे प्रियतम को
खोजो निज अन्तर मन में।।

ये दृश्य जगत उसकी ही
क्या कारीगरी निराली।
सबके वाह्यान्तर में वो
जल थल अनिलादि गगन में।।

दुविधान्तर द्वैत मिटाकर
शुचिता प्रमोज्ज्वल होकर।
परमात्म रूप ही देखो
सबके प्राणों में तन में।।

ऐश्वर्य तेजयुत जो कुछ
हृदयाकर्षक प्रतिमायें
सब एक उसी की महिमा
शैशव सौन्दर्य सुमन में।।

निज भेदभ्रान्ति से मन को
क्यों कलुषाकीर्ण किये हो
पथिक प्राण जीवन प्रभु से
जीवित हो लो जीवन में।।

भक्त मन संवाद 272

सभी इशारा बता रहे हैं,
कि दिल में दिलवर निहां तुम्हारे।
इधर खोजता फिरूं कहां मैं,
न कुछ भी तसकीन आये प्यारे।।

तुम्हीं से हर शक्ल होती जाहिर,
नहीं है कुछ जबकि तुम नहीं हो।

तुम्हारा जलवा हरइक जगह में,
हर एक शै में तेरे इशारे।।

यही तह्ययुर तिलस्म कैसा,
मिला न राजोनियाज इसका।
कि हम तुम्हीं में रहें हमेशा,
तुम्हीं फक़त मुत्तसिल हमारे।।

यही करम हो तुम्हें ही देखूं,
जमाना दीदार आइना हो।
खिजरेरह होवे चश्महकबीं,
गायब हों इस्मजिस्म सारे।।

ये मेरी अर्जी पै मर्जी तेरी,
जो हो मुनासिब वहीं मुझे कर।
पथिक तो दिल में यही बिचारे,
सितारे कब रोशनी से न्यारे।।

भक्त मन संवाद 273

मुझे बता दो कोई कौन हम कहाँ के हैं।
कहाँ से आये हैं हम और किस जहाँ के हैं।।

हमारी जात है क्या कौन है मजहब ईमान।
बनाया किसने मुझे कौन पिता माँ के हैं।।

आये हम किस लिए क्या करने को क्या है इरशाद।
मेरा मकां भी कोई है या लामकां के हैं।।

पूछता कौन हूँ मैं किससे ये क्यों होते सवाल।
जुबान दिल के लिए है कि दिल जुबां के लिए।।

पथिक सवालों का बस ये जवाब मिलता एक।
सभी कुछ आपहीं हैं जो यहाँ वहाँ के हैं।।

भक्त मन संवाद 273

तुम बिन कोई मेरी पीर हरै ना।

दिन सब बीते जाहीं बिगड़ी बनत नाहीं।
पाप अति मन माहीं कहो करै ना।।तुम0।।

कलुषित मेरी काया कठिन कराल माया।
हे प्रभु कीजै दाया काज सरै ना।।तुम0।।

नर तन जन्म लिया धरम न कछू किया।
अब मेरा पापी जिया धीर धरै ना।।तुम0।।

पथिक की सुध लीजै सुखद सुपथ दीजै।
अस कुछ दया कीजै भूल परै ना।।तुम0।।

भक्त मन संवाद 275

इश्क में तेरे ही ये दिल को फंसाते जाते।
दारदुनिया से अब तो हाथ उठाते जाते।।

हमें जन्नत से या दोजख से कहां बीमरजा।
जिस्मइल्लत से ही अपने को हटाते जाते।।

गैरियत कुछ नहीं जब दीदयेदिल से देखें।
जज्ब उल्फत उसी वाहद से बढ़ाते जाते।।

मुद्दआ तुमसे है दुनिया से हमें क्या मतलब।
तुम्हीं दिलवर हो ये दिल तुमसे लगाते जाते।।

मरेंगे हक की तलब में जो हैं सच्चे तालिब।
पथिक भी राहहकीकत में हैं आते-जाते।।

भक्त मन संवाद 276

भगवन बता दो।
तिमिर तीव्र दिखा रहा हे प्रभु मिटा दो।।क्या करैं0।।

चोर अन्तर घुस पड़े हैं - निपट नटखट ये बड़े हैं।
दुर्दशा हैं कर रहे - इनको हटा दो।।क्या करैं0।।

उम्र बीती जा रही है - मौत सर पर आ रही है।
कुछ न कर पाया प्रभो - बिगड़ी बना दो।।क्या करैं0।।

हे प्रभू किस ओर जाऊँ निज बिथा किसको बताऊँ।
दया निधि करके दया-दर्शन दिखा दो।।क्या करैं0।।

विश्व में व्यापक तुम्हीं हो - छिपे अन्तर बाह्य भी हो।
पथिक के बन पथ प्रदर्शक - दुःख भगा दो।।क्या करैं0।।

भक्त मन संवाद 277

जीवनधन जीवन तरणी यह पार लगाओ,
निज अनऔपा दिखा करके मत इसे डुबाओ।

क्या हमको अति अधम जानकर ध्यान न दोगे।
नहीं नहीं प्रभु शरण गहे की लाज निबाहो।।

तैर रही हैं असंख्य तरणी भवसागर में,
जब चाहो जिसको तुमहीं गहि हाथ बचाओ।

देख रहे हो क्या मुझमें जप तप भक्ती को,
कुछ भी साधन नहीं जिन्हें लखकर अपनाओ।

विनय यही निज करण से करुणानिधि स्वामी,
पथिक पतित को अब अपने ही घाट मिलाओ।।

भक्त मन संवाद 278

हरोगे कब हरि बिपदा मोर।।

गहन गर्त में गिरा हुआ हूँ किंचित चलै न जोर।
आज नाथ क्या पतित जानकर भूलि रहे सुध मोर।।

छाई हुई हृदय अन्तर में पाप कालिमा घोर।
दुसह् द्वन्द हैं मचा रहे ये मद मोहदिक चोर।।

विस्तृत मायाजाल बिछा है जिसका मिला न छोर।
जीवनेश बिन किसे पुकारूँ कौन सुनेगा शोर।।

मन भी मेरा अति चंचल है करता भण्डा फोर।
पथिक इसी में भूल रहा है प्रभू आसरा तोर।।

भक्त मन संवाद 279

हे भगवन भूल रहा भव में,
भ्रमबिपति छुटैया कोई नहीं।

यदि तुम भी नाथ न सुध लोगे,
तब और सुनैया कोई नहीं।।

क्या इसी भाँति भूलते हुए,
जीवन दिन सब खो जावेंगे।

शरणागत हूँ प्रभु आप बिना,
सत सुपथ दिखैया कोई नहीं।।

इतने पर भी यदि अधम जान,
अनऔपादृष्टि से काम लिया।

तब तुम बिन मेरा इस जग में,
दुरितदुःख मिटैया कोई नहीं।।

सन्तोष हेतु तुमही धन हो,
तुम बिन तो कुछ आधार नहीं।

हम निबल अपावन जन को तो,
तुम बिन अपनैया कोई नहीं।।

हे अधमोद्धारक दीनबन्धु,
तव प्रणयप्रभा का भिक्षुक हूँ।

भूलना न हे विभु आप बिना,
पथिक पति रखैया कोई नहीं।।

भक्त मन संवाद 280

निज सत्य प्रेम से हे प्रभु वर
यह जीवन विमल बनाने दो।
अपने स्वरूप में सानन्दित
मुझको प्रविष्ट हो जाने दो।।

तुम रोम रोम में रमे हुए
प्रत्यक्ष स्वानुभव में आवो।
हरि ओम ओम की ध्वनि निशि दिन
तन मन वाणी से गाने दो।।

अब तक तो मेरी भेद बुद्धि
भव भ्रान्ति कुपथ दिखलाती है।
तिमिराच्छदित हृदयान्तर में
पावन प्रकाश को आने दो।।

तव ज्ञानामृत को पा करके
अन्तर प्रतिभाबल पूर्ण बनूं।
इस दुखद अविद्या का हे प्रभु
सत्वर स्वाहा हो जाने दो।।

हे जीवनधन प्राणेश विभो
निज पावन भक्ति प्रदान करो
पथिक को शरण में अब अपनी
अक्षय आनन्द मनाने दो।।

भक्त मन संवाद 281

यहां राग गायन सुहाते नहीं हैं
कहीं सुख के सामान भाते नहीं हैं।।

बहुत दिन हुए उनको पाते नहीं हैं।
न जाने क्यों दरशन दिखाते नहीं हैं।।

करें क्या ! कुटिलता हृदय में समाई।
इसे अब प्रभू क्यों मिटाते नहीं हैं।।

न होती विरह वेदना प्रेम की ही।
कभी नयनों में आंसू आते नहीं हैं।।

चहें कुछ भी हो अब शरण आ चुके हैं।
तो क्यों मेरी बिगड़ी बनाते नहीं हैं।।

कभी तो भी उनकी दयादृष्टि होगी।
पथिक भी कहीं और जाते नहीं हैं।।

भक्त मन संवाद 282

नाथ हमारी दीन दशा पर
हुआ न अब तक ध्यान।
इसी तरह क्या हो जायेगा
जीवन का अवसान।।

मिटी न अब तक कठिन कलुषता
कुछ भी हुआ न ज्ञान।
अब भी अन्तर भरा हुआ है
दुर्विगाह अभिमान।।

तुम बिन हे प्रभु किसे सुनाऊँ
मनस्ताप का गान।
दीन दुखी जन के तो रक्षक
तुमही दया निधान।।

अब भी जाने कब तक मुझको

भक्त मन संवाद 283

बता दो प्रभो तुमको पाऊँ मैं कैसे।
निजानन्द में नाथ आऊँ मैं कैसे।।

विषय वासनायें निकलती नहीं हैं।
ये चंचल चपल मन मनाऊँ मैं कैसे।।

कभी सोचता तुमको रोकर पुकारूँ।
पर ऐसा हृदय को बनाऊँ मैं कैसे।।

यहां तो ये मन ही मलिन हो रहा है।
कलिल कालिमा को मिटाऊँ मैं कैसे।।

भुलाती है मुझको ये माया तुम्हारी।
प्रभो बिन दया पार जाऊँ मैं कैसे।।

हृदय दिव्य आलोक से जो विमल हो।
विनय किस तरह की सुनाऊँ मैं कैसे।।

सुपथ ये पथिक को यहीं से सुझा दो।
तेरे प्रेम ही में समाऊँ मैं कैसे।।

भक्त मन संवाद 284

प्राणधन ये प्राण अब घबरा रहे हैं।
व्यर्थ जीवन दिवस बीते जा रहे हैं।।

इसी आशा में कभी प्रियतम मिलेंगे।
बिरह पीड़ा बीच मोद बना रहे हैं।।

इस अनाश्रित के परम आश्रय तुम्हीं हो।
आपही का नाम निशि-दिन गा रहे हैं।।

स्वर्ग भी सूना मुझे प्राणेश तुम बिन।
ये मनोहर सुख दुःखद दिखला रहे हैं।।

छद्म वेशी रूचिर भोग विलास दिखते।
रम्य उपवन तपन सी सब ला रहे हैं।।

निरख पाऊँ कब तुम्हारी प्रेम छवि वो।
बहुत दिन से नयन ये अकुला रहे हैं।।

नाथ ले लो पथिक को अब मत भुलावो।
आप ही के अंक में जब आ रहे हैं।।

भक्त मन संवाद 285

मैं कुचाली कठोर हृदय यदि हूँ।
तो क्यों न इसे हो सुधारते तुम।।

हूँ माइक मोह में डूबा हुआ
तो क्यों न इसे हो उबारते तुम।।

ये नाम क्यों होता पतित पावन
यदि पापियों को नहीं तारते तुम।।

ये पथिक बार ऐसी क्यों देर की
क्या देखकर हिम्मत हारते तुम।।

भक्त मन संवाद 286

कितने दिन हो चुके यूँ भटकते हुये
प्रभू मेरी दशा की खबर ही नहीं।
हाय कैसी करूँ क्या ही दुर्भाग्य है
विनय बहुतेरी की कुछ असर ही नहीं।।
आश तो है यही दुःख मिट जायेंगे
हृदय से आपका नाम गायन करूँ।
किन्तु अब तक न मैं प्रेमपथ पा सका
आपको नाथ इसकी फिकर ही नहीं।।
मैं तो आ ही रहा हूँ शरण आपके
क्यों प्रभो आपकी क्या न होगी दया।

शत्रु संग में छिपे हैं सताते मुझे
इनको तो आपका कुछ भी डर ही नहीं।।
आप अपने लिये निर्विकारी बने
त्रिनयन कहीं त्रैशूलधारी बने।
अब हमारे लिये आसुरी सैन्य के
नाश करने को क्या कोई शर ही नहीं।।
चाहे कितना ही पापी कुटिल क्यों न मैं
आज तो बस प्रभो शिव पुकारूँ तुम्हें।
नाथ कर दीजिये शीघ्र कल्याण अब
क्या पथिक बार शिवशंकर ही नहीं।।

भक्त मन संवाद 287

गतिमति जग व्योपार में,
कर्तार की कोई क्या जानै।।

कारण कार्य कहाँ से आया,
किस प्रकार कब विश्व बनाया।
विधि प्रपंच विस्तार में,
निस्तार की कोई क्या जानै।।

मैं तू कौन कहाँ ये क्या है,
निर्णय करती क्या प्रज्ञा है।
प्रऔति विऔति व्योहार में,
सत्सार की कोई क्या जानै।। 3।।

जग के अति सुविशाल सदन में,
भ्रमित जीव के करुण रुदन में।
प्रभु बिन बिनय पुकार में,
उद्धार की कोई क्या जानै।।

रोते को किस तरह हँसाते,
सोते को किस तरह जगाते।
दुखियों के उपचार में,
शुचिप्यार की कोई क्या जानै।।

गिरा हुआ किस भाँति चढ़ा है,
रुका हुआ किस तरह बढ़ा है।
करुण पुनरुद्धार में,
उपकार की कोई क्या जानै।।

केवल सतचिद्रूप प्राणधन,
जीवन पाते जीव बुद्धि मन।
प्रतिफल पथिक विचार में,
आधार की कोई क्या जानै।।

भक्त मन संवाद 288

दूर हम समझते थे बातिन में वो निहां निकले।
दानिशो दिल व नफस की भी जीस्त जां निकले।।

बहकीकत में तो उनका पता कहीं भी नहीं।
हमीं खुद उनके रास्त हस्तिये निशां निकले।।

चश्मये दिल की खुलीं वस्ल हमबगल पाया।
जुस्तजू करने में खिरदो कलब मकां निकले।।

अव्वली आखिरी रोशन तू ही जेरो बाला।
आब आतश व बाद जमीं आसमां निकले।।

नेस्त दीगर है सिवा तेरे एक आप ही आप।
पथिक के चश्म हकीकत में एकसां निकले।।

भक्त मन संवाद 289

ऐ मेरे दिलरूबा अबरये सादिर हुवा,
इशवए रम्जफितरत सितम इल्मोफन।

देख पड़ते हैं हर सूरतो रंग में चूंकि,
जामां है इनका किया जेबतन।।

पर हकीकत में हमसे जुदा तुम नहीं,
जबकि शिर्कत का दिल से रिहा हो वहम।

अहा जिसपै कि हो जाती चश्मे करम,
वहाँ तेरा ही नूरे जिया जान मन।।

मैं कहां जाऊँ किस जां पै देखूँ तुझे,
जबकि हर शै में तेरी ही हरकत वो दम।

वाह क्या खूब तेरे ही पर्दे सनम,
तुमको बतला रहे आज आईना बन।।

मैं तो तालिब तुम्हारा तलबगार हूँ,
ठीक कर लेने दो अपना चालो चलन।

कब तलक जिस्मइस्मो के पर्दों में तुम,
अब छिपोगे बता दो ऐ प्यारे सजन।।

गैरियत दिल की मुतलक मिटा लूं जरा
वक्त खुफ्ता से मैं होश पा लूँ जरा।

गैरसानी मुजर्रद में खुद को मिटा,
ये पथिक होगा बस बोनिशां लावतन।।

भक्त मन संवाद 290

क्या कहें हम बहुत कुछ तो कह चुके हैं।
ठोकरें किस किस तरह की सह चुके हैं।।

आप खुद वाकिफ हैं मेरी हालतों से।
किस मुसीबत में अभी तक रह चुके हैं।।

अब न प्यारे जाल फितरत में फंसाना।
बहुत कुछ दुनियां को अब तक चह चुके हैं।।

तसव्वर दिल में जुबां में नाम तेरा।
और अरमां दिल के दिल में तह चुके हैं।।

चले आने दो पथिक को सिम्त अपने।
बहरे आलम में बहुत दिन बह चुके हैं।।

भक्त मन संवाद 291

प्रभु जानते हो सब कुछ हम फिर भी सुनाते हैं।
जो कुछ दशा है मन की कहने में लजाते हैं।।

हे नाथ तुम्हीं से तो मिलता है हमें सब कुछ।
तुमको ही भूल करके हम दुःख उठाते हैं।।

खोजें कहाँ तुम्हें किस रूप में पहचानें।
तुममें ही हैं पर तुमकों हम देख ना पाते हैं।।

अभिमान, मोह माया में मग्न हो रहे हम ।
उद्धार के लिये अब प्रभु तुमको बुलाते हैं।।

वह त्याग का बल दे दो जिससे कि शान्ति पायें।
हम ''पथिक'' तुम्हीं से प्रभु यह आस लगाते है।।

भक्त मन संवाद 292

यही एक अभिलाश हृदय की किस विधि से प्रभु तुमको पाऊँ।
सबके प्रियतम सब उर वासी तब क्यों बाहर खोज लगाऊँ।

तुम्हीं बताओ कौन जतन से पूरी हो द-र्न की आ-ग।
योग्य नही हूँ, किन शब्दों में अपने प्रेमोद्गार सुनाऊँ।

दुःखी हृदय की बिरहाकुलता मूक भावना करुण पुकारे।
तुम अन्तर्यामी सब सुनते यही सोच सन्तोश मनाऊँ।

मैं अति दीन दरिद्र, क्षुद्र में अटक कर भटक रही हूँ।
मुझे वही साधना सिखा दो जिससे सारे दोश मिटाऊँ।

तन में ही ममता के कारण समता ला न सकी हूँ अब तक।
अब करुणानिधि ज्ञान योग दो निज को सेवा योग्य बनाऊँ ।

नाथ तुम्हारी औपा किरण से आलोकित हो मेरा जीवन।
पथिक बनूँ मैं प्रेम धाम की हे प्रियतम तुम मय हो जाऊँ।

विवेक वाणी 293

अब तक तुम मुक्त भक्त होते, देखो कितने दिन बीत गये।
खेलते और खाते सोते, देखो कितने दिन बीत गये।।

यह दुर्लभ मानव तन पाकर, प्रभु के प्रेमी न हुये आकर।
तब तो फिर व्यर्थ समय खोते, देखो कितने दिन बीत गये।।

कितनी असार चिन्ताओं का, नित राग द्वेषमय भावों का
अति दुःखद भार ढोते-ढोते, देखो कितने दिन बीत गये।।

कंचन कमनी या काया में अब, मुग्ध न होना माया में।
ऐ पथिक यहाँ हँसते रोते, देखो कितने दिन बीत गये।।

विवेक वाणी 294

आज आनन्द मनाये हम, प्रेम से प्रभुगुण गायें हम।।

मोह निद्रा में जो सोते, दुःखद स्वप्नों में जो रोते।
मान धन भोगों के पीछे, व्यर्थ जीवन है जो खोते।

ज्ञान में उन्हें जगायें हम, आज आनन्द मनायें हम।।
ज्ञान से मिटती है ममता, ज्ञान से ही आती समता।

ज्ञान से सन्मतिगति मिलती, त्याग की तप की भी क्षमता।
ज्ञान में दर्शन पायें हम, आज आनन्द मनायें हम।।

विवेक वाणी 295

इस जगत में सत्स्वरूप की खोज लगाने वालों से पूछो, जीवन क्या है?
सेवा को त्याग प्रेम को पूर्ण बनाने वालों से पूछो, साधन क्या है?

है औपा उसी परमेश्वर की जब संतों की संगति मिलती, मिलता विवेक।
श्रद्धा के सहित सन्त संगति में आने वालों से पूछो, प्रवचन क्या है?

वैसे तो शास्त्रों वेदों के विद्वान अनेकों मिलते हैं, पर शान्त कौन?
विद्या द्वारा उस अमृतत्व के पाने वालों से पूछो, यह तन क्या है?

परउपदेशक तो कितने ही कुछ पढ़ सुन करके बन जाते, आचरण नहीं।
कथनानुसार अथवा कर्तव्य निभाने वालों से पूछो, निरसन क्या है?

जब कभी अनेकों मतवालों की अपनी-अपनी छनती है, सबकी सुन लो।
फिर भेद भ्रान्ति से रहित विवाद मिटाने वालों से पूछो, मन्थन क्या है?

निष्पक्ष विवेकीजन चिन्मय जीवन का अनुभव करते हैं, अविचल मति से।
उन आत्मतृप्त, आनन्दामृत बरसाने वालों से पूछो, प्रशमन क्या है?

हरि नाम कीर्तन के प्रेमी तब तक विश्राम न पाते हैं, यदि है सकाम।
तुम निष्कामी प्रभु की सुकीर्ति के गाने वालों से पूछो, सुमिरन क्या है?

हमसे तुमसे चाहे जिससे परदोषों की चर्चा सुन लो, गुण गर्व छिपा
अति विनयी होकर अपने दोष हटाने वालों से पूछो, वन्दन क्या है?

जो वीतराग हैं जिन्हें मान धन भोग सुखों की चाह नहीं, जो नित्यमुक्त।
वह 'पथिक' हितैषी सत परमार्थ दिखाने वालों से पूछो, दर्शन क्या है?

विवेक वाणी 296

ओ आने वालों इतना समझ लो, इस जग से तुम को जाना ही होगा।
यदि रह गई हैं कुछ वासनायें, उनके लिये फिर आना ही होगा।।

जब तक किसी पर अधिकार रख कर, जितना अधिक तुम सुख भोगते हो।
मानो न मानो जीवन में अपने, पुण्यों की पूँजी गँवाना ही होगा।

दानाधिकारी बन कर किसी से, श्रद्धा के बाहर यदि धन लिया है।
तुम ले के देना भूलो भले ही, जो ऋण लिया वह चुकाना ही होगा।

जिससे किसी को दुख हो रहा हो, ऐसा असत् कर्म होने न पाये।
सुख के लिये जो दुख दे किसी को, उसको कभी दुख उठाना ही होगा।

तुम दूसरों को वह देते रहना, जो दूसरों से स्वयं चाहते हो।
जैसा भी दोगे वैसा प्रकृति से, कई गुणा तुमको पाना ही होगा।।

कुछ जानना है तो अपने को जानो, मानना है तो प्रभु को ही मानो।
करना है तो सबकी सेवा करो तुम, जीवन किसी विधि बिताना ही होगा।।

छोड़ो अहंता ममता जगत की, परमात्मा से ही प्रीति जोड़ो।
देखो पथिक तुम जिनकी शरण हो, उन पर ही विश्वास लाना ही होगा।।

विवेक वाणी 297

ओम आनन्दम् ओम आनन्दम् ओम आनन्दम् गान करो तुम।।
जो सत् चिन्मय सर्व साक्षी ज्ञान रूप में ध्यान करो तुम।।

निर्मम अनासक्त हो जाओ सब कुछ छूट जाने से पहले।
अभी नित्य जीवन को जानो, कभी मृत्यु आने के पहले।

प्राप्त शक्ति सम्पत्ति योग्यता का न कहीं अभिमान करो तुम।।

पाँच तत्व के नश्वर ढाँचे के तुम अपना रूप न मानो।
इसमें क्षण-क्षण परिवर्तन है अपने सत्स्वरूप को जानो।
जो उत्पत्ति विनाश हित है उसकी ही पहचान करो तुम।।

जो खोया ही नहीं उसे क्यों खोज रहे हो निज को खोकर।
खोजो नहीं स्वयं में खोदो दृश्य जगत् से असंग होकर।
तैरो नहीं शून्य में डूबो परमाश्रय का ज्ञान करो तुम।।

मन जब तन्मय जड़ तन में है, तब भी तुम नित चेतन में हो।
मन जब सन्तापित शोकित है, तब भी तुम आनन्द धन में हो।
बाहर नहीं स्वयं में सत्यामृत का अनुसन्धान करो तुम।।

मन जब भूत भविष्यत् में है निज को वर्तमान में देखो।
मन जब लघु में अटक रहा हो अपने को महान में देखो।
पथिक रुको बस जहाँ हो वहीं आनन्दामृत पान करो तुम।।

विवेक वाणी 298

गुरुजन जो कुछ कह जाते हैं तुम उसे भुलाओगे कब तक।
देखना यही है जग में तुम चैन मनाओगे कब तक।।

अगणित अभिमानी चले गये माया ममता से छले गये।
वे ले गये न कौड़ी संग में तुम लोभ बढ़ाओगे कब तक।।

जो गया न अब वह आयेगा जो है वह निश्चय जायेगा।
जब कोई सदा न रह सकता तब तुम रह पाओगे कब तक।।

जिसको गाकर रोना होता जिसको पाकर खोना होता।
उस नश्वर वैभव सुख के तुम यह गीत सुनाओगे कब तक।।

मिलती है परम शांति जिससे मिटती है दुखद भ्रांति जिससे।
ऐ 'पथिक' उसी परमेश्वर की तुम शरण न आओगे कब तक।।

विवेक वाणी 299

जग में सत्संग बिना मानव, सन्मति गति पाना क्या जानें
आसुरी प्रकृति के जो प्राणी, सत्संग में आना क्या जानें।।

जीवन में जितने दुख दिखते, वह निज दोषों के कारण ही।
पर जिसमें इतना ज्ञान न हो, वह दोष मिटाना क्या जानें।।

उन्नति का साधन सेवा है, इससे ही आत्म शुद्धि होती।
पर लोभी अभिमानी कामी सेवा को निभाना क्या जानें।।

गांजा, अफीम या भंग, चरस सिगरेट शराब पीने वाले।
व्यसनों को जो नहीं छोड़ पाते, मन वश में लाना क्या जानें।।

जो स्वयं ईर्ष्या काम क्रोध की अग्नि लिये फिरते उर में।
जब अपनी लगी बुझा न सके, वह पर की बुझाना क्या जानें।।

आलसी विलासी धर्म विमुख, इन्द्रिय सुख लोलुप अज्ञानी।
जब बिगड़े आप ही दूसरों की बिगड़ी को बनाना क्या जानें।।

जो तन को मल मल धोते हैं, भीतर मन जिनका काला है।
वह मोही गोरेपन के मन का मैल छुड़ाना क्या जानें।।

वह साधक भी धोखे में हैं, करते प्रपंच का जो चिंतन।
यदि प्रेम नहीं तब प्रियतम प्रभु में ध्यान लगाना क्या जानें।।

जो पहुँचे हुए सन्त जन हैं, उनसे पूछे पथ की बातें।
जो बारह बाट भटकते हैं, वह मार्ग दिखाना क्या जानें।।

दुख में त्यागी जो हो न सके, बन सके न सुख में जो उदार।
वह पथिक प्रेममय प्रियतम से तन्मय हो जाना क्या जानें।।

विवेक वाणी 300

जिसे जाना है दुःख से पार सुख की चाह तजो।
ज्ञानियों का यही है विचार सुख की चाह तजो।।

देख लो चाह ने किसको नहीं नचाया है।
चाह की पूर्ति में कुछ हाथ नहीं आया है।
जिसे सुख मानते हो वह तो सुख की छाया है।
प्रतीत होती है मिलती नहीं ये माया है।
मिट जायेंगे सारे विकार सुख की चाह तजो।।

धन की ये चाह ही निर्धन हमें बनाती है।
मान को चाह ही अपमान का दुःख लाती है।
भोग की चाह ही तो रोग में फँसाती है।
चाह के रहते कहीं चैन नहीं आती है।
दुखियों से यही है पुकार सुख की चाह तजो।।

चाह मिट जाये तो सब दुःख मिटे जीवन में।
चाह मिट जाये तो चिन्ता न रहे कुछ मन में।
चाह मिटते ही चित्त लय हो सत्य चिद्घन में।
चाह के रहते शान्ति मिलती नहीं घर वन में।
यदि करना है प्रभु से प्यार सुख की चाह तजो।।

चाह के पीछे जीव सदा भार ढोता है।
चाह पूरी नहीं होती है तभी रोता है।
चाह रहते भला निश्चिंत कौन सोता है।
चाह को छोड़ दे बस वही मुक्त होता है।
खुला सबके लिये यह द्वार सुख की चाह तजो।।

अचाह पद में कहीं दर्द नहीं दाह नहीं।
आह उठने के लिये रहती है फिर राह नहीं।
चाह मिटते ही किसी हानि की परवाह नहीं।
वो शहन्शाह है जिसमें रही कुछ चाह नहीं।
'पथिक' चाहो जो अपना सुधार सुख की चाह तजो।।

विवेक वाणी 301

जिससे कोई भूल न हो, भगवान वही है।।
भूल हो, भूल का भान न हो हैवान वही है।।

भूलों के रहते चित्त में जिसके चैन नहीं आये।
अपना सुधार करता जाये, इन्सान वही है।।

आसुरी प्रकृति वह, जहाँ भूल का दुःख नहीं होता।
जो भूल देखने दे न कहीं, अभिमान वही है।।

जो हानि देखनी पड़ती, वह सब भेंट भूल की है।
जो भूल करे वह भोगे, प्रकृति विधान वही है।।

यह सारी भूल भोग सुख की तृष्णावश ही होती।
वह पथिक जो कि तृष्णा तज दे मतिमान वही है।।

जिसे तुम कहते हमारा यहाँ कुछ अपना नहीं है।
जो मिला प्रभु का ही सारा कुछ अपना नहीं है।।

आज जिनके प्यार में तुम मोह बस इतरा रहे हो।
कभी खीचेंगे किनारा यहाँ कुछ अपना नहीं है।।

भले ही वह कर रहे हों हृदय तन धन सब समर्पण।
बना जो आँखों का तारा यहाँ कुछ अपना नहीं है।।

अभी जो प्रियतम बने थे भूलते देखा उन्हीं को।
तभी विस्मित हो पुकारा यहाँ कुछ अपना नहीं है।।

जो मिलेगा छूटेगा ही रह न पायेगा सदा कुछ।
'पथिक' निज प्रभु बिन तुम्हारा यहाँ कुछ अपना नहीं है।।

विवेक वाणी 302

जग में पशु भी खाते-सोते, स्वार्थपूर्ति में सकुशल होते।
वह मानव क्या? भोग सुखों में ही जो शक्ति गंवाये।।

मित्रो! सावधान अब रहना, जो कुछ दुःख आये वह सहना।
धैर्य-पूर्वक सह लेना ही मन का तप कहलाये।।

कभी किसी को कष्ट न देकर, हितप्रद सेवा का व्रत लेकर।
निज कर्तव्य निभाते चलना, पर अभिमान न आये।।

कभी न अपना लक्ष्य भुलाना, अपने को निष्काम बनाना।
जो कि कामना युक्त हृदय है, प्रेम नहीं कर पाये।।

तन से श्रम मन से संयम हो, बुद्धि विवेकी उर उपाशम हो।
'पथिक' यही सुन्दर जीवन है, जो प्रभु के मन भाये।।

विवेक वाणी 303

जो बुद्धिमान मानव है, वह अपना कर्तव्य भुलाते क्यों।।
जीवन में जो दुःख देते, उन दोषों को छोड़ न पाते क्यों।।

सेवक में मनमुखता कैसी, स्वामी का क्यों अनुदार हृदय।
जो पुण्य प्राप्ति का अवसर है, उसको ही व्यर्थ गँवाते क्यों।।

अपने ही पुण्यों के द्वारा अनुकूल परिस्थिति मिलती है।
कुछ व्यक्ति दूसरे के वैभव को देख देख ललचाते क्यों।।

जो स्वार्थ पूर्ति में रस लेते, परमार्थ सिद्धि कैसे होगी।
जब राग द्वेष को तज न सके, त्यागी प्रेमी कहलाते क्यों।।

कर्तव्य उसे ही कहते हैं जो, कर्म सर्व हितकारी हो।
कोई जो कुछ भी कर सकते, करने में देर लगाते क्यों।।

अधिकार मान धन की तृष्णा से, चित्त अशान्त रहा करता।
उत्थान चाहने वाले इस तृष्णा को ही न मिटाते क्यों।।

भोगों से पूर्ण विरक्ति बिना भगवदानुरक्ति न हो सकती।
जो 'पथिक' भक्ति के अभिलाषी, वे प्रपंच को अपनाते क्यों।।

विवेक वाणी 304

'जो है' वह भुलाने के काबिल नहीं है।
'नहीं है' वह पाने के काबिल नहीं है।

'जो है' वह अभी है, यहीं 'है' हम उसमें।
किसी को दिखाने के काबिल नहीं है।।

हम उसके ही द्वारा यह सब देखते हैं।
'वह है' बस बताने के काबिल नहीं है।।

न होते हुए 'है' सा जो भासता है।
वह विश्वास लाने के काबिल नहीं है।।

जो 'है' वही सत् है, वह परमात्मा है।
असत् से छिपाने के काबिल नहीं है।।

'पथिक' तुम जहाँ हो वही पर तो वह है।
वह खोज लगाने के काबिल नहीं है।।

विवेक वाणी 305

तुम हो पथिक साधना पथ में सम्भल सम्भल कर पैर बढ़ाना।।
अविनाशी के सम्मुख होकर नश्वर में मत प्रीत लगाना।।

दृढ़ संकल्प और साहस के साथ प्रेम को पूर्ण बनाकर।
आकृति नहीं किन्तु तुम अपनी, परम विरागी प्रकृति सजाकर।
शान्त स्वस्थ समता में रहना, कभी न अपना लक्ष्य भुलाकर।
पूर्ण तृप्ति सन्तुष्टि मिलेगी अपने में ही प्रभु को पाकर।
आकर योग भूमिका में अब, भोग भूमि में लौट न जाना।।

यदि तुम अपना मान किसी को, मन में ममता प्यार लिये हो।
और साथ ही शान मान के, पद उपाधि अधिकार लिये हो।
भौतिक जीवन रक्षा के हित, धन वैभव का भार लिये हो।
भय लालचवश किसी व्यक्ति का अब भी यदि आधार लिये हो।
तब तो तुम बोझिल हो देखो, बहुत कठिन है पैर उठाना।।

कितने साधक चले रुक गये कुछ आगे भी रुक जायेंगे।
रुकने वाले बढ़े हुए को देख देख कर पछतायेंगे।
इस पथ में चंचल चित वाले जहाँ तहाँ ठोकर खायेंगे।
जो कि तपस्वी त्यागी हैं वह सद्गति परम शान्ति गायेंगे।
प्रेमी का कर्तव्य यही है सभी भाँति प्रभु को अपनाना।।

देखो कितने अविवेकी जन मोह निशा में ही सोते हैं।
दुःखद स्वप्न में गुरु वाक्यों से कोई जाग्रत भी होते हैं।
ज्ञानवान भी सुखासक्ति वश जग में मूढ़ बने होते हैं।
आत्मज्ञान से वंचित रह कर यहाँ व्यर्थ जीवन खोते हैं।
साथ न देगा सदा जगत् में जिसे मोहवश अपना माना।।

साधन पथ में लक्ष्य न भूलो यही तुम्हारा मुख्य काम है।
वहीं तुम्हें विश्राम मिलेगा जहाँ तुम्हारा परम धाम है।
पर में नहीं स्वयं में रुकने से मिलता सबको विराम है।
जिसका आना जाना रहता यहाँ उसी का 'पथिक' नाम है।
बाहर नहीं स्वयं में ही है सबका निश्चित सत्य ठिकाना।।

तुमको छलिया हम क्यों न कहें जब नहीं समझ में आते हो।
निज छांह न छूने देते हो इक क्षण भी दूर न जाते हो।।

विवेक वाणी 306

दुनिया में कुछ भी पाकर के, कब तक सुख भोग सकोगे।
अना सत लक्ष्य भुला करके, कब तक सुख भोग सकोगे।।

जीवन की घड़ियाँ बीत रहीं, इन्द्रियाँ तुम्हें है जीत रहीं।
विषयों में चित्त फँसा करके, कब तक सुख भोग सकोगे।।

जितना भी भोगों का सुख है, उसके पीछे निश्चित दुःख है।
उसमें ही समय बिता करके, कब तक सुख भोग सकोगे।।

क्षण-क्षण जिसमें है परिवर्तन, पाता है शान्ति न जिसमें मन।
उससे ही प्रीति लगाकर के, कब तक सुख भोग सकोगे।।

सब अन्त समय छुट जायेगा, जो कुछ है काम न आयेगा।
जन बल धनवान कहा करके, कब तक सुख भोग सकोगे।।

तपसी भोगी राजा रानी, मर गये करोड़ों अभिमानी।
अपना वैभव यश गा करके, कब तक सुख भोग सकोगे।।

जो शक्ति मिली परहित करलो, सच्चे प्रभु का आश्रय धन लो।
वैभव अधिकार बढ़ कर के कब तक सुख भोग सकोगे।।

यदि सत्, स्वरूप का ध्यान नहीं, निष्काम प्रेम सदज्ञान नहीं।
ऐ 'पथिक' कहीं आ जा करके, कब तक सुख भोग सकोगे।।

विवेक वाणी 307

दुर्लभ है मानव जीवन में जड़ता का अवसन करना।
दुर्लभ है मन वचन कर्म से सत्पथ में प्रस्थान करना।।

दुर्लभ नहीं शक्ति का पाना बहुत शक्तिशाली है जग में।
जो कि भोग के लिये शक्ति का दुरुपयोग करते पग-पग में।
दुर्लभ है दुःखियों की सेवा, प्रीति सहित सम्मान करना।।

दुर्लभ नहीं अधिक धन पाना बहुत धनी देखे जाते हैं।
कुछ तप के बल से धन पाकर क्षुद्र नदी सम इतराते हैं।
दुर्लभ है अधिकार देखकर विनयपूर्वक दान करना।।

दुर्लभ नहीं ज्ञान का होना, ज्ञानी बहुत मिला करते हैं।
ब्रह्म तत्व की चर्चा करते माया में जीते मरते हैं।
दुर्लभ जीवन मुक्ति के लिये, परम तत्व का ज्ञान करना।।

दुर्लभ नहीं ध्यान का लगना, बगुला ध्यान लगा लेते हैं।
अभ्यासी जन प्राण रोककर शून्य समाधि दिखा देते हैं।
दुर्लभ है शाश्वत विशुद्ध चैतन्यरूप का ध्यान करना।।

दुर्लभ है संतो की संगति दुर्लभ श्रद्धा का टिक जाना।
दुर्लभ है निष्काम प्रेम और दुर्लभ तप व्रत नियम निभाना।
दुर्लभ है दैवी गुण द्वारा जीवन का उत्थान करना।।

दुर्लभ वे नर जो कि अहंता ममता सकल दोष के त्यागी।
दुर्लभ है सत असत् विवेकी दुर्लभ जग में परम विरागी।
दुर्लभ 'पथिक' परम पद पाना आनन्दामृत पान करना।।

विवेक वाणी 308

देखो किसने क्या पाया, मानव क्यों जग में आया।।

आने वालों को देखो क्या लेकर वे आते हैं।
जाने वालों को देखो, क्या संग लेकर जाते हैं।।
कुछ पुण्य किये या यूँ ही, यह नर तन व्यर्थ गँवाया।।देखो0।।

उस लोभी को भी देखो संचय का जिसे व्यसन है।
कितनी ही सम्पत्ति जोड़ी पर तृप्त न होता मन है।
कौड़ी न साथ जायेगी, फिर किसके लिये कमाया।।देखो0।।

उस कामी को भी देखो, मन भरा या कि रीता है।
इच्छाएँ पूरी करते, कितना जीवन बीता है।
यह वही काम है जिसने, किसको-किसको न नचाया।।देखो0।।

उस मोही को भी देखो, सबकी ममता में फूला।
निज देह गेह में फँस कर उस परमेश्वर को भूला।
यह मोह दुःखों की जड़ है, इसने किसको न रुलाया।।देखो0।।

उस अभिमानी को देखो, यह विभव रहेगा कब तक।
उससे भी बढ़ कर जग में, हो गये करोड़ों अब तक।
मिट्टी में मिल गई उनकी जो दर्शनीय थी काया।।देखो0।।

उस दानी को भी देखो, जितना बोता जाता है।
वह कई गुना बढ़कर ही, उसके सन्मुख आता है।
जिसने जितना दे डाला, उतना ही लाभ उठाया।।देखो0।।

उस त्यागी को भी देखो, जो दुःखद दोष को तजकर।
निर्द्वन्द शान्ति पाता है, सत परमेश्वर को भज कर।
भोगी ने राग बढ़ाया, त्यागी ने प्रेम अपनाया।।देखो0।।

उस ज्ञानयुक्त को देखो, जिसको न कहीं कुछ भय है।
दिख रहा ज्ञान में उसको, यह विश्व आत्मामय है।
जो कोई सन्मुख आया, उसका अज्ञान मिटाया।।देखो0।।

उस प्रेमयुक्त को देखो, जिसका मन प्रभुमय होकर।
निजमय ही प्रभु को पाता, सब आशा चिन्ता खोकर।
वह 'पथिक' धन्य है जिसकी, प्रज्ञा में प्रेम समाया।।देखो0।।

विवेक वाणी 309

देखो जो कोई देख सको है जीवनदाता कौन।
शरणागत दीनों दुःखियों के है दुःख मिटाता कौन।।

यह किसकी सत्ता है जिसके बिन तृण भी हिल न सके।
यह शक्ति कौन देता जिसके बिन कण भी मिल न सके।
सत नियम धर्म से पूर्ण व्यवस्थित विश्व बनाता कौन।।

वह कौन जागता रहता है जब हम सो जाते हैं।
है कौन याद रखता हमको जब हम खो जाते हैं।
उस विस्मृत अपने सत्स्वरूप की याद दिलाता कौन।।

होता भीषण संहार कहीं नव सृजन दीखता है।
यह मिटा मिटा कर रूप बनाना कौन सीखता है।
इस अशुभ असुन्दर से सुन्दर शुभ का निर्माता कौन।।

हँसते हैं खिल-खिल सुमन मुदित मन भ्रमर उछलते हैं।
सम्भ्रान्त ‘पथिक’ को भक्ति मुक्ति का मार्ग दिखाता कौन।।

विवेक वाणी 310

देखो जो कोई देख सको गुरुजन तो दिखाये जाते हैं।
इस अहंकार के द्वारा कितने दोष बढ़ाये जाते हैं।।

मतिमान चतुर अति कुटिल बने, जनता सेवक पदलोलुप हैं।
धनवान प्रशासन करते हैं गुणवान हटाये जाते हैं।।

स्वारथी समाज सुधारक हैं, उद्धारक शक्तिहीन दिखते।
कुछ धर्म प्रचारक धन लेकर जीविका कमाये जाते हैं।।

जो प्राप्त भोग का भाग न दे, भोगते अकेले ही सब कुछ।
तब वही भोग भोजन ही, उस भोगी को खाये जाते हैं।।

पण्डित कहते गोदान करो, पर लोभ में दिया नहीं जाता।
लोभी से बीस आने के ही गोदान कराये जाते हैं।।

जो स्वर्ग चाहते पुण्य बिना, पापों के होते नर्क नहीं।
वह व्यक्ति लोभ या भय वश ही तीरथ में नहाये जाते हैं।।

ईश्वर की प्रकृति में सर्वोपरि इस अहंकार की लीला है।
इसके मनमाने कितने ही भगवान बनाये जाते हैं।।

भक्तों के प्रेम में नाचे थे भगवान कभी आनन्दित हो।
अब अहंकार की तृप्ति हेतु भगवान नचाये जाते हैं।।

जिसका अस्तित्व सत्य ही है, जो दिखता आत्मज्ञान द्वारा।
उस अहंकार के पार ‘पथिक’ निज प्रभुमय पाये जाते हैं।।

विवेक वाणी 311

धन के लोभी धन मद छोड़ो, दाता प्रभु से नाता जोड़ो।

धन से कल्पित सुख मिलता है, शान्ति नहीं मिलती है धन से।
धन तो छिन जाता छूट जाता, लोभ नहीं जाता है मन से।
धन से मन्दिर बन जाते हैं, मूर्ति प्रतिष्ठित हो जाती है।
धन से प्रेम नहीं मिलता है, धन से भक्ति नहीं आती है।
धन से भोग सुलभ होते हैं, पर भगवान नहीं मिलता है।
चेतो लोभ पाश को तोड़ो, धन के लोभी धन मद छोड़ो।।

धन से उपदेशक मिल जाते पर अविवेक नहीं मिट पाता।
धन के बल से सुखासक्त मानव का मोह नहीं है जाता।
धन देकर शिक्षक रख सकते, पर मेधावी बुद्धि न मिलती।
धन है वस्तु प्राप्ति का साधन, धन से आत्म विशुद्धि न मिलती।
धन से सुन्दर चित्र सजा लो, सद्चरित्र धन से न मिलेगा।
दैवी सम्पद हीन धनी का हृदय कमल धन से न खिलेगा।
धन के लोभ पात्र को फोड़ो धन के लोभी धन मद छोड़ो।।

धन से विटामिन्स मिलते हैं, धन से शक्ति नहीं मिलती है।
धन से ऑक्सीजन मिल जाता, धन से साँस नहीं हिलती है।
धन के बल पर सर्जन मिलते दिल दिमाग जोड़ देते हैं।
पर धन से अमरत्व न मिलता तन को प्राण छोड़ देते हैं।
धन के बल पर कूलर लगा कर शीतल कर लो भव्य भवन को।
पर धन द्वारा शान्त नहीं कर सकते हो सन्तापित मन को।
धन की तृष्णा से मुख मोड़ो धन के लोभी धन मद छोड़ो।।

धन के बल पर तीर्थ धाम में मन्दिर में प्रवेश पा सकते।
पर धन की रिश्वत देकर के कोई स्वर्ग नहीं जा सकते।
धन छूटने के पहले ही तुम पात्र देख दानी बन जाओ।
प्रभु की औपा समझ कर भीतर सरल निराभिमानी बन जाओ।
धन की रक्षा करते-करते धन के लोभी मर जाते हैं।
किन्तु परम-प्रभु के प्रेमी उदार दानी बन तर जाते हैं।
'पथिक' कथन को सार निचोड़ो धन के लोभी धन मद छोड़ो।।

विवेक वाणी 312

निज सत्स्वरूप की जिसे पहिचान नहीं है।
वह अहंकार में है सावधान नहीं है।।

जो अपने दुर्विकारों के रहता है वशीभूत।
वह पाप के पथ में है पुण्यवान नहीं है।।

दुर्भाग्य से अपने को वो है मानता विद्वान।
जिस को निज अज्ञान का भी ज्ञान नहीं है।।

भोगों की अधिकता से वहीं होता मन मलीन।
दुःखियों के लिये सुख का जहाँ दान नहीं है।।

वह धन्य है जिसको मिला संतोष परम धन।
धन की जिसे है चाह वो धनवान नहीं है।।

तब तक किसी को शान्ति कहीं मिल नहीं सकती।
आनन्दमय भगवान का यदि ध्यान नहीं है।।

सद्भक्ति मुक्ति प्राप्त वो कर पाता है 'पथिक'।
जिसको किसी भी वस्तु का अभिमान नहीं है।।

विवेक वाणी 313

परमप्रभु की प्रिय शाश्वत आत्माओं,
तुम्हें देख कुछ गीत गाने की मन में।।

जो कुछ भी अभी तक समझा है मैंने।
वही सब तुम्हें भी सुनाने की मन में।।

परम तत्वदर्शी जगत् को ही प्रभुमय।
प्रभु को जगतमय सतत् देखते हैं।।

इसी भाव से सर्व रूपों में अपने।
सर्वस्व प्रभु को ही पाने की मन में।।

मुझे देखकर कोई धोखा न खाना।
नहीं दे सकूँगा मैं वरदान कोई।।

कदाचित तुम्हें जो भी कुछ मिल चुका है।
वह छिन जायेगा यह बताने की मन में।।

तुम्हारा वही है जो तुमसे न छूटे।
कभी भी कहीं भी जो तुमको न छोड़े।।

उसे खोजना मत पहिचान लेना।
न रखना कहीं आने जाने की मन में।

बहुत सुन चुके हो हमारी भी सुन लो।
कभी आयेगा जो अभी उसको देखो।।

जो कुछ मुझ 'पथिक' को दिखाया गया है।
वही सब तुम्हें भी दिखाने की मन में।।

विवक वाणी 314

प्रेमियों अब कदम बढ़ाओ तो, इधर भी कुछ करके दिखाओ तो।।
बहुत दिन भोग का सुख देख चुके, इधर से दृष्टि अब घुमाओ तो।।

देख लो, कितने शक्तिहीन हुये, अभी समय है चेत जाओ तो।।
सुखों के अन्त में दुःख ही मिलता, तुम भी समझोगे, इधर आओ तो।।

इतना जीवन बिता चुके जग में, अभी तक क्या मिला, बताओ तो।।
सबकी सुनते हो, गुरुजनो की सुनो, पर्दा अभिमान का हटाओ तो।।

शान्ति तुमको अभी मिल सकती है, राग के त्याग को अपनाओ तो।।
प्रभु से दूरी नहीं देरी नहीं, उन्हें अपने में देख पाओ तो।।

कृपा प्रभु की तुम्हें न छोड़ेगी, 'पथिक' संकल्प दृढ़ बनाओ तो।।

विवेक वाणी 315

सभी संत गुरुजन जो कुछ कह रहे हैं,
वह चर्चा भुलाने के काबिल नहीं है।
बड़े भाग्य से मानव जीवन मिला है,
निरर्थक बिताने के काबिल नहीं है।
जो है साधु सन्तों का निन्दक विरोधी,
है जिसमें कुमति बुद्धि पशुवत अबोधी।
सदा लोभ से ग्रस्त अत्यन्त क्रोधी,
वह संगति में लाने के काबिल नहीं है।
जो हो आलसी दुर्व्यसनी विलासी,
जहाँ इन्द्रियों की बनी बुद्धि दासी।
भले घूम आया हो मथुरा या काशी,
वो घर में बुलाने के काबिल नहीं है।
धनी हो के भी जो नहीं दान देता,
जो निज गुरुजनों को नहीं मान देता।
जो सेवा भजन में नहीं ध्यान देता,
वह सम्मान पाने के काबिल नहीं है
जिसे देख हम धर्म को भूल जायें,
जिसे पाके अभिमान में फूल जायें।
जिधर चल के हम प्रभु के प्रतिकूल जायें,
'पथिक' उधर जाने के काबिल नहीं है।

विवेक वाणी 316

सभी सन्त गुरुजन जो समझा रहे हैं।
यह चर्चा भुलाना महा मूढ़ता है।
बड़े भाग्य से ऐसा अवसर मिला है।
निरर्थक बिताना महा मूढ़ता है।।
समझ लो यह परिवार कब तक रहेगा।
किसी का सुखद प्यार कब तक रहेगां
जो माना है अधिकार कब तक रहेगा।
नहीं समझ पाना महा मूढ़ता है।।
बहुत शीघ्र ही अपना उद्धार कर लो।
जो कुछ कर सको पर उपकार कर लो।
यह अज्ञान की सीमा पार कर लो।
देरी लगाना महा मूढ़ता है।।
जहाँ रह रहे हो, निकलना पड़ेगा।
नहीं चाहने पर भी चलना पड़ेगा।
जिसे खोके फिर हाथ मलना पड़ेगा।
वहाँ मन फँसाना महा मूढ़ता है।।
सदा शान्ति रहती समता के पीछे।
समता न आती विषमता के पीछे।
विषमता रहा करती ममता के पीछे।
ममता बढ़ाना महा मूढ़ता है।।
कहीं मुग्ध होकर के तन में न अटको।
अचल मैं रहो चपल मन में न अटको।
'पथिक' अटक जाना महा मूढ़ता है।।

विवेक वाणी 317

शुभ अवसर बीते जाते हैं, तुम बुद्धिमान मानव जागो।
अविवेकी देर लगाते हैं तुम बुद्धिमान मानव जागो।।

यह महा दुःखद अज्ञान-निशा, जिसमें न सूझती सत्य-दिशा।
इसको सब समझ न पाते हैं, तुम बुद्धिमान मानव जागो।।

यह झूठे दुख-सुख के सपने, जिनको तुम समझ रहे अपने।
सब मन के माने जाते हैं, तुम बुद्धिमान मानव जागो।।

भोगों से जो कि विरक्त बने, जो सच्चे प्रभु के भक्त बने।
वे गुरुजन नित्य जगाते हैं, तुम बुद्धिमान मानव जागो।।

जो उठते मोह नींद तजकर, चलते शुभ सद्गुण से सजकर।
वे 'पथिक' सुपथ में गाते हैं, तुम बुद्धिमान मानव जागो।।

विवेक वाणी 318

है बहारे बाग दुनिया चन्द रोज।
देख लो इस का तमाशा चन्द रोज।

पूछा लुकमा से जिया तू कितने रोज।
दस्त हसरत मल के बोला चन्द रोज।।

बाद मदफन कब्र से बोली कजा।
अब यहाँ पर सोते रहना चन्द रोज।।

ऐ मुसाफिर कूच का सामान कर।
इस जहाँ में है बसेरा चन्द रोज।।

तुम कहाँ और हम कहाँ ऐ दोस्तों।
साथ है मेरा तुम्हारा चन्द रोज।।

जो सताते हैं किसी बे जुर्म को।
समझ लो उनका जमाना चन्द रोज।।

याद रखना मौत और भगवान को।
जिन्दगी का बस भरोसा चन्द रोज।।

सोच लो क्या साथ, अपने जायेगा।
कौन कितने दिन यहाँ रह पायेगा।
'पथिक' कर लो मेरा-तेरा चन्द रोज।।

विवेक वाणी 319

है वही भाग्यवान जो भगवान को चाहे।।
विद्वान हो के नित्य विद्यमान को चाहे।।

भोगी सदा ही भोग के सामान को चाहे।
अभिमानी सदा अपने ही सम्मान को चाहे।
वह त्यागी तपस्वी भी कीर्तिमान को चाहे।
वह देव पुजारी भी तो वरदान को चाहे।
कोई चाहे कुरान या पुरान को चाहे।
है वही भाग्यवान जो भगवान को चाहे।।

कोई सुकाल में, कोई अकाल में खुश है।
देखो यहाँ सब अपने ही स्वर ताल में खुश है।
जो मन में भर गई है उसी चाल में खुश है।
हैं बन्धे हुए फिर भी अपने हाल में खुश है।
सागर में चले कोई वायुयान को चाहे।
है वही भाग्यवान जो भगवान को चाहे।।

कितने ही अपने भले बुरे काम में भूले।
कुछ नाम में भूले हैं कोई मान में भूले।
कोई हजार लाख जोड़ दाम में भूले।
जो रूप के मोही हैं गोरे चाम में भूले।
भूले नहीं वो जो दयानिधान को चाहे।
है वही भाग्यवान जो भगवान को चाहे।।

बुलबुल को रहा करती गुलिस्तान की तलाश।
उल्लू को देखिये तो है वीरान की तलाश।
पशु को भी अपनी जात के हैवान की तलाश।
सबको है अपने-अपने इतमीनान की तलाश।
कोई जमीन कोई आसमान को चाहे।
है वही भाग्यवान जो भगवान को चाहे।।

चलता है भिखारी सदा धनवान के पीछे।
मोही घुला करता है सन्तान के पीछे।
दुर्बल रहा करता है बलवान के पीछे।
खोता है मूर्ख सब कुछ अज्ञान के पीछे।
पर बुद्धिमान प्रभु के ही विधान को चाहे।
है वही भाग्यवान जो भगवान को चाहे।।

प्रेमी बने हैं कोई भाव प्यार में अटके।
बन कर के कोई सेवक अधिकार में अटके।
कुछ प्रीति मान छोटे से परिवार में अटके।
यदि पुण्य किये, स्वर्ग के साकार में अटके।
कोई बिहिस्त कोई परिस्तान को चाहे।
है वही भाग्यवान जो भगवान को चाहे।।

जो नित्य विद्यमान है वह दूर नहीं है।
वह सर्वमय है साक्षी है और यहीं है।
सब उसी के भीतर ही है जो कुछ भी कहीं है।
हम भूले हुए जहाँ भी है वह भी वहीं है।
जो ज्ञान में है इसी अधिष्ठान को चाहे।
है वही भाग्यवान जो भगवान को चाहे।।

भगवान वही जिससे सब पूरे होते काम।
भगवान से प्रकाशित है सारे रूप नाम।
भगवान में ही जीव को मिलता परम विश्राम।
सबके वही परमाश्रय सत् चिदानन्द धाम।
यह 'पथिक' किसी विधि उन्हीं महान को चाहे।
है वही भाग्यवान जो भगवान को चाहे।।

विवेक वाणी 320

देखा मैंने मार्तण्ड को
नित प्रति का आना देखा।।

चढ़ते देखा प्रथम व्योम पर
पीछे गिर जाना देखा।।

जिन नयनों से परम प्रकाशित
दिवस प्रभा जाना देखा।।

उसी समय तम से आच्छादित
निशा काल आना देखा।।

देखा मधु में लीन हुए
अलिगण का मड़राना देखा।।

बैठि चूसि रस निरस किया पुनि
उनका उड़ जाना देखा।।

कालागन्तुक क्रम से उपवन
पल्लव झढ़ जाना देखा।।

पुनः उन्हीं में नूतन सुन्दर
हरित लता आना देखा।।

कितने हृदयों से निज को
प्रियता से अपनाना देखा।।

किन्तु साथ ही शान्ति क्षणों में
नित अशान्ति आना देखा।।

पहले तो निज इच्छित सुख से
अमित प्यार पाना देखा।।

देखा नित ही नव रहस्य
जो कुछ देखा जाना देखा।।

कहीं किसी को भी कब हमने
अक्षय शान्ति पाना देखा।।

जग की सभी वस्तुओं में
बस परिवर्तन पाना देखा।।

पथिक ने आरम्भावसान का
एक तान गाना देखा।।

विवेक वाणी 321

मन मलीन कर्तव्य विमुख हूँ ज्ञान ज्योति दरशा जाना स्वामी।।
अमिट क्षुधा तृष्णा बिरझानी यह सन्ताप हटा जाना स्वामी।।

पांच शत्रु औरहु संग लागे यह उलझन सुलझा जाना स्वामी।।
चित चंचल झूठे चिन्तन में यह दृगभ्रान्ति मिटा जाना स्वामी।।

सत्य लगन प्रियतम प्रति उपजै ऐसा नेह लगा जाना स्वामी।।
पथिक प्रभू पथ भूलि न जावै तत्व दृष्टि उपजा जाना स्वामी।।

विवेक वाणी 322

सदा सत्य ही को बिलोते रहो तुम।
हृदय वासनाओं से धोते रहो तुम।।

बड़े से बड़ा अब यही काम करना,
ये घर तोड़ करके वहाँ धाम करना।।

हरी प्रेम पथिकों में है नाम करना,
प्रभू ध्यान में सुदृढ़ अवधान करना।

इसी हेतु सर्वस्व खोते रहो तुम,
सदा सत्य ही को बिलोते रहो तुम।।

कभी सत्य पथ के न प्रतिकूल जाना।।

न संसार सौन्दर्य में भूल जाना
न अब प्यार मनुहार में फूल जाना
न वो अश्रु मुसकान में झूल जाना

परमधर्म का बीज बोते रहो तुम,
सदा सत्य ही को बिलोते रहो तुम।।

कोई वस्तु अन्तर में आने न पाये,
हृदय में किसी ओर जाने न पाये।।

तुम्हारा कोई मन मनाने न पाये।।

प्रलोभन से उपराम होते रहो तुम,
सदा सत्य ही को बिलोते रहो तुम।।

अरे मन गुलामी में हैरान क्या है,
मिटा यदि न अज्ञान तो ज्ञान क्या है।।

नले खींच प्रियतम को वो ध्यान क्या है,
बहे अश्रु जबलौं न वह गान क्या है।।

पथिक प्रेम के लिये रोते रहो तुम,
सदा सत्य ही को बिलोते रहो तुम।।

विवेक वाणी 323

जीवन के पथ में जो हो रहा संग्राम नित्य,
कितने ही बली वीर माया मोह मार से।।

मन की ही दासता से बन्दर से नाचते हैं,
भूल रहे निज को अविद्या अन्धकार से।।

ब्रम्हविद्या द्वारा ही पथिक पथ शत्रुसेना,
हारती है सत्य तप संयम विचार से।।

ब्रम्हविद ब्राह्मण इसी से मुक्त जीवन हो।
शक्ति शीतलता देते ज्ञानामृत धार से।।

विवक वाणी 324

कभी भूलों नहीं अपने प्रभु को,
उनके गुणगान ही गाते रहो।।

हर काम में धाम में बैठे हुए,
चलते हुए नाम को ध्याते रहो।।

आवना है तुम्हें हरि प्रेमियों में,
प्रपंच के संग हटाते रहो।।

जो चाहते हो सत शान्ति पथिक,
सत्संग से प्रेम बढ़ाते रहो।।

जो हुवा सो हुवा अब भी सम्भलों,
बिगड़ी बन जायेगी जो समै है।।

अपने सुख स्वार्थ के साधन में,
परस्वार्थ न छीनों यही बिनै है।।

निज कर्म स्वधर्म को छोड़ो नहीं,
हरि शरण गहो फिर क्या भै है।।

शरणागत को छोड़ैन पथिक,
हरि का तो हृदय करुणामै है।।

भौतिक सुखों से सुखी जीवन क्या,
यह जीवन पशु भी जीते हैं।

इस भांति प्रमाद में भूले हुए,
सोचो कितने युग बीते हैं।

वो भूमि के भार बने नर हैं,
जो स्वधर्म हरिभक्ति से रीते हैं।

जीते तो वही हैं बीर पथिक,
जो कि प्रभु प्रेमामृत पीते हैं।

भगवन की भक्ति में क्या सुख है,
विषयी जन जान क्या पावैंगे।

मन की दासता में ही भूले हुए,
जीवन भर ठोकरें खावैंगे।।

अभी मोहान्ध है, सुनते ही नहीं,
फिर रो-रोकर पछतावैंगे।।

पावैंगे शान्ति न तब लौं पथिक,
सत्संग में जब लौं न आवैंगे।।

अरे जागो इहां सुख ही दुख है,
किस मोह के स्वप्न में सो रहे हो।

किस सुख के लिए ऐसे चाव से,
प्रपंच के भार को ढो रहे हो।

छुट जायेंगे ये तो कहीं तुमसे,
जिनमें अति आसक्त हो रहे हो।

यहाँ आत्मोद्धार का जो समय था,
पथिक यों ही उसे क्यों खो रहे हो।।

इस थोड़े दिवस के जीवन में,
ऐ पथिक किसी को सतावो नहीं।

परस्वार्थ नहीं कर सकते तो,
निज स्वार्थ से पाप कमावो नहीं।

धन जन बल और विद्या बल पै,
आभिमान में आ इतरावो नहीं।

निज दैव से दुःख सुख हो सो हो,
मन से भगवान भुलावो नहीं।

भगवान से प्रेम जो करते नहीं,
वो माइक मोह में भूलते हैं।

विषयानन्द मुग्ध उसी हिये में,
नारी के नैनशर हूलते हैं।।

वो अश्रु मुसक्यान के बीच सदा,
लटकन की भांति ही झूलते हैं।

आश्चर्य पथिक आत्मिक धन खो,
फिर भी अभिमान में फूलते हैं।

विवेक वाणी 325

अरे देखो न दृष्टि पसार किसी का कोई नहीं।।

करोड़ों जन्म ले कितने यहाँ माता पिता देखे।
पता भी है नहीं जिनका बहुत संगी सखा देखे।
एक से एक सुन्दर हृदय प्रेमी हम सदा देखे।
वृहद धन धान्य वैभव भोग के शुभ भाग्य पा देखे।
यही कहना पड़ा हर बार किसी का कोई नहीं।।

प्रणयिनी जोकि प्रियतम का निरन्तर ध्यान करती हैं।
प्यार में प्राणमन सर्वस्व दैनिक दान करती हैं।
विरह में हृदयधन के वर्ष सा दिन भान करती हैं।
पता चलता समय पर स्वार्थ का ही गान करती हैं।
सदा सुख के लिए व्योहार किसी का कोई नहीं।।

यहाँ पर हर किसी को नेह नाता जोड़ते देखा।
जहाँ पर स्वार्थ छूटा बस वहीं मुख मोड़ते देखा।
हृदय को ही हृदय से किस तरह फिर तोड़ते देखा।
जिसे पकड़ा उसी को एक दिन छोड़ते देखा।
फिर सबने मचाई पुकार किसी का कोई नहीं।।

किसे देखूँ किसे चाहूँ यहाँ संसार सूना सा।
सभी विधि आज दिखता है यहाँ व्योपार सूना सा।
जहाँ ठहरा वहीं पर बस मिला आधार सूना सा।
तब मैंने किया है विचार किसी का कोई नहीं।।

अहा जब सत्य दृष्टि से प्रेममय स्वात्मा देखूँ।
यहां जब कुछ कहीं देखूँ न कुछ भिन्नात्मा देखूँ।
जगत के नामरूपों में निहित विमलात्मा देखूँ।
वहीं अखिलेश व्यापक सच्चिदानन्दात्मा देखूँ।
यही है जग में सर्वाधार किसी का कोई नहीं।।

पथिक इस सुपथ से अध्यात्मिक जीवन बिताना है।
सदा ही जागते रहकर अविद्या को मिटाना है।
जहाँ से फिर न आना हो वहीं अब लौट जाना है।
स्वयं सद्रूप परमानन्द चेतन में समाना है।
चलो खोलो मुक्ति का द्वार किसी का कोई नहीं।।

विवेक वाणी 326

ओ धन के लोभी जन जागो, लोभ पाप का बाप है।।
इसकी सगी बहिन है चिन्ता, तृष्णा सखी अमाप है।।

जितना लोभ अधिक होगा उतना ही क्रोध तपायेगा।
धनाभाव से लोभ न हो तो क्रोध न तुम्हें सतायेगा।

लोभी तो अपने को दण्डित करता अपने आप है।।
लोभी ललचाता पर धन में लोभी चोरी करता है।

अधिक धनी को देख-देख कर जलता कुढ़-कुढ़ मरता है।
दान नही दे पाता लेता दुखियों का अभिशाप हैं।।

लोभी ही तो दम्भी द्वेषी स्वजनों का द्रोही होता।
धन की रक्षा करते - करते भरता पाप भार ढोता।

जम दूतों तो बांधा जाता करता रूदन विलाप है।।
लोभी में मूर्खता मूढ़ता जड़ता निर्दयता रहती।

मन में अति कठोरता लेकिन वाणी में मृदुता बहती।
भूला प्रभु को करता धन का सुमिरन चिन्तन जाप है।।

लोभ नहीं तब भय मिटता है होता भेद भाव का अन्त।
समता प्रेम पूर्णता से ही मानव हो जाता है सन्त।

लोभ रहित जो पथिक उसी का मिटता सब सन्ताप है।।
एको लोभो महान ग्राहो लोभात् पापं प्रवर्तते।।

विवेक वाणी 327

जहाँ हमें सत्संग सुलभ है वहीं हृदय आनन्द पावें।
गुरुजन की सद्शिक्षा द्वारा भूलभ्रान्ति अज्ञान मिटायें।।

जो कुछ अपने सन्मुख आये जो कुछ भी मिलकर छूट जाये।
वह कुछ अपना नहीं जगत में तब क्यों उससे मोह बढ़ायें।।

सुखासक्त ही रागी मोही दुःख के भयवश द्वेषी द्रोही।
मानव शान्ति नहीं पाते हैं चाहे जितनी युक्ति लगायें।।

जिसे चाहते हैं वह सुख है नहीं चाहते जिसे वह दुःख है।
सुख सा दुःखदाता नहीं दूसरा आपस में समझें समझायें।।

जिसको हमने नहीं बनाया, यह सब तन मन जिससे पाया।
उस दाता को कभी न भूलें पथिक उसे ही ध्यायें गायें।।

विवेक वाणी 328

धन के लोभी धन मद छोड़ो, दाता प्रभु से नाता जोड़ो ।।

धन से कल्पित सुख मिलता है, शान्ति नही मिलती है धन से ।
धन तो छिन जाता छूट जाता, लोभ नहीं जाता है मन से।
धन से मन्दिर बन जाते हैं, मूर्ति प्रतिष्ठित हो जाती है।
धन से प्रेम नहीं मिलता है, धन से भक्ति नहीं आती है।
धन से गीता वेद मिलेंगे धन से ज्ञान नहीं मिलता है।
धन से भोग सुलभ होता है पर भगवान नहीं मिलता है।
चेतो, लोभ पाश को तोड़ो, धन के लोभी धन मद छोड़ो।।

धन से उपदेशक मिल जाते, पर अविवेक नहीं मिट पाता।
धन के बल से सुखासक्त मानव का मोह नहीं है जाता।
धन देकर शिक्षक रख सकते, पर मेधावी बुद्धि न मिलती।
धन है वस्तु प्राप्ति का साधन, धन से आत्म विशुद्धि न मिलती।
धन से सुन्दर चित्रसजा लो सद् चरित्र धन से न मिलेगा।
दैवी सम्पद हीन धनी का हृदय कमल धन से न खिलेगा ।
धन के लोभ पात्र को फोड़ो। धन के लोभी धन मद छोड़ो।।

धन से विटामिन मिलते हैं, धन से शक्ति नहीं मिलती है।
धन से आक्सीजन मिल जाता, धन से सांस नहीं हिलती है।
धन के बल पर सर्जन मिलते, दिल दिमाग जोड़ देते हैं।
पर धन से अमरत्व न मिलता, तन को प्राण छोड़ देते हैं।
धन के बल पर कूलर लगाकर शीतल कर लो भव्य भवन को।

पर धन द्वारा शान्त नहीं कर सकते हो सन्तापित मन को।
धन की तृष्णा से मुख मोड़ो धन के लोभी धन मद छोड़ो।।

धन के बल पर तीर्थ धाम में मन्दिर में प्रवेश पा सकते ।
पर धन की रिश्वत दे करके कोई स्वर्ग नहीं जा सकते।
धन छूटने के पहले ही तुम पात्र देख दानी बन जाओ।
प्रभु की औपा समझकर भीतर सरल निरभिमानी बन जाओ।
धन की रक्षा करते करते धन के लोभी मर जाते हैं।
किन्तु परम प्रभु के प्रेमी उदार दानी बन तर जाते हैं।
पथिक कथन का सार निचोड़ो। धन के लोभी धन मद छोड़ो।।

विवेक वाणी 329

मरने के दिन निकट तब जीने का ढंग आया ।
जब ज्योति बुझ चली तब महफिल में रंग आया।।

जब हाट उठ गई तो घर से चला कुछ लेने।
मायूस हाथ मलता खो कर उमंग आया ।

मन की मशीनरी ने तब ठीक चलना सीखा।
जब बूढ़े तन के हर एक पुर्जे में जंग आया।।

बेकार की बातों में सब जिन्दगी बिता दी।
उस वख्त वख्त माँगा जब वख्त तंग आया।।

विवेक वाणी 330

ये दुनिया अगर मिल भी जाये तो क्या है ?
कोई दिन में तारे दिखाये तो क्या है ?

ये महलों ये तख्तों ये ताजों की दुनिया,
ये दौलत के भूखे रिवाजों की दुनिया।
हकीकत के दुश्मन समाजों की दुनिया,
ये दुनिया अगर मिल भी जाये तो क्या है।।

हर इक जिस्म के साथ ही मौत चलती ?,
ये बढ़ती जवानी अभी देखो ढलती।
जहाँ है खुशी वहीं आहें निकलती,
ये दुनिया अगर मिल भी जाये तो क्या है।

हर इक दिल है घायल हर इक रूह प्यासी,
निगाहों में उलझन है भीतर उदासी ।
हर इक जोश के साथ है बद हवासी,
ये दुनिया अगर मिल भी जाये तो क्या है।।

यहाँ पर खिलौना है इन्सां की हस्ती,
ये बस्ती है मुर्दा परस्तों की बस्ती।
यहाँ पर तो जीवन से है मौत सस्ती,
ये दुनिया अगर मिल भी जाये तो क्या है।।

यहाँ सब भटकते हैं बदकार बन कर,
यहाँ जिस्म सजते हैं बाजार बन कर,
यहाँ प्यार होता है व्यापार बन कर,
ये दुनिया अगर मिल भी जाये तो क्या है।।

यह दुनिया जहाँ आदमी कुछ नहीं है,
वफा कुछ नहीं दोस्ती कुछ नही है
यहाँ सत्य की कद्र ही कुछ नही हैं,
ये दुनिया अगर मिल भी जाये तो क्या है।।

समझ है तो दुनिया के पीछे न भागो,
जो भी मद हो छोड़ो अपने में जागो,
कुछ अपना न मानो कभी कुछ न माँगो,
ये दुनिया अगर मिल भी जाये तो क्या है।।

कोई दिन में तारे दिखाये तो क्या है।।

विवेक वाणी 331

हर इक कर्म पूजा हर इक ठौर मन्दिर।
सभी व्यक्ति मेरे लिए देवता हैं।

सभी हैं उसी के सभी में वही है।
असतसंग से ही न मिलता पता है।

वही तो सभी प्राणियों का है जीवन
उसी में अहंकार है बुद्धि तन मन।

मुझे भासता है कि जल थल अनल में।
अनिल में गगन में वही झांकता है।।

वही नाथ है जिसका अथ ही नहीं है।
वह नेति जिसकी न इति ही कहीं है।।

वह अव्यक्त ही व्यक्ति में व्यक्त होता।
उसी की ही सत्ता से जग भासता है।।

मनुज मोह निद्रा में सोये हुए हैं।
किसी खोज में ही वो खोये हुए हैं।।

हैं घर हुए सब को दुःख सुख के सपने।
जिसे प्रभु जगा दे वही जागता है।।

वही प्रभु प्रगट है जहाँ मैं नहीं है।
वो मैं पन के रहते न दिखता कहीं है।।

जहाँ ज्ञान आलोक में दृशिट खुलती ।
वहीं सच्चिदानन्द की दिव्यता है।।

यहाँ जो भी आता सदा रह न पाता ।
जो रहता सदा वह है आता न जाता ।।

वही एक अपना जो अपने में ही है।
कभी भी कहीं भी नहीं भूलता है।।

विवेक वाणी 332

ऐसा संयोग बड़े पुण्य से ही आता है।
कोई श्रद्धालु ही जीवन में जाग पाता है।।

देखते देखते जाती है जवानी सबकी।
बुढ़ापा आता है वह सभी को सताता है।।

चाहे जितना अधिक धन हो वि-ााल वैभव हो।
या तो छिन जाता है या छोड़के ही जाता है।।

लोभी मानव दरिद्र है अशान्त हिन्सक है।
उदार दानी दैवी सम्पदा बढ़ाता है।।

सारा धन लेता कोई राजी या बेराजी से।
लोभ के पाश से कोई नही छुड़ाता है।।

छूट जाते हैं सभी माने हुए सम्बन्धी।
मोह यदि छूटा नहीं वही तो रुलाता है।।

असत् के संग से ही सारे दोश रहते हैं।
वही सत्संगी है जो दोष को मिटाता है।।

जिसमें रहती नहीं आसक्ति अहंता ममता।
वह पथिक प्रेम से आनन्द गीत गाता है।।

विवेक वाणी 333

जो सत्संग में नित्य आते रहेंगे।
उन्हे ज्ञान में प्रभु जगाते रहेंगे।।

जो श्रद्धालु प्रेमी बनेंगे विवेकी,
वही मोह भ्रम को मिटाते रहेंगे।

मिलेगी नहीं :ान्ति उनको कहीं भी,
जो परमात्मा को भुलाते रहेंगे।।

जो जितना अधिक दान कर लेंगे जग में,
वह पुण्यों की पूँजी बढाते रहेंगे।।

न देंगे किसी को जो शुभ और सुन्दर ।
कभी बैठे माखी उड़ाते रहेंगे।।

बनेंगे कभी मुक्त जीवन में वे ही।
जो चाहों को अपनी हटाते रहेंगे ।।

सुखी होंगे जो किसी को दुःख देकर।
वह सौभाग्य अपना घटाते रहेंगे।।

उन्हें ही जगत में सभी सुख मिलेंगे।
जो दुखियों को सुख पहुंचाते रहेंगे।।

उन्हीं की बनी और बनती रहेगी।
जो बिगड़ी किसी की बनाते रहेंगे।।

जो कुछ भी मिला है रहेगा न सब दिन।
जो हैं मूढ़ वह मन फंसाते रहेंगे।।

पथिक अपने में अपने प्रियतम को पाकर।
महोत्सव निरन्तर मनाते रहेंगे।।

विवेक वाणी 334

समझ सको तो यह भी समझो लोभ पाप का बाप है।
धन की सगी बहिन हैं चिन्ता, तृष्णा सखी अनाप हैं।।

भूमि भवन अधिकार मान का लोभ जहाँ तक रहता है।
भय अविवेक वहाँ तक रहता सुख के संग दुःख सहता है।
लोभी अपने को ही दण्डित करता अपने आप है।।

लोभी ललचाता ही रहता धन से चोरी करता है।
अधिक धनी को देख देखकर कुढ़ता मन में जरता है।
दान नहीं देता तब लेता दुखियों का अभि-गाप है।।

लोभी ही तो दम्भी द्वेषी पाखण्डी द्रोही होता।
धन की रक्षा करते- करते मरता पाप भार ढोता।
जमदूतो से बांधा जाता करता रुदन विलाप है।।

लोभी में मूर्खता, मूढ़ता, जड़ता निर्दयता रहती।
मन में अति कठोरता लेकिन वाणी में मृदुता बहती।
भजन भूल कर, धन का करता सुमिरन चिन्तन जाप है।।

लोभ मिटे तब भय मिट सकता, हो सकता पापों का अन्त।
समता प्रेम पूर्णता से तब, हो सकता है मानव सन्त।
लोभ रहित जो पथिक उसी का मिटता सब सन्ताप है।।

विवेक वाणी 335

साथी सावधान हो जाना।

जग में जो दिख रहे सहारे, तन धन जन हैं न-वर सारे।
जो मिलते छूट जाते हैं, इनमें अपना मन न फँसाना।।

सुखासक्ति दोषों की माता, सकल दोष ही हैं दुखदाता।
दोश त्याग के लिये सजग हो, मन से अनासक्ति न भुलाना।।

नाम रूप प्रभु की माया है, अहंकार उसकी छाया है।
माया छाया जिसके आश्रित, उसे प्रेम में ही है पाना।।

सब जीवों का दाता प्रभु है, सकल सृष्टि निर्माता प्रभु है।
प्रभु का जो कुछ सुलभ तुम्हें है, उसको सर्वहितार्थ लगाना।।

जो दिखता वह सत्य नहीं है, जो कि देखता सत्य वही है।
पथिक वही विश्राम पा सका, जिसने दृश्टा को पहिचाना।।

साधक बोध 336

अब से शुभ करना सीख लो, दोषों से डरना सीख लो ।।

सुख की तृष्णा का त्याग करो तुम, अब न किसी से राग करो तुम।
निज मन को आधीन बना, स्वाधीन विचरना सीख लो।।

लोभ मोह अभिमान हटाओ, निज को सरल विनम्र बनाओ।
प्राप्त सुखों से दुखियों की अब, झोली भरना सीख लो ।।

करो सार्थक श्रम से तन को, और दान देकर निज धन को ।
वीर बनो कष्टों के सम्मुख, धीरज धरना सीख लो ।।

इस जग को भवसागर कहते, सब बहते ज्ञानी तट गहते ।
तुम सुख दुःख की धाराओं में, निर्भय तरना सीख लो ।।

विधि की भूल न होने पाये, देखो जीवन व्यर्थ न जाये ।
'पथिक' जगत में जन्म न हो अब ऐसा मरना सीख लो ।।

साधक बोध 337

अरे मन परमेश्वर का सुमिरन बारम्बार कर लो।
कभी कुछ बिगड़ा है तो उसका अभी सुधार कर लो।।

जिसे तुम अपना कहते उसके साथ सदा न रहोगे।
जहाँ सुख मान रहे हो वहीं अन्त में दुःख सहोगे।
अभी अवसर है यदि सत्संगति से गुरु ज्ञान गहोगे।
मुक्ति मिल जायेगी जब इस जग से कुछ न चहोगे।
मृत्यु आने के पहले जीवन का उद्धार कर लो।।

बचाओगे जो कुछ तुम वह तुमसे छूट जायेगा ही।
अहंता ममतावश यदि होगा पाप रुलायेगा ही।
भाग्य में जो कुछ निश्चित है वह सन्मुख आयेगा ही।
शरण सद्गुरु की ले लो सन्मार्ग दिखायेगा ही।
सदा कुछ ही न रहेगा कितना ही विस्तार कर लो।।

अनेकों पछिताते हैं जीवन के अच्छे दिन खोकर।
अनेकों भोग रहे हैं दुष्कर्मों का फल रो रो कर।
अनेकों पशुवत जीते हैं औरों का बोझा ढोकर।
कहीं बिरले ही मानव जो रहते स्वाधीन होकर।
तुम्हें जो कुछ भी होना है वह अभी विचार कर लो।।

प्रेममय प्रभु को ही अब अपना सरबस मान लेना।
मोह ममता तजकर बस नित्य प्राप्त का ध्यान लेना।
दुःख जिनसे होता उन दोषों को पहिचान लेना।
'पथिक' अपने में ही निज प्रियतम को स्वीकार कर लो।।

साधक का बोध 338

अरे मित्र तुमने अभी तक किया क्या।
किया कुछ तो बदले में उसके लिया क्या।।

लिया जो भी कुछ वह रहेगा कहाँ तक।
विनाशी को लेकर जिया तो जिया क्या ।।

नहीं हो सकी जिससे तृप्ति किसी की।
ये इन्द्रिय विषय रस पिया तो पिया क्या ।।

तनिक ध्यान देकर के यह देख लेना।
जो परलोक में मिल सके वह दिया तो दिया क्या।।

'पथिक' दीन दुखियों का दुःख देखकर के।
दया से द्रवित जो न हो वह हिया क्या ।।

साधक बोध 339

आनन्द सिन्धु परमेश्वर को, मन भजले बारम्बार।
जो अखिल विश्व का जीवन है, प्रभु अनुपम सर्वाधार।।

जिसके कारण नाना तन धर, यूँ भटक रहे हो इधर उधर।
वह निधि तो है तेरे अंदर, तुम खोज फिरे संसार।।

इस तन का कौन ठिकाना है, कुछ दिन में ही तो जाना है।
क्यों माया में दीवाना है, कर ले अपना उद्धार।।

धन है तो कुछ नेकी कर ले, बल विद्या से भक्ति भर ले।
सद्‌गुरु का आश्रय धर ले, हो जाये भव से पार।।

जो खुद को यहाँ फँसायेगा, वह उतना ही दुःख पायेगा।
यह कुछ भी काम न आयेगा, जायेगा हाथ पसार।।

जब जाग गया तो सोना क्या, यदि समझ गया तो रोना क्या।
पा करके अब फिर खोना क्या, यह 'पथिक' मुक्ति का द्वार।।

साधक बोध 340

इस जग में कितना ही तुम स्वच्छन्द विचर कर देख लो।
तृप्ति न होगी फिर भी कौतुक इधर-उधर के देख लो।।

जिस सुख को प्राणी अपनाता, वही ईश से विमुख बनाता।
सुख ही है सर्वत्र नचाता, सुखासक्त प्राणी दुःख पाता।
नहीं समझ में आये तो तुम भी जी भरकर देख लो।।

सीखो जग में सेवा करना, सीखो दुःखियों के दुःख हरना।
सीखो भव से पार उतरना, सत्पथ में अब कहीं न डरना।
जो आया है वह जायेगा, धीरज धर कर देख लो।।

जग में जो कुछ बोया जाता, कई गुना बढ़ कर वह आता।
जो सुख देता वह सुख पाता, मानव अपना भाग्य विधाता।
यदि तुमको विश्वास न हो तो कुछ भी कर के देख लो।।

जिसको तुमने अपना माना, यहाँ किसी का नहीं ठिकाना।
निश्चित है जिसका छूट जाना, व्यर्थ न उससे मोह बढ़ाना।
तन में रहते हुये 'पथिक' तुम मन से मर के देख लो।।

साधक बोध 341

इस जग में जो कुछ करना है, तुम बुद्धि पूर्वक जान लो।
नश्वर तन में रहने वाले, अविनाशी को पहचान लो।।

कोई दूसरा करे न करे पर तुम नेकी करते जाओ।
देखो न किसी के दोष कहीं, सब के गुण ही गुण छान लो।।

जो कुछ दोगे वह कई गुना बढ़कर तुमको मिल जायेगा।
दुःख दो न किसी को सुख ही दो परहित का ही व्रत ठान लो।।

जो कुछ भी तुमको मिला हुआ उसका ही सदुपयोग कर लो।
बिन माँगे मिलता जायेगा लघुता छोड़ो गुरु ज्ञान लो।।

जो वस्तु तुम्हें दिखती अपनी वह साथ नहीं रह पायेगी।
तुम 'पथिक' प्रेममय परमेश्वर को सब विधि अपना मान लो।।

साधक बोध 342

इस जग में सुखासक्त मानव, चिर शान्ति कहीं भी पा न सके।
सारे विज्ञानी जन मिलकर, सुख को दुःखरहित बना न सके।।

कुछ लोगों को तप संयम से, अनुकूल शक्ति मिल जाती है।
पर वह भी व्यर्थ गई दिखती, यदि मन को वश में ला न सके।।

जो तन्त्र, मन्त्र औषधियों से सबको निरोग कर सकते हैं।
पर इससे क्या यदि काम, क्रोध मोहदि रोग मिटा न सके।।

हमने तुमने इस आऔति का, सुन्दर श्रृंगार किया लेकिन।
यह वृत्ति वेश्याओं की सी, जब अन्तर प्रऔति सजा न सके।।

जब तक अभिमान प्रबल रहता, तब तक निज दोष न दिखते हैं।
आसुरी वृत्तियों के कारण, दैवी सम्पत्ति बढ़ा न सके।।

ज्ञानोपदेश की धारा में, जो सबका मल धोने निकले।
पर क्या प्रभाव इसका होगा, जब अपना मैल छुड़ा न सके।।

सत की चर्चा चलती रहती, पर रमण असत् में होता है।
तब 'पथिक' कहाँ सत्संग हुआ, यदि असत् से प्रीति हटा न सके।।

साधक बोध 343

इस जगत् से जाने वाले, मानो कहते जा रहे हैं।
ध्यान रखना तुम्हारे भी जाने के दिन आ रहे हैं।।

पुण्य निज हित के लिये, जो कुछ तुम्हें करना हो कर लो।
जो न कर पाये समय पर, पीछे वह पछता रहे हैं।।

किसी के दिन एक सम, जग में सदा रहते न देखा।
हँसने वाले रो रहे हैं, रोने वाले गा रहे हैं।।

यहाँ जो कुछ भी मिला है, तुम उसे अपना न मानो।
बन्धनों से मुक्ति का यह मार्ग सन्त बता रहे हैं।।

मान माया भोग सुख की, चाह ही सबको नचाती।
'पथिक' कोई त्याग के बिन, कहीं शान्ति न पा रहे हैं।।

साधक बोध 344

उठो मानव आँख खोलो सो चुके हो अब न सोना।
स्वर्ण घड़ियाँ कदाचित तुम खो चुके हो अब न खोना।।

बहुत ही सुन्दर समय है जाग्रत जीवन बिताओ।
कहीं भी कर्तव्य पालन में न तुम आलस्य लाओ।

सबल होकर बहुत दुर्बल हो चुके अब न होना।।
मोह निद्रा में तुम्हें जो दीखता यह मधुर सुख है।

अरे यह सब स्वप्न है बस इसी सुख का अन्त दुःख है।
तुम अनेकों बार अब तक रो चुके हो अब न रोना।।

मिल रहा है वही तुम को जो कि पहले से दिया है।
उसी का फल सामने है शुभाशुभ जैसा किया है।

बीज अनुचित कर्म के यदि बो चुके हो अब न बोना।।
एक हो कर बन रहे हो तुम अनेकों वेषधारी।

कभी स्वामी कभी सेवक कभी राजा या भिखारी।
'पथिक' क्या-क्या अभी तक तुम हो चुके हो अब न होना।।

साधक बोध 345

उपदेश गुरुजनों के भुलाना नहीं अच्छा।
अपने समय को व्यर्थ बिताना नहीं अच्छा।।

जब संग के प्रभाव से तुम बच नहीं सकते।
तब तो कुसंग में कहीं जाना नहीं अच्छा।।

भोगों की अधिकता से भी होता है मन मलिन।
तब उनमें अपनी शक्ति गंवाना नहीं अच्छा।।

कुछ योग्यता है तुममें तो दुष्कर्म से बचो।
अपने लिये किसी को सताना नहीं अच्छा।।

तुम बुद्धिमान हो तो तुम्हें याद रहे यह।
चोरी से छल से धन का कमाना नहीं अच्छा।।

आराम चाहते हो तो लो राम की शरण।
झूँठे सुखों में चित्त फँसाना नहीं अच्छा।।

माया के लिये और कहीं मान के लिये।
वैराग्य बिना ज्ञान दिखाना नहीं अच्छा।।

जब तक नहीं होता है पूर्ण त्याग और प्रेम।
तब तक किसी भी सिद्धि का आना नहीं अच्छा।।

संसार में आनन्दमय भगवान के सिवा।
ऐ 'पथिक' कहीं मन का लगाना नहीं अच्छा।।

साधक बोध 346

उलझ मत दिल बहारों में बहारों का भरोसा क्या।
सहारे छूट जाते हैं सहारों का भरोसा क्या।।

तमन्नायें जो तेरी हैं, फुहारे हैं ये सावन की।
फुहारें सूख जाती हैं, फुहारों का भरोसा क्या।।

दिलासे जो जहाँ के हैं, सभी रंगी बहारे हैं।
बहारें रूठ जाती है, बहारों का भरोसा क्या।।

तू इन फूले गुब्बारों पर, अरे दिल क्यों फिदा होता।
गुब्बारे फूट जाते हैं गुब्बारों का भरोसा क्या।।

तू सम्बल नाम का लेकर किनारों से किनारा कर।
किराने टूट जाते हैं किनारों का भरोसा क्या।।

परम प्रभु की शरण लेकर, विकारों से सजग रहना।
कहाँ कब मन बिगड़ जाये, विकारों का भरोसा क्या।।

'पथिक' तू अक्लमन्दी पर, विचारों पर न इतराना।
जो लहरों की तरह चंचल विचारों का भरोसा क्या।।

साधक बोध 347

एक ईश्वर के गुणगान गाते चलो, अपने मन को उन्हीं में लगाते चलो।।

जो समय है उसे व्यर्थ खोना नहीं, मोह निद्रा में जग बीच सोना नहीं।
भाग्यवश कष्ट आये तो रोना नहीं, भूल से अब सुखासक्त होना नहीं।
अपने कर्तव्य सारे निभाते चलो ।।एक0।।

कभी कुविचार अन्तर में लाओं नहीं, भूलकर भी कुसंगति में जाओ नहीं।।
किसी की वस्तु में मन लुभाओ नहीं, किसी के चित्त को तुम दुखाओ नहीं।
मान माया के बन्धन छुड़ाते चलो ।।एक0।।

पुण्य के लिये तुम पूर्ण दानी बनो, गुरु औपा के लिये निराभिमानी बनो।
भक्ति चाहो तो प्रभु के ही ध्यानी बनो, मुक्ति के लिये सत् तत्वज्ञानी बनो।
त्याग अनुराग उर में बढ़ाते चलो ।।एक0।।

व्यर्थ चिन्तन से निज चित्त को मोड़कर, लोभ को भी सदा के लिये छोड़कर।
कामना की कठिन बेड़ियाँ तोड़कर, परम प्रभु से अहंकार को जोड़कर।
'पथिक' अपने को प्रभुमय बनाते चलो ।।एक0।।

साधक बोध 348

ऐ पथिक तू क्या न पाता।।
किसलिये कितने युगों से यहाँ बारम्बार आता।।ऐ0।।

स्वर्ग में जा खोज डाला नर्क का भी पड़ा पाला।
आज इतना देख सुनकर भी न कुछ सन्तोष लाता।।ऐ0।।

कभी विस्तृत राज्य पाकर विपुल धन जन बल बढ़ाकर।
यहाँ से चलते समय बस सदा खाली हाथ जाता ।।ऐ0।।

वही मन की वासनायें उन्हीं पैरों में घुमायें।
जहाँ से जाता वहीं पर पुनः क्यों चक्कर लगाता।।ऐ0।।

बार-बार विचार कर तू मोह दल-दल पार कर तू।
सत्य चिन्तन भूल करके क्यों असत के गीत गाता।।ऐ0।।

सत् नियम पहिचान ले तू शुद्ध विधि को जान ले तू।
'पथिक' पतनोत्थानमय निज भाग्य का तू ही विधाता।ऐ0।।

साधक बोध 349

ओ देखने वाले तू अपने, ज्ञान को भी देख ले।
उस निज स्वरूप ज्ञान के, अज्ञान को भी देख ले।।

अपने पतन को देख ले, उत्थान को भी देख ले।
तू ऐसी दृष्टि प्राप्त कर भगवान को भी देख ले।।

सुनते हुए कहते हुए, कुछ जानते हुए भी।
तू अपने अहंकार के, अभिमान को भी देख ले।।

परमात्मा के ध्यान में, जब मन नहीं लगता हो।
वह लगा हुआ है कहीं, उस ध्यान को भी देख ले।।

जिसमें सभी आरम्भ है और अन्त है जिसमें ही।
उस सर्वमय अनन्त शक्तिमान को भी देख ले।।

नश्वर को सत्य मानना, यह तो है अविद्या ही।
विद्वान है तो नित्य विद्यमान को भी देख ले।।

जो कुछ तुझे मिला है, उसका कोई दाता है।
उसकी दया को और, उसके दान को भी देख लो।।

इस द्वन्द्वमय जगत् में अब सावधान रहकर।
तू 'पथिक' उस महान के सुविधान को भी देख ले।।

साधक बोध 350

कौन जतन प्रभु तुमको पाऊँ।

प्रेम ज्ञान नहिं योग ध्यान नहिं।
पुण्यवान नहिं किहि बल जाऊँ।।

चरित विमल नहिं, मन निश्छल नहिं।
विद्या बल नहिं कसत रिझाऊँ।।

शील सुमति नहिं, शान्ति सुकृति नहिं।
त्याग विरति नहिं, काह दिखाऊँ।।

पथिक विरह दुख विकसत ना मुख।
कतहुँ न कछु सुख दिवस बिताऊँ।।

साधक बोध 351

औपा ऐसी हो अहंकार भूल जायें हम।
घृणा विद्वेषमय विचार भूल जायें हम।।

कुछ बुराई न करें किसी को बुरा न कहें।
सदा बुराई का प्रचार भूल जायें हम।।

बुरे के साथ भी अब रह सकें भले होकर।
किसी प्रतिकूल का प्रतिकार भूल जायें हम।।

हमारे द्वार पै यदि शत्रु भी मिलने आये।
दें उसे प्यार, तिरस्कार भूल जायें हम।।

सदा कुछ भी न रहेगा सहारा किस का लें।
छूट जायेंगे जो आधार भूल जायें हम।।

अपना कर्तव्य न भूलें कहीं प्रमादी बन।
किसी पर अपना जो अधिकार भूल जायें हम।।

बिना प्रयास के जो ध्यान में आते रहते।
पंचभूतों के वे आकार भूल जायें हम।।

त्याग हो जाये मोह ममता का शांति मिले।
मन से माना हुआ संसार भूल जायें हम।।

ध्येय है ज्ञेय है अविनाशी देहातीत स्वरूप।
वस्तु के प्रति ममत्व प्यार भूल जायें हम।।

भूलते आये हैं परमार्थ की बातें अब तक।
जगत् में स्वार्थ की बातें भूल जायें हम।।

याद रखें सदा उस सत्य को जिसमें रहते।
'पथिक' असत् को बार बार भूल जायें हम।।

साधक बोध 352

औपा है तभी ऐसा अवसर मिलेगा।
जो अब कर न पाये तो कब कर मिलेगा।।

गुरुजन जगाते हैं उठो जीव जागो।
भोगभूमि महा दुःखद चलो शीघ्र भागो।
राग द्वेष लोभ मोह सभी दोष त्यागो।
देते रहो जो भी बने किसी से न मांगो।
समय निकल जाने पर फिर न घर मिलेगा।।

जगत् में सभी को काल खा रहा है।
कुछ गोद कुछ मुख मध्य जा रहा है।
कौन है जो काल से बच पा रहा है।
ध्यान रहे तुम्हारा भी समय आ रहा है।
शरणागत भक्त को अभय वर मिलेगा।।

जहाँ तक शक्ति पर उपकार करना।
दया प्रेम भाव से सबको प्यार करना।
असत् से विमुख हो सद्विचार करना।
महापुरुषार्थ पंचकोष पार करना।
तभी तुमको क्षर के परे अक्षर मिलेगा।।

तुम बुद्धियोगी बनो नित्य गुरु ज्ञान लो।
अपना नहीं है कुछ जग में ये जान लो।
एक परमात्मा को सर्वस्व मान लो।
गुरु ज्ञान द्वारा निज रूप पहिचान लो।
'पथिक' भव सिन्धु से तभी तर मिलेगा।।

साधक बोध 353

चित में यदि चाह न रह जाये फिर कुछ दुख दाह न रह जाये।

हम ऐसे हो जाये ज्ञानी, फिर रहें न किंचित अभिमानी।
बन जायें सब कुछ के दानी, भव सिंधु अथाह न रह जाये।।

सब भाँति सदा सन्तोष रहे, मन बुद्धि सदा निर्दोष रहे।
सोहं सत्योहं घोष रहे, कुछ भी परवाह न रह जाये।।

जग के वैभव धन पाने का, शासन अधिकार बढ़ाने का।
फिर किसी ओर भी जाने का कुछ भी उत्साह न रह जाये।।

अपने उर का छलमल धोकर, सब भेद भावना को खोकर।
हम 'पथिक' रहें तुममय होकर, दुर्गति की राह न रह जाये।।

छोड़कर प्रभु का आश्रय महान, अरे कहाँ जाओगे तुम।
कितना घूमो, फिरो लो उड़ान, कभी यहीं आओगे तुम।।

साधक बोध 354

अरे जागो! यहाँ सुख संग दुख है, क्यों मोह के स्वप्न में सो रहे हो।
तुम जिनके लिये इतने चाव से नित कर्म के भार को ढो रहे हो।
छूट जायेंगे ये तो यहीं तुमसे जिनमें अति आसक्त हो रहे हो।
यहाँ आत्मोद्धार का जो समय था तुम व्यर्थ अनर्थ में खो रहे हो।
होगा जब तक नहीं आत्मज्ञान, यहाँ दुख उठाओगे तुम।।

कुछ ही दिन जग में रहना है, किसी निर्बल दुखी को सताओ नहीं
उपकार नहीं कर सकते तो अपकार में पाप कमाओ नहीं।

बल विद्या धन वैभव मद में, गर्वित होकर इतराओ नहीं।
जिससे तुमने सब कुछ पाया, उस परमेश्वर को भुलाओ नहीं।
नित्य करते रहो पुण्यदान, सदा सुख पाओगे तुम।।

जो मानते नहीं परमेश्वर को वह मायिक मोह में भूलते हैं।
विषय सुख से विमोहित उसी मन में, फिर अनेकों दुख शूल झूलते हैं।
कभी पाते हुए कभी खोते हुए, हर्ष शोक के द्वन्द में झूलते हैं।
सदा वस्तु की दासता में जकड़े, फिर भी अभिमान से फूलते हैं।
उन्हें देखो, रहो सावधान वीर कहाओगे तुम।।

अपने प्रभु से मिलने के लिए अपने में ही गोता लगाते रहो।
जिसमें होकर सब कुछ करते, उस चेतन रूप को ध्याते रहो।
जो हो रहा है बस देखो उसे, साक्षी बनो मोह हटाते रहो।
विश्वास करो चिद्घन में सदा, जड़ से अपनत्व भुलाते रहो।
'पथिक' पा के परमगुरु ज्ञान, प्रेम अपनाओगे तुम।।

साधक बोध 355

जब तक तू चाहे देख ले, जग में जो सुख है असार है।
सुख से विरक्त होते ही, मिल जाता मुक्ति द्वार है।।

त्यागी ही इस पथ में जा सके, प्रेमी ही उस प्रभु को पा सके।
उसकी दया अनन्त है, सबकी वो सुनता पुकार है।।

माया में अब न भूल तू, अभिमान में न फूल तू।
जो राग रंग दीखते, कुछ ही दिनों की बहार है।।

तू मोह नींद में न सो, जीवन अपना न व्यर्थ खो।
अब तो शरण उसी की ले, जिसका असीम प्यार है।।
जो कुछ मिला है अपना न मान सब कुछ के सच्चे स्वामी को जान।
उससे 'पथिक' विमुख न हो, जो सबका सिरजन हार है।।

साधक बोध 356

जब निज दोष मिटाना सुगम है, परम शान्ति तब पाना सुगम है।।

प्रीति कामना मुक्त जहाँ है, कर्म भाव संयुक्त जहाँ है।
बन्धन ग्रन्थि छुड़ाना सुगम है, परम शान्ति तब पाना सुगम है।।

जब भोगों की चाह न रहती, प्रलोभनों की राह न रहती।
सेवा नियम निभाना सुगम है, परम शान्ति तब पाना सुगम है।।

जब गुण का अभिमान न रहता, पर अवगुण में ध्यान न रहता।
प्रेम गीत तब गाना सुगम है, परम शान्ति तब पाना सुगम है।।

जहाँ किसी से द्रोह नहीं है, कहीं जगत में मोह नहीं है।
सत्य में सुरति टिकाना सुगम है, परम शान्ति तब पाना सुगम है।।

जो न फिसलते हैं माया में, जो न मुग्ध होते काया में।
प्रभु से प्रीति लगाना सुगम है, परम शान्ति तब पाना सुगम है।।

जो न किसी को दुख देते हैं, जो न किसी का सुख लेते हैं।
मन को अमल बनाना सुगम है, परम शान्ति तब पाना सुगम है।।

सभी ओर से चित्त हटा कर निज प्रियतम के गुन गा गा कर।
'पथिक' त्याग अपनाना सुगम है, परम शान्ति तब पाना सुगम है।।

साधक बोध 357

जग में कर्तव्यनिष्ठ मानव विरले ही देखे जाते हैं।
विद्वान बहुत हैं पर अपने दोषों को छोड़ न पाते हैं।।

पूंजीपति धन के लोभी हैं, निर्धन दानी बनना चाहें।
निर्बल सेवा को तरस रहे, बलवान पड़े अलसाते हैं।।

जो सुखी बाँट सकते सुख को वे बने विलासी भोगी हैं।
जो दुखी न कुछ कर सकते सुख देने को ललचाते हैं।।

जिनकी प्रवृत्ति से गति होगी, वह उदासीन बन रुके हुए।
जिनकी उन्नति निवृति से है, वह प्रवृति को अपनाते हैं।।

कर्तव्य विमुखता के कारण सब उल्टी मति गति हो जाती।
भीतर की प्रकृति छिपा करके जब आकृति मात्र सजाते हैं।।

जब वेश्या वृद्ध हो चुकी हो तब तप करने निकले घर से।
डाकू भी शक्ति हीन होने पर साधु वृत्ति दिखलाते हैं।।

जब रोगी है तब देव भक्त जब कुछ न रहा मुनि बन बैठे।
जब रही भोग की शक्ति नहीं निज को निष्काम बताते हैं।।

चीटी से लेकर ब्रह्मा तक को जो कुछ जग में करना है।
सबके कर्तव्यों की चर्चा, अपना कर्तव्य भुलाते हैं।।

हम जो कुछ हैं जैसे भी हैं हम गृहस्थ हैं या सन्यासी।
हम तभी सफल हो सकते, जब अपना कर्तव्य निभाते हैं।।

जो कुछ भी शुभ हम कर सकते जिसके साधन उपलब्ध हमें।
जो कर्म सर्व हितकारी हों कर्तव्य वही कहलाते हैं।।

अधिकार मान धन की तृष्णा मानव को पतित बनाती है।
जो पथिक जीत पाते इसको वह मुक्तिमार्ग में आते हैं।।

साधक बोध 358

जिसका तुम्हें अभिमान है, यह भी न रहेगा।
जिस बल पै तुम्हें शान है, यह भी न रहेगा।।

तुम गा रहे हो गर्व से अपना विभव प्रताप।
झूँठा सभी समान है, यह भी न रहेगा।।

सोचो तो कैसे कैसे जमाने गुजर गये।
जिनसे कि तू हैरान है, यह भी न रहेगा।।

आये हैं चले जायेंगे कुछ देर के मेहमान।
क्या देखता नादान है, यह भी न रहेगा।।

ऐ 'पथिक' परम भक्त और भगवान के सिवा।
जो कुछ है नाशवान है, यह भी न रहेगा।।

साधक बोध 359

जिसे खोजते थे वह है साथ मेरे, यह चिद् आत्मा ही परम देवता है।
हर एक देह मन्दिर में यह प्रभु प्रतिष्ठित, इसी का बताया हुआ यह पता है।

यही तो सभी प्राणियों का है जीवन, इसी से प्रकाशित ये अन्तःकरण मन।
इसी में सकल विश्व जलथल अनिल है, अनल से गगन से यही झाँकता है।।

यही नाथ है जिसका अथ ही नहीं है, यही नेति जिसकी न इति ही कहीं है।
वह अव्यक्त ही व्यक्ति में व्यक्त होता, इसी की ही सत्ता से जग भासता है।।

मनुज मोह निद्रा में सोये हुए जो, किसी खोज में ही हैं खोये हुए जो।
हैं घेरे हुए सब को सुख दुख के सपने, जिसे गुरु जगाये वही जागता है।।

वहीं यह प्रकट प्रभु जहाँ मैं नहीं है, यह मैपन के रहते न मिलता कहीं है।
औपा की किरण से जब अज्ञान मिटता, तभी यह चिदानन्दघन दीखता है।।

जगत् में जो आता सदा रह न पाता, जो रहता सदा वह है आता न जाता।
यही एक अपना है अपने में ही है ये, हमको कभी भी नहीं भूलता है।।

हमारा दुखी होना ही प्रार्थना है, सुखों में सदा स्तुति वंदना है।
दिखाना सुनाना पथिक कुछ नहीं है, परम प्रभु से सबको सुलभ पूर्णता है।।

साधक बोध 360

जिस प्रभु का यह संसार वह प्रभु मुझमें ही है।।

यहाँ कुछ भी मैं करूँ काम उन्हीं में रहकर।
नित्य मिलता मुझे विश्राम उन्हीं में रहकर।
बीतें दिन-रात सुबह-शाम उन्हीं में रहकर।
जिधर देखूँ करूँ प्रणाम उन्हीं में रहकर।
सत्य चिन्मय अखण्ड अपार वह प्रभु मुझ में ही है।।

हर एक रूप में हर नाम में हो ध्यान यही।
सर्व में उन्हीं की सत्ता है, रहे ज्ञान यही।
यही पूजा स्वधर्म और व्रत विधान यही।

मन से वाणी से सदा होता रहे गान यही।
इस जीवन का जिस पर भार वह प्रभु मुझ में ही है।।

अनेक साधनों का धाम, यह तन प्रभु का है।
जहाँ अगणित भरे हैं काम, यह तन प्रभु का है।
मुझे जो कुछ मिला है वह सभी धन प्रभु का है।
सर्व का आश्रय मैं हूँ यह वचन प्रभु का है।
जिसका सब पर अखण्डित प्यार वह प्रभु मुझ में ही है।।

यही मेरा परम आधार, इसी में आनन्द है।
यहीं मिटता असत् व्यवहार इसी में आनन्द है।
स्वरूप नित्य निर्विकार, इसी में आनन्द है।
यहीं होता हूँ निर्विचार, इसी में आनन्द है।
'पथिक' गाऊँ यही बार-बार वह प्रभु मुझ में ही है।।

साधक बोध 361

जीवन सफल है जग में उन्हीं का परमार्थ पथ में जो आरहे हैं।
वे धन्य हैं जो मन को विरागी हृदय अनुरागी बना रहे हैं ।।

वह मुक्त होंगे बन्धन दुःखों से जो त्याग पायेंगे दोष अपने।
वे हैं अभागी जो तन में धन में आसक्ति ममता बढ़ा रहे हैं ।।

कुछ भी न पायेंगे वे जगत् में जगत् के पीछे जो दौड़ते हैं।
ये जग न उन को पकड़ सकेगा जो जग से आशा हटा रहे हैं ।।

उन्हीं के सब काम पूरे होंगे जो काम आते हैं दूसरों के।
उन्हीं को सर्वोपरि पद मिलेगा जो चाह सारी मिटा रहे हैं ।।

बड़ा आदमी उसी को कहिये किसी से जो कुछ न चाहता हो।
वही है दाता जो लेने वालों को नित्य ही देते जा रहे हैं ।।

वही है स्वाधीन और नित्य निर्भय, है जिनके वश में मन और इन्द्रिय।
पथिक परम तृप्त अपने ही में, जो अपने प्रियतम को पा रहे हैं ।।
जीवन यूँ ही बीत न जाये।

साधक बोध 362

तुम्हारी शान यही वीर बनो बढ़े चलो।
शूरों का गान यही वीर बनो बढ़े चलो।।

रुकने का नाम न लो असमय विश्राम न लो।
सच्चे निष्काम बनो पुण्यों का दाम न लो।
कहते भगवान यही वीर बनो बढ़े चलो।।

दुःख ले लो दो न कभी, सुख दो पर लो न कभी।
गिरो उठो फिर सम्हलो, पर निराश हो न कभी।
गति की पहचान यही वीर बनो बढ़े चलो।।

जो जाये जाने दो जो आये आने दो।
मन को अपने स्वर में रोने दो गाने दो।
गुरु-प्रदत्त ज्ञान यही वीर बनो बढ़े चलो।।

सच्चे त्यागी होकर तुम बड़भागी होकर।
जग से कुछ चाहे मत, सत अनुरागी होकर।
'पथिक' स्वाभिमान यही वीर बनो बढ़े चलो।।

साधक बोध 363

तुम्हें अपने प्रभु को पाना है ।
अब तो सबकी ममता तज कर उनको ही अपनाना है।।

तुम हो जहाँ वहीं रुकना है कहीं न आना जाना है।
कुछ न देख कर सूनेपन से कभी न कुछ भय लाना है।।

आते कठिन विघ्न कितने हो उनसे प्राण बचाना है।
सेवा पथ में जब चलना हो कहीं न ठोकर खाना है।।

इधर-उधर कुछ भी न देखना, सुनना कुछ न सुनाना है।
केवल अपने जीवन धन में मन की सुरति जगाना है।।

काम, क्रोध, लोभादि प्रबल खल इनके वेग मिटाना है।
तृष्णा पापिन साथ लगी है जिससे पिण्ड छुड़ाना है।।

साथ न देगा यह जो कुछ है, क्यों इसमें सुख माना है।
तजि आलस्य 'पथिक' अब चेतो, व्यर्थ न समय गवाँना है।।

साधक बोध 364

देखो मिलता क्या है संसार में सुख लेते लेते।
भ्रमित हो माया के विस्तार में सुख लेते लेते।।

शक्ति जो मिलती है वह धीरे-धीरे घटती जाती।
प्रीति जिससे होती वह वस्तु नित्य ही हटती जाती।
तृप्ति होती न कहीं भी प्यार में सुख लेते लेते।।

मिला जो कुछ भी तुमको उसके ही मोही बन बैठे।
अधिक वैभव पद पाकर भोगी हरि द्रोही बन बैठे।
स्वयं को भूल गये अधिकार में सुख लेते लेते।।

दोषों का त्याग करके हो सकते सब कुछ के दानी।
देह के अभिमानी तुम हो सकते आत्म ज्ञानी।
समय निकल जाता व्यवहार में सुख लेते लेते।।

बड़ा पुरुषार्थ यही है जीवन का उद्धार करना।
योग को लक्ष्य बना भोगों की सीमा पार करना।
'पथिक' अब मत रुकना अविचार में सुख लेते लेते।।

साधक बोध 365

फिर मत कहना कुछ कर न सके।।

जब नर तन तुम्हें निरोग मिला, सत्यसंगति का भी योग मिला।
फिर भी प्रभुकृपानुभाव करके, यदि भवसागर तुम तर न सके।।

तुम सत्य तत्वज्ञानी होकर, तुम सद्धर्मी दानी होकर।
यदि सरल निराभिमानी होकर, कामना-विमुक्त विचार न सके।।

जग में जो कुछ भी पाओगे, सब यहीं छोड़ कर जाओगे।
पछताओगे तुम यदि अपना, पुण्यों से जीवन भर न सके।।

जो सुख सम्पत्ति में फूल रहे, जो वैभव मद में भूल रहे।
उनसे फिर पाप डरेंगे क्यों, जो परमेश्वर से डर न सके।।

जब अन्त समय आ जायेगा, तब क्या तुमसे बन पायेगा।
यदि शक्ति समय के रहते ही, आचार-विचार सुधर न सके।।

होता तब तक न सफल जीवन, है भार रूप सब तन मन धन।
यदि 'पथिक' प्रेम पथ में चल कर, अपना या पर दुःख हर न सके।।

साधक बोध 366

भूल न जाना तुम जिससे सब कुछ पाते भगवान वही है।
उससे विमुख बना देता जो मानव को अभिमान वही है।।

त्यागी वह जो अहंकार के सहित वासना को तज देवे।
भय चिन्ता मिट जाये जिससे, आस्तिक का सद्ज्ञान वही है।।

प्रभु के नाते सेवा करना कुछ न मांगना यही समर्पण।
कुछ भी पाकर, जो न भूलता प्रभु को, मानस ध्यान वही है।।

जो दुःख में गम्भीर शान्त है, सहन शील है वही तपस्वी।
जो न किसी को दीन बनाये, सद्गति दाता दान वही है।।

जो धन चाहे वह निर्धन है, मान चाहता है अभिमानी।
'पथिक' जो न कुछ चाहे जग से, बन्धन मुक्त महान वही है।।

साधक बोध 367

मानव की सफलता है प्रभु प्रेम के पाने में।
सत्संग सहायक है प्रज्ञा के जगाने में।।

यह तन तो साधनों का है धाम मिला सबको।
अब देर न हो साधन को शुद्ध बनाने में।।

साधन को साधे रहने से सिद्धि मिला करती।
साधन न साध पाना ही हेतु गिराने में।।

हम सबकी सुनते आये प्रभु की नहीं सुनते हैं।
सुख मानते हैं अपनी ही सबको सुनाने में।।

भगवान के मिलने में दूरी है न देरी है।
देरी है मोह ममता अभिमान मिटाने में।।

प्रभु नित्य प्राप्त ही हैं सद्गुरु ने बताया है।
हम 'पथिक' स्वयं खोये थे खोज लगाने में।।

साधक बोध 368

मानव सोचो जग के सुख का, विस्तार रहेगा कितने दिन।
सत्कार रहेगा कितने दिन यह प्यार रहेगा कितने दिन।।

चाहे पितु हो या माता हो, पत्नी हो सुत या भ्राता हो।
जिसको अपना कहते उस पर, अधिकार रहेगा कितने दिन।।

कोई आता कोई जाता, सबसे थोड़े दिन का नाता।
जिसका भी आश्रय लेते वह, आधार रहेगा कितने दिन।।

जो जग में सच्चे ज्ञानी हैं, परमात्मतत्व के ध्यानी हैं।
उनसे पूछो मन का माना, संसार रहेगा कितने दिन।।

तुम प्रेम करो अविनाशी से, मिल जाओ सब उर वासी से।
ऐ 'पथिक' 'मैं मेरा' का व्यापार रहेगा कितने दिन।।

साधक बोध 369

मानव हो जाओ सावधान।।

जो कुछ दिखता है दृश्य-जगत् इसमें ही तुम जाना न भूल।
जिस सुख के पीछे दौड़ रहे, वह निश्चय ही है दुःख-मूल।
दिखता उसको ही जिसे ज्ञान।।मानव0।।

संघर्ष कलह का कारण है, यह ऊँच-नीच की भेद दृष्टि।
तुमने ईश्वर को दुनिया में, रच ली है अपनी क्षुद्र सृष्टि।
जिसका कि तुम्हें मिथ्याभिमान ।।मानव0।।

कुछ पद पाकर मद आ जाता, होने लगती निज अर्थपूर्ति।
परहित को वह कर पाते हैं, जो होते सच्चे त्याग मूर्ति।
अब देखो तुम किनके समान ।।मानव0।।

प्रभुता पाकर भोगी न बने, ऐसे भी जग में पुरुष वीर।
देखो उनको उनसे सीखो, वे कितने हैं गम्भीर धीर।
यदि तुम भी हो कुछ बुद्धिमान ।।मानव0।।

है शक्ति जहाँ तक भी तुममें तुम पुण्य करो या महापाप।
तुम देव बनो या दानव ही, लो सुखप्रद वर या दुखद शाप।
बन लो कठोर या दयावान ।।मानव0।।

दुःख बोकर दुःख ही काटोगे, बन सकते केवल सुख बोकर।
जो कुछ दोगे वह आयेगा, कितने ही गुना अधिक हो कर।
है अटल प्रकृति का यह विधान ।।मानव0।।

तुम अतिशय सरल विनम्र बनों, समझो न किसी को तुच्छ-नीच।
कटुता कर्कशता निर्दयता, लाओ न कहीं व्यवहार बीच।
परहित का रखो सदा ध्यान ।।मानव0।।

जो संग न सदा रह सकेगा, अब उसका दो तुम मोह छोड़।
जो तुमसे भिन्न न हो सकता, ऐ 'पथिक' उसी से नेह जोड़।
इस त्याग प्रेम का फल महान ।।मानव0।।

साधक बोध 370

मिलता कभी सौभाग्य से ही सन्त समागम।
सन्तों के सत्य संग से हटता है असत् भ्रम।।

सत्संग के बिना कभी होता नहीं है ज्ञान।
यदि ज्ञान न हो सत्य का रहता नहीं है ध्यान।
बिन ध्यान के दिखते नहीं हैं प्रेममय भगवान।
भगवान बिना जीव का होता नहीं कल्यान।
सत्संग के सुयोग से मिटता है मोह तम ।।मिलता0।।

सत्संग के बिना किसी की गति नहीं होती।
जिससे कि पुण्य प्राप्त हो सन्मति नहीं होती।
पापों से जो बचाती वह सुऔति नहीं होती।
उद्वेग को दबाती जो वह धृति नहीं होती।
इसके बिना होता ही नहीं शक्ति का संयम ।।मिलता0।।

सत्संग से ही ध्रुव ने पाया था अटल धाम।
प्रह्लाद ने इससे ही दिखाया था कहाँ राम।
सत्संग से ही पाण्डवों के दुःख मिटे तमाम।
सत्संग से बन जाते हैं बिगड़े हुए सब काम।
सत्संग से सुधर गये लाखों महा अधम ।।मिलता0।।

इसके बिना कितने ही शक्ति शान्ति खो रहे।
इस मोहमयी नींद में लाखो हैं सो रहे।
जो लघु थे वे सत्संग से महान हो रहे।
जो मलिन थे वह इससे ही निज मल को धो रहे।
मिलती है 'पथिक' को यही पै शान्ति मनोरम ।।मिलता0।।

साधक बोध 371

मुश्किलें होती हैं आसान बड़ी मुश्किल से।
समझ में आता है अज्ञान बड़ी मुश्किल से।।

दुनियाबी ज्ञान के गरूर में सब भूले हैं।
कोई होता है निराभिमान बड़ी मुश्किल से।।

जहाँ इन्सान में है हैवानियत छिपी रहती।
देख पाते कोई विद्वान बड़ी मुश्किल से।।

कभी ईश्वरी विधान गलत करता नहीं।
मगर होता है इतमीनान बड़ी मुश्किल से।।

जो कि बलवान रूपवान झूठवान बना।
उसे होना है आत्मवान बड़ी मुश्किल से।।

किसी की आत्मा परमात्मा से भिन्न नहीं।
ज्ञानी कर पाते हैं पहिचान बड़ी मुश्किल से।।

किसी भी साधना से चित्त शुद्ध होने पर।
सुलभ हो जाते हैं भगवान बड़ी मुश्किल से।।

सारे बन्धन अशान्ति दुःख अहंकार में है।
मुक्त होता कोई महान् बड़ी मुश्किल से।।

गलत कर्मों से ही हम मुश्किलों में पड़ते हैं।
सही कर्मों का होता है ज्ञान बड़ी मुश्किल से।।

सत्य सर्वत्र सर्वमय उसी में है संसार।
'पथिक' में रहता यही ध्यान बड़ी मुश्किल से।।

साधक बोध 372

मैं हूँ पथिक सखे तुम मुझसे समझ-बूझ कर प्रीति बढ़ाना।
फिर मत कहना आगे चलकर मैंने तुम्हें नहीं पहिचाना।।

यदि तुम मेरे सच्चे साथी हो तो इस सत्पथ में आओ।
आकृति नहीं किन्तु तुम अपनी परम विरागी प्रकृति बनाओ।
हो कुछ भी निज भाग्य परिस्थिति कभी न अपना लक्ष्य भुलाओ।
ऐसा न हो कहीं कुछ लालचवश तुम पीछे ही रह जाओ।
याद रहे अति दुष्कर होगा मुझे छोड़कर के फिर पाना।।

यदि तुम अपने मन में कुछ दुनियाबी ममता प्यार लिये हो।

और साथ ही शान मान के पद उपाधि अधिकार लिये हो।
भौतिक जीवन रक्षा के हित धन-वैभव का भार लिये हो।
सत्य विमुख क्षणभंगुर सुख का ही यदि तुम आधार लिये हो।
तब तो मेरे संग में तुमको बहुत कठिन है पैर उठाना।।

कितने प्रेमी मिले, छुट गये कुछ आगे भी छुट जायेंगे।
रुकने वाले बढ़े हुओं को देख-देख कर पछतायेंगे।
इस पथ में चंचल चित वाले जहाँ-तहाँ ठोकर खायेंगे।
जो कि तपस्वी त्यागी हैं वह सत्वर परम शान्ति पायेंगे।
प्रेमी का कर्तव्य यही है कहीं न रुकना चलते जाना।।

चलते हुये चतुर्दिक अपने किसी किसी को सोते देखूँ।
कभी किसी को दुःखद स्वप्न से भयवश जाग्रत होते देखूँ।
सुख के कारण ही इस जग में बद्ध जीव को रोते देखूँ।
सत्यज्ञान से वंचित रहकर सबको जीवन खोते देखूँ।
सोचो कब तक साथ रहेगा जिसको तुमने अपना माना।।

प्रभु के पथ में चलते रहना मेरा तो बस यही काम है।
जहाँ किया विश्राम कहीं पर कहने भर को वही धाम है।
जीवन के दिन बीत रहे हैं नित्य प्रात अरु नित्य शाम है।
ठहर न सकता अधिक दिवस तक इसीलिये तो पथिक नाम है।
इस अनन्त के पथ में मेरा कोई निश्चित नहीं ठिकाना।
मै हूँ पथिक सखे तुम मुझसे समझ-बूझकर प्रीति बढाना।।

साधक बोध 373

मैने देखा है दृष्टि पसार सदा रहता कुछ भी नहीं।
जहाँ तक भी है ये संसार सदा रहता कुछ भी नहीं।।

अनेकों जन्म ले कितने यहाँ माता-पिता देखे।
पता भी है नहीं जिनका बहुत संगी सखा देखे।
वृहद् धन धान्य वैभव भोग के शुभ भाग्य पा देखे।
यहाँ अपनी प्रशंसा के बहुत कुछ गीत गा देखे।
यही कहना पड़ा हर बार सदा रहता कुछ भी नहीं।

यहाँ पर हर किसी को, नेह नाता जोड़ते देखा।
जहाँ मन को न हो पाई, वहीं मुख मोड़ते देखा।
उन्हीं को रूठते लड़ते प्रीति को तोड़ते देखा।
जिसे पकड़ा उसी को, निठुरता से छोड़ते देखा।
तभी मैंने लगाई पुकार सदा रहता कुछ भी नहीं।

प्रेमिका और प्रेमिक प्रेम का जो गान करते हैं।
परस्पर दीखता ऐसा कि सर्वस दान करते हैं।
किन्तु सुख मानते जिसमें उसी का मान करते हैं।
अनेकों दुःख सहकर स्वार्थ का ही ध्यान करते हैं।
बता देता है सीमित प्यार सदा रहता कुछ भी नहीं।

यहाँ पर है कोई अपना तो केवल आत्मा अपना।
वही है विश्व व्यापक प्रेममय परमात्मा अपना।
प्रकाशक नाम रूपों का यही विमलात्मा अपना।

उसी के हम, वही है सच्चिदानन्द आत्मा अपना।
और जितने भी हैं आधार सदा रहता कुछ भी नहीं।

जहाँ सब दुःख मिट जाते वहीं सच्चा ठिकाना है।
वहाँ पर पहुँच कर के इस जगत में फिर न आना है।
यहाँ कुछ भी न अपना मानकर ही मुक्ति पाना है।
अहंता, स्वार्थपरता, मोह, ममता को मिटाना है।
'पथिक' यह ज्ञानियों का विचार सदा रहता कुछ भी नहीं।

साधक बोध 374

यदि तुम बुद्धिमान हो मानव, जीवन व्यर्थ गंवाते क्यों हो।
ऐसा अवसर पाकर अपने हित में देर लगाते क्यों हो।।

चाहे जिसे देखिये जग की सभी वस्तु में परिवर्तन है।
कुछ भी तुम पा जाओ लेकिन वह सब अपने का सा धन है।
अन्त दुःखद सुख ही बन्धन है रचने वाला चंचल मन है।
यदि तुम मुक्ति चाहते हो तो देखो जो चिद्‌आनन्दघन है।
वह है जनम मरण का साथी उसकी याद भुलाते क्यों हो।।

पुण्यवान होना है तुमको सेवा पर उपकार करो तुम।
यदि अपना उत्थान चाहते प्राणिमात्र से प्यार करो तुम।
हृदय निष्कलुष रखना हो तो सबसे सद्‌व्यवहार करो तुम।
सत्य ज्ञान से दुःखद अविद्या की सीमा को पार करो तुम।
जिन दोषों से दुर्गति होती भ्रमवश उन्हें छिपाते क्यों हो।।

जिसके द्वारा मानवता में सरस दिव्यता लाई जाती।
शुभकर्मी बन सद्भावों की जिससे शक्ति बढ़ाई जाती।
जिसके बल से दृढ़प्रतिज्ञ बन पाशव प्रऔति मिटाई जाती।
कितने ही जन्मों के पीछे जो जीवन में पाई जाती।
उस विद्या का दुरुपयोग कर अपने पाप बढ़ाते क्यों हो।।

जो कुछ भी है पास तुम्हारे उससे तुम दानी बन जाओ।
विनम्रता के द्वारा ही तुम सरल निराभिमानी बन जाओ।
प्राप्त ज्ञान का गर्व छोड़कर अधिकाधिक ज्ञानी बन जाओ।
निर्मोही होकर तुम सच्चे प्रेमी पुनि ध्यानी बन जाओ।
होकर अमर पुत्र 'पथिक" तुम मृत्यु मार्ग में जाते क्यों हो।।

साधक बोध 375

यदि समझ सको तो यह समझो क्यों भूले विश्वबिपिन में तुम।
इतना दुख पाकर भी अब तक सुख खोज रहे हो किन में तुम।।

कितना ही घूमोफिरो कहीं, जो कुछ दिखता है सत्य नहीं।
अपने को न जानने तक ही मोहित हो महामलिन में तुम।।

इस सृष्टि वीथियों में सुन्दर आकृतिमय पुष्प खिले मनोहर।
पर कण्टक भी उनके संग में, रस लेने जाते जिनमें तुम।।

जिनको तुम कहते हो सुखमय, वे दीखेंगे इक दिन दुखमय।
जिनके प्रलोभनों में फंस कर फिरते हो गलिन गलिन में तुम।।

जग में कुछ अपना मत जानो जगदीश्वर को अपना मानो।

जो तुम्हें छोड़ते जाते हैं, क्यों अटक रहे हो उनमें तुम।।

निश्चित है मृत्यु निशा आना, खोकर यह समय न पछताना।
ऐ 'पथिक' स्वयं का अन्वेषण अब कर लो दिन ही दिन में तुम।।

साधक बोध 376

यह सत्य वचन है पूर्ण त्याग बिन हम चिरशान्ति न पा सकते।।
सच्चे प्रेमी होकर ही जग में पूर्ण त्याग अपना सकते।।

अब समझे यह सुख की तृष्णा अगणित अपराध कराती है।
अधिकार मान धन की लिप्सा कितने ही द्वार घुमाती है।
कितनी ही सिद्धि प्रसिद्धि मिले पर मन को चैन न आती है।
जब तक संतोष नहीं होता सबको कामना नचाती है।
हम निजस्वरूप में नित्यतृप्त होकर कामना मिटा सकते ।।

हम बन जायें तपसी विरक्त कौपीन मात्र लेकर तन में।
इतने पर भी यदि भोगों की कामना अतृप्त भरी मन में।
कुछ भक्तों के मिलते ही हम फिर महल बना सकते वन में।
साधना भूल सकती है तब तो धनिकों के आराधन में।
जब तक गुरु ज्ञान न हो तब तक पग-पग में धोखा खा सकते ।।

हम संन्यासी हो जायें पर यदि कीर्ति प्रतिष्ठा है प्यारी।
सम्भव है छोटा घर तज कर हम बन जायें फिर मठधारी।
तब तो चाहेंगे आश्रम में आ जाये ऊँचे अधिकारी।
गुरुजन की नहीं गवर्नर के स्वागत की होगी तैयारी।

तब लक्षाधीशों के पीछे ईश्वर का ध्यान भुला सकते ।।

हम श्रमी संयमी साधक हों इसके ही लिये मिला तन है।
जीवन को मुक्त बनाने का बस असंगता ही साधन है।
यह भी समझे ! बन्धन का कारण यह तन नहीं किन्तु मन है।
उलझन भी तब तक है जब तक मस्तिष्क हृदय में अनबन है।
हम सद्विवेक के द्वारा ही सारी उलझन सुलझा सकते ।।

हम मान रहे हैं अपने को जग में यदि सर्वोत्तम ज्ञानी।
हैं धनी कुलीन शक्तिशाली विद्वान विचारक विज्ञानी।
देखना यही है अन्तर में कितने लोभी कितने दानी।
उर के कठोर या कोमल-चित हैं नत विनम्र या अभिमानी।
हम आत्म निरीक्षण करके जीवन में सुन्दरता ला सकते ।।

हम जन नेता हो सकते हैं नेतृत्व स्वयं पर कर लें जब।
सुख बाँट सकेंगे दुखियों को अपने अभाव दुख हरलें जब।
तब उठा सकेंगे दलितों को हम उनके बीच उतर लें जब।
हम भीतर से शीतल होकर ही पर ताप हटा सकते ।।

बन सकते सरस कथा वाचक जब ध्यान कभी धन में न रहे।
पूजा में क्या चढ़ पायेगा, यह उथल पुथल मन में न रहे।
श्रोता दर्शन कर मुग्ध बने, वह भूषा विधि तन में न रहे।
निज भाव भगवद्कार बने, जब प्रीति धनिक जन में न रहे।
हम सन्तोषी निस्पृह होकर सुन्दर हरिकथा सुना सकते ।।

हम उपदेशक बन सकते जब लोभादि विकारों को छोड़ें।

हम पा सकते सत्यानुराग जब असत् सुखों से मन मोड़ें।
यदि सर्व हितैषी होना है, ममता के सब नाते तोड़ें।
हम भक्ति सुलभ कर पायेंगे जब प्रीति एक प्रभु से जोड़ें।
पहले हम अपने को समझें फिर औरों को समझा सकते ।।

जीवन में सद्गति तब निश्चित जब लोभ काम वश रहें नहीं।
सेवा के बदले में समाज से मान भोग कुछ चहें नहीं।
जो कष्ट मिले सब सह जायें, हिंसा अनीति को गहें नहीं।
शम दम धीरज को धारण कर, क्रोधाजित बन कटु कहें नहीं।
हम दैवी सम्पद के द्वारा जीवन आदर्श बना सकते ।।

परमार्थ सिद्धि हम पा सकते जब स्वार्थ पूर्ति की चाह न हो।
सेवा से आत्म शुद्धि होगी जब सुख दुःख की परवाह न हो।
प्रियतम से प्रीति मिला देगी जब अन्य किसी की राह न हो।
हम 'पथिक' प्रभु कृपा के बल पर ही परम लक्ष्य तक जा सकते ।।

साधक बोध 377

यह सच है त्याग प्रेम को ही जीवन में पूर्ण बनाना है।
इस राग द्वेष की सीमा को जैसे हो तोड़ मिटाना है।।

जब तक हम रागी द्वेषी है, इस जग से हुआ विराग नहीं।
जब तक अन्तर में भेदभाव तब, समतामय अनुराग नहीं।
चिन्ता भय को आस्तिक जीवन में मिलता कोई भाग नहीं।
जब तक कि अहंता ममता है, तब तक हो पाया त्याग नहीं।
अब आत्म निरीक्षण करके सब दोषों को दूर हटाना है।।

अपना हित तभी हो सकेगा जब मान भोग की चाह न हो।
सेवा से आत्म शुद्धि होगी जब सुख-दुःख की परवाह न हो।
तब सुलभ परमगति होगी जब वासना रोकती राह न हो।
बाधाएँ हटती जायेगी जब कहीं शिथिल उत्साह न हो।
जो कुछ भी शक्ति प्राप्त हमको अब सदुपयोग में लाना है।।

चाहते यही हम सब प्राणी आनन्द प्राप्त हो जीवन में।
यद्यपि हम खोज रहे इसको विषयोपभोग वैभव धन में।
भटक कर फिर कभी झाँकते हैं, गिरि गुहा सिन्धु तट में वन में।
जब तक अपूर्णता दिखती है, तब तक है चैन नहीं मन में।
पूर्णता सत्य में रहती है, हमने असत्‌मय में माना है।।

त्याग की पूर्णता में न रहेगा 'अहम्' और 'मम' का बन्धन।
फिर असंगता ही हो जायेगी नित्य मुक्ति का शुचि साधन।
प्रेम की पूर्णता होते ही सर्वमय मिलेंगे आनन्दघन।
जब चित्‌ चिन्मय हो जायेगा योगी होगा यह भोगी मन।
है यही 'पथिक' का परमलक्ष्य-परमार्थ इसे ही पाना है।।

साधक बोध 378

व्यर्थ जीवन न जाये सजग रहना।।

जहाँ तक हो सके तुम पुण्य दान करते रहो।
गुमान छोड़कर गुणियों का मान करते रहो।
प्रेम के नेम से ईश्वर का ध्यान करते रहो।

उनकी लीलाओं का सविवेक गान करते रहो।
मन को प्रभु में लगाये सजग रहना।।

पूरी होगी अवश्य जो कि चाह सच्ची है।
खाली जायेगी नहीं जो कि आह सच्ची है।
सच्चे प्रेमी बनो बस यह सलाह सच्ची है।
समझ लो अपने लिये कौन राह सच्ची है।
भूल होने न पाये सजग रहना।।

फिसल जाना न कभी सुखों के प्रलोभन में।
त्याग दो उसको जो दुर्वासना भरी मन में।
देखो भगवान् को सब प्राणियों में जन जन में।
कहीं आसक्त न होना यहाँ वैभव धन में।
भाव डिगने न पाये सजग रहना।।

सदा सम रह के यह संसार देखते जाना।
प्यार हो या कि तिरस्कार देखते जाना।
झूठ है जगत् का व्योहार देखते जाना।
अपना जैसे भी हो उद्धार देखते जाना।
'पथिक' जो कुछ भी आये सजग रहना।।

साधक बोध 379

वे वीर विवेकी मानव हैं, जो मोह नींद से जाग सके।
उनके ही दुःख मिटेंगे जो निजकृत दोषों को त्याग सके।।

वे श्रमी संयमी होते हैं, वे शुभकर्मी सद्गति पाते।
जो शक्ति समय का सदुपयोग कर, भोग भूमि से भाग सके।।

बेचैन बनाती जो सबको, वह चिन्ता उनकी मिट जाती।
जिनका चित चाह मुक्त होकर, हरि के चिन्तन में लाग सके।।

है साधक का पुरुषार्थ यही, सारी दुर्बलतायें तज दे।
कामना रहित होकर जो अपना हृदय प्रीति से पाग सके।।

सबका दाता जगदीश्वर है, पूरी होती सबके मन की।
तू 'पथिक' भिखारी ऐसा बन, प्रभु से प्रभु को ही माँग सके।।

साधक बोध 380

सज्जनों उधर दुःख सुख में रोने गाने वालों को देखो।
दुःख सुख से रहित नित्य आनन्द मनाने वालों को देखो।।

जिसकी प्रतीति तो होती पर प्राप्त नहीं होता कुछ भी।
उस अनित्य सुख में अपना चित्त फँसाने वालों को देखो।।

जिस वस्तु व्यक्ति से मिल करके यह कहते हैं ये मेरी है।
इस ममता का फल दुःख है अश्रु बहाने वालों को देखो।।

जो अपने से है भिन्न नहीं जिसमें जड़ता का दोष नहीं।
उसको ही दूर मान कर खोज लगाने वालों को देखो।।

जब तक वैभव-धन-मान-भोग के रस का मन रागी रहता।
तब तक जैसी गति होती वेष बनाने वालों को देखो।।

चरचा चलती है सत् की पर जब रमण असत् में होता है।
सतसंग रहित उन सतसंगी कहलाने वालों को देखो।।

देखते हुए उसको जानो जिसकी सत्ता में देख रहे।
तुम 'पथिक' सजग हो मुक्ति भक्ति के पाने वालों को देखो।।

साधक बोध 381

सत्य धर्म वीरों का पथ है, इसमें दुर्बल आ न सकेंगे।
जब तक वे न जितेन्द्रिय होंगे, तब तक सद्गति पा न सकेंगे।।

दिखते लाखों नर आकृति में असुर प्रकृति के अति अभिमानी।
सुख लोलुप शोषक उत्पीड़क सत्यविमुख भौतिक विज्ञानी।
मानवता का घोर अनादर करते हैं निज सुख के ध्यानी।
सर्वभूत-हित में जो रत हों दुर्लभ ऐसे प्रेमी दानी।
वे सब के ढिंग आते रहते सब उनके ढिंग जा न सकेंगे।।

जब अतिशय ही पुण्य प्रबल हो तब लगती सत्संगति प्यारी।
फिर भी यदि श्रद्धा न प्रबल हो बाधक बनते संशय भारी।
बड़े भाग्य से संत पुरुष जब कोई हो आज्ञाकारी।
वह मानव सद्भावपूर्वक बन जाता है पर उपकारी।
हितप्रद सेवा के बिन कोई अपने पाप मिटा न सकेंगे।।

सद्विवेक से रहित पुरुष की सुत कुपुत्र के प्रति रति होती।
असतसंग देहाभिमान वश सत् स्वरूप की विस्मृति होती।
धर्म-ग्लानि कर्तव्य हीनता, संचित पुण्यों की क्षति होती।

यह अज्ञान मोह सद्गुरु बिन कोई और हटा न सकेंगे।।

जिस साधक में धैर्य नम्रता सहिष्णुता यह दैवीय धन है।
उसका ही साधन के द्वारा उठता अधः पतित जीवन है।
तप संयम करना ही होता जब भोगों में चंचल मन है।
व्रत हठ भी बनता आवश्यक जब विषयों का प्रबल व्यसन है।
'पथिक' त्याग बिन शान्ति धारा में रागी पैर बढ़ा न सकेंगे।।

साधक बोध 382

साधु-साधना नहीं भुलाना, इसकी सिद्धि प्रेम को पाना।।

काम क्रोध से शक्ति बचाना, सब इन्द्रियों को बस में लाना।
क्षणिक सुखों में मन न फँसाना, साधु साधना नहीं भुलाना ।।

अन्धे की लाठी बन जाना, भटके जन को मार्ग बताना।
दीन अनाथों को अपनाना, साधु साधना नहीं भुलाना ।।

दुःखी जनों का कष्ट हटाना, कंटक चुनकर फूल बिछाना।
अन्धकार में ज्योति जलाना, साधु साधना नहीं भुलाना ।।

भूखे जन की क्षुधा मिटाना, प्यासे की तुम प्यास बुझाना।
रोगी को औषधि पहुँचाना, साधु साधना नहीं भुलाना ।।

गिरे हुये को तुरत उठाना, शोक विकल को गले लगाना।
रोते को भी धैर्य बंधाना, साधु साधना नहीं भुलाना ।।

निर्धन को कुछ धन दे आना, निर्बल को बलवान बनाना।
कहना मत करके दिखलाना, साधु साधना नहीं भुलाना ।।

पर धन में न कभी ललचाना, जगत् दृश्य से विरति बढ़ाना।
कर्मवीर जग में कहलाना, साधु साधना नहीं भुलाना ।।

वैभव में न कभी इतराना, असफलता में चित न डिगाना।
'पथिक' सभी विधि नियम निभाना साधु साधना नहीं भुलाना ।।

साधक बोध 383

सुन लो हम यही बताते हैं, तुम किधर यह किधर जाते हैं।।

तुम गर्वपूर्वक कहते हो, यह भी मेरा वह भी मेरा।
यह प्रभु से कहते 'तू ही तू' यह भी तेरा वह भी तेरा।
तुम कुगति यह सुगति पाते हैं ।। तुम किधर0।।

तुम बन्धन तोड़ नहीं सकते, तन धन के अभिमानी होकर।
यह सब कुछ समझ रहे प्रभु का इसलिये आत्मज्ञानी होकर।
अपने को मुक्त बनाते हैं ।। तुम किधर0।।

तुम सुख के कारण दुःख पाते, मिटती है मन की भ्रान्ति नहीं।
यह सुख दुःख को मिथ्या समझें, दिखती है कहीं अशान्ति नहीं।
अपना कर्तव्य निभाते हैं ।। तुम किधर0।।

यह जिस प्रकाश में देख रहे, तुम मान रहे हो रात वहाँ।
तुम जहाँ वस्तुओं से चिपटे, सुनते न ज्ञान की बात वहाँ।
गुरु बार-बार समझाते हैं ।। तुम किधर0।।

तुम जिसको अपना समझ रहे, अपने संग सदा न रख पाते।
यह प्रेमी है उस प्रियतम के जो क्षण भी दूर नहीं जाते।
हम 'पथिक' इन्हीं की गाते हैं ।। तुम किधर0।।

साधक बोध 384

सोचो किसने क्या पाया, मानव क्यों जग में आया।।

आने वालों को देखो, क्या लेकर वे आते हैं।
जाने वालों को देखो, क्या संग लेकर जाते हैं।
कुछ पुण्य किये या यूँ ही, यह नर तन व्यर्थ गवाँया।।

उस लोभी को भी देखो, संचय का जिसे व्यसन है।
लाखों की सम्पत्ति जोड़ी, पर तृप्त न होता मन है।
कौड़ी न साथ जायेगी, फिर किसके लिये कमाया।।

उस कामी को भी देखो, मन भरा या कि रीता है।
इच्छायें पूरी करते, कितना जीवन बीता है।
यह वही काम है जिसने, किस किसको नहीं नचाया।।

उस मोही को भी देखो, सबकी ममता में फूला।
निज देह गेह में फँस कर, उस परमेश्वर को भूला।
यह मोह दुःखों की जड़ है, इसने किसको न रुलाया।।

उस अभिमानी को देखो, यह वैभव रहेगा कब तक।
उससे भी बढ़कर जग में, हो गये करोड़ों अब तक।
मिट्टी में खोजे कोई, उनकी कंचन सी काया।।

उस दानी को भी देखो, क्या सुख मिलता देने में।
वह क्या जानेंगे इसको, जो लगे हुए लेने में।
इन देने वालों ने ही, है सच्चा लाभ उठाया।।

उस ज्ञानी को भी देखो, जिसको न कहीं कुछ भय है।
दिख रहा दृष्टि में उसको, यह विश्व आत्मामय है।
जो कोई सन्मुख आया, उसका अज्ञान मिटाया।।

उस प्रेमी को भी देखो, जो प्रियतम में लय होकर।
स्वाधीन विचरता जग में, तन मन की चिन्ता खोकर।
वह 'पथिक' धन्य है जिस पर, पड़ जाती इनकी छाया।।

साधक बोध 385

सोचो तो सज्जनों यहाँ, स्वाधीन शान्ति पाते न क्यों।
सुख का ही अन्त दुःख देखकर परमार्थ-पथ में आते न क्यों।।

शुभ या अशुभ कर्मों का फल तुमको ही भोगना पड़े।
अब सावधान होके तुम निष्कामता को लाते न क्यों।।

कितना ही तुमने तप किया, संयम दान जप किया।
सत्य को जानने न दे वह अभिमान मिटाते न क्यों।।

मन में सुखोपभोग की तृष्णा भी एक आग है।
उसकी न पूर्ति होती कभी त्याग से उसको बुझाते न क्यों।।

सुन्दर मानव तन मिला, सत्संग का सुयोग भी।
ऐसा सुअवसर पाके 'पथिक' जीवन सफल बनाते न क्यों।।

सौभाग्य से गुरुदेव की जो शरण में आया।।
गुरुदेव की औपा से छूटी ममतामयी माया।।

साधक बोध 386

संसार में मानव वही सत् धर्म जो अपना सके।
जिसमें कि सत्य विवेक हो, मन के विकार हटा सके।।

ज्ञानी वही जो सर्वदा, दुख द्वन्द में भी शान्त हो।
प्रतिकूलता कितनी ही हो, समता न कोई डिगा सके।।

प्रेमी वही अपने लिये, जो कुछ नहीं हो चाहता।
निष्काम सेवा भाव से, प्रियतम को जो कि रिझा सके।

त्यागी वही जो विरक्त है, जो लोभ मोह से मुक्त है।
जो कामना के साथ ही, देहाभिमान मिटा सके।।

जो दूरदर्शी सन्त जन, सौभाग्यवान उसे कहें।
जो भाग्यहीनों के लिये सुख दान करता जा सके।।

सम्पत्तिवान वहीं जहाँ, दैवी गुणों का राज्य हो।
शीतल हृदय उसका है जो, तृष्णा की आग बुझा सके।।

सबसे बड़ा समझो उसे, जिसकी बड़ी छाया रहे।
सच्चा सुखी वह है कि जो, दुःखियों के दुःख हटा सके।।

है शक्तिमान वही यहाँ, आता है सबके काम जो।
परमार्थी वह है 'पथिक', जो शान्ति शाश्वत पा सके।।

साधक बोध 387

है सफल उसी का नर जीवन, जो रहता जग में त्यागी बन।
जिसने जीता है अपना मन, दैवी सम्पत्ति ही जिसका धन।
वे महापुरुष कहलाते हैं, इसको सब कोई क्या जाने।।

धन पाकर जो दानी न बने, जो सरल निराभिमानी न बने।
जो ईश्वर का ध्यानी न बने, जो आत्मतत्व ज्ञानी न बने।
वह जीवन व्यर्थ बिताते हैं, इसको सब कोई क्या जाने।।

जो व्यक्ति वस्तु का दास नहीं, दोषों का जिसमें वास नहीं।
जिसमें दुर्व्यसन विलास नहीं, दुःख आते उसके पास नहीं।
वह 'पथिक' महत् पद पाते हैं, इसको सब कोई क्या जाने।।

साधक बोध 388

हम तुम क्या कितने महारथी इस जग में आकर चले गये।।
निज कर्मों से ही नर्क-स्वर्ग की राह बना कर चले गये।।

हम सब को भी चलना ही है, चलने की तैयारी कर लो।
जो पहले से तैयार न थे, पछता पछता कर चले गये।।

जब सब कुछ छूट जाना ही है, सबकी ममता का त्याग करो।
मूरख तो मैं-मेरी कह के, मद मान बढ़ा कर चले गये।।

हम सबको यही देखना है, कुछ अशुभ न हो शुभ ही शुभ हो।
लाखों अविवेकी शक्ति समय को, व्यर्थ बना कर चले गये।।

अब अपना कुछ न मान करके सब कुछ परमेश्वर का जानो।
वह 'पथिक' धन्य, जो भक्ति मुक्ति का सत्पथ पाकर चले गये।।

साधक बोध 389

ये जब तक कि दिल की सफाई नहीं है।
सनम से तभी इकताई नहीं है।।

तुम्हारा वहम तेरे दिल में समाया।
हकीकत में उससे जुदाई नहीं है।।

तभी तक है लुत्फो करम से किनारा।
दुई दिल की जब तक मिटाई नहीं है।।

तेरा रहनुमा शेफ्ता तेरे दिल में।
मगर लज्जते वस्ल पाई नहीं है।।

मिटा गैरियत देख हर आन वाहद।
सिवा इसके कोई दवाई नहीं है।।

पथिक जान जां गैरसानी मुज़र्रद।
ये नुत्को जुबां की रसाई नहीं है।।

साधक बोध 390

ऐ पथिक तू क्या न पाता।
किसलिए कितने युगों से, यहाँ बारम्बार आता।।ऐ पथिक0।।

स्वर्ग में जा खोज डाला, नर्क का भी पड़ा पाला।
आज इतना देख सुनकर भी न कुछ सन्तोष लाता।।ऐ पथिक0।।

कभी विस्तृत राज्य पाकर, विपुल धन जन बल बढ़ाकर।
यहाँ से चलते समय बस, सदा खाली हाथ जाता।।ऐ पथिक0।।

वही मन की वासनायें, उन्हीं पैरों में घुमायें।
जहाँ से जाता वहीं पर, पुनः क्यों चक्कर लगाता।।ऐ पथिक0।।

भोगकर जिनमें क्षणिक सुख, देखता परिणाम में दुख।
उसी की रमणीयता में मुग्ध होकर मन रमाता।।ऐ पथिक0।।

जिस जगह रोना पड़ा है, शान्ति सुख खोना पड़ा है
मूर्ख है धिक्कार तुझको, जो उसी का गीत गाता।।ऐ पथिक0।।

तू स्वयं आनन्दनिधि है, भूलता अपनी सुविधि है।
पथिक अपने दुख सुखों के भाग्य का तू ही विधाता।।

साधक बोध 391

अज्ञान में तुम जो कुछ भी मानते हो मन में।
जो सन्त सत्यदर्शी वे जानते जीवन में।।

वे देखते क्षण-क्षण में कण-कण में परमप्रभु को।
तुम खोजते फिरते हो मन्दिर में कुंज वन में।।

तुम माने हुए प्रभु की प्रिय झाँकी सजाते हो।
वे देखते उसे जिसके चीथड़े हैं तन में।

वे आह सुन दुःखी की रक्षा के लिये आतुर ।
तुम वाह-वाह करते संकीर्तन भजन में।।

वह कर रहे रोगी के उपचार की व्यवस्था।
तुम ध्यान कर रहे हो प्रभु का किसी चमन में ।।

तुम मधुर वाद्य गायन से प्रभु को जब रिझाते।
तब वे लगे होते हैं पतितों के संगठन में ।।

निष्काम सिद्ध वे हैं तुम हो सकाम साधक ।
वे कर्म में मगन है तुम व्यस्त हो कथन में ।।

तुम प्रभु को नहीं, प्रभु से धन मान सुख को चाहा।
निष्काम तृप्त वे है सच्चिदानन्द घन में ।

साधक बोध 392

हर किसी का है बसेरा चन्द रोज।
देख लो संध्या सवेरा चन्द रोज।

कितने राजे महाराजे हो गये ।
कितने दारा और सिकन्दर खो गये।
हर किसी का है बसेरा चन्द रोज।

कुटुम्बी जन और धन के आस पास ।
जवानी से भरे तन के आस पास ।।
लगा लो बस तुम भी फेरा चन्द रोज।

यहाँ धनवन्तरि वो लुकमा थे कभी।
बड़े से भी बड़े सर्जन है अभी।।
हर किसी का रहता घेरा चन्द रोज।

गजब की मौजें बहारें थी जहाँ ।
आज चर्चा ही सुनी जाती वहाँ।।
रहा करता पाख उजेरा चन्द रोज ।।

जो रुलाते किसी निर्बल दीन को।
जो सताते है किसी धन हीन को।।
उनका भी यह है जखीरा चन्द रोज ।।

सोच लो क्या साथ अपने जायेगा ।
कौन कितने दिन यहॉ रह पायेगा।।
पथिक कर लो मेरा तेरा चन्द रोज ।।

साधक बोध 393

औपा प्रभु की है अहंकार देख लेते हम।
इसके दिखते ही मुक्ति द्वार देख लेते हम।।

देखने वाले हैं हम कौन, मौन होने पर।
स्वरूप नित्य निर्विकार देख लेते हम ।।

मन के माने हुए सुख दुःख है सभी बन्धन हैं।
मोह के मिटते ही उद्धार देख लेते हम।।

किसी भी वस्तु से ममता तभी मिटती है जब।
अपना कुछ भी नहीं अधिकार देख लेते हम।।

प्रऔति के पार प्रभु को तभी समझ पाते जब।
अपना माना हुआ संसार देख लेते हम ।।

ज्ञान की दृष्टि से कण-कण में और क्षण-क्षण में।
जड़ में चेतन का चमत्कार देख लेते हम ।।

पथिक सन्देश है विश्राम तभी मिलता जब।
परम प्रियतम को मन के पार देख लेते हम।।

साधक बोध 394

जीवन की पूर्णता है सत प्रेम के पाने में।
सत् प्रेम सुलभ होता अहंकार मिटाने में।।

यह अहंकार मिटता जब ध्यान सधा होता ।
सधता है ध्यान मन को निर्विषय बनाने में।।

मन तब विरक्त होता, जब आत्मा में रति हो ।
वह आत्मरति भी होती निष्कामता लाने में।।

निष्कामता आती है जब संग दोष हटता।
रहता असंग मन है भोगों से बचाने में।।

भोगों में उसी की ही आसक्ति रहा करती।
जो कायर है परहित व्रत धर्म निभाने में।।

अज्ञान की परिधि में सब पाप हुआ करते।
बिरले ही सावधान आत्म ज्ञान जगाने में।।

सेवा भजन के द्वारा भोगी भी बने योगी।
हम पथिक प्रभु औपा से आये है ठिकाने में।।

साधक बोध 395

बेला अमृत गया आलसी सो रहा बन अभागा।
साथी सारे जगे तू न जागा।।

झोलियाँ भर रहे भाग्य वाले, लाखों पतितों ने जीवन सम्हाले।
रंक राजा बन, ज्ञान रस में सने कष्ट भागा ।। साथी सारे0।

कर्म उत्तम थे नर तन जो पाया, मूर्ख रह करके हीरा गंवाया।
हो गयी उल्टी मति करके अपनी ही क्षति विष में पागा ।। साथी सारे0।।

धर्म वेदों का देखा न भाला समय खोया पड़ा दुःख से पाला।
सौदा घाटे का कर हाथ माथे पे धर रोने लागा।। साथी सारे0।।

सत् असत् को न तूनें विचारा, सिर से ऋषियो का ऋण न उतारा।
हंस का रूप था, गंदला पानी पिया, बनके कागा।। साथी सारे0।।

सीख गुरु की अभी मान ले तू निज को विज्ञान से जान ले तू।
शब्द सोंहम का भज देह अभिमान तज, हो विरागा।। साथी सारे0।।

साधक बोध 396

जहाँ ज्ञान में देख न पाते। वहीं मोह में हम फँस जाते।
अन्धकार में रत्न समझ कर कंकड़ पत्थर ही चुनते हैं।।

मूल्य न मिलता जब उनका कुछ तब हम अपना सिर धुनते है।
काल कर्म को दोष लगाते। जहाँ ज्ञान में देख न पाते।।

भूमि भवन तन धन जन मन को अपना मान सुखी होते हम।
जहाँ किसी का वियोग होता तब अत्यन्त दुःखी होते हम ।।

अनजाने ही लोभ बढ़ाते । जहाँ ज्ञान में देख न पाते।।
अविनाशी हम देह विनाशी यह जड़ है हम सत् चेतन हैं।

परम आत्मा सर्वाश्रेय है यह है एक अनेकों मन हैं।
ऐसा गुरुजन हैं समझाते। जहाँ ज्ञान में देख न पाते।।

दुःखी दशा में त्याग और तप, सुखी दशा में सेवा कर लें।
आत्म ज्ञान से पूर्ण तृप्त हो नित्य प्रेम में प्रभु को भर लें।

इसमे भी हम देर लगाते। जहाँ ज्ञान मे देख न पाते ।।
सत चेतन को भूले रहकर मुग्ध हो रहे जड़ काया में ।

ममता के वश हम मर्कटवतृ नाच रहे मन की माया में।
भोगी बन कर कष्ट उठाते। जहाँ ज्ञान में देख न पाते।।

जो अज्ञान विनाशक हैं वह ज्ञान स्वरूप हमारा गुरु है।
पथिक वही मनमुख कहलाते। जहाँ ज्ञान में देख न पाते।।

साधक बोध 397

यही साधना, नही भुलाना। इसकी सिद्धि, प्रेम को पाना।।

काम क्रोध से :ाक्ति बचाना। सब इन्द्रिय को वश में लाना ।
क्षणिक सुखों में मन न फंसाना ।। यही साधना 0।।

अन्धे की लाठी बन जाना। भटके जन को मार्ग बताना।।
दीन अनाथों को अपनाना।। यही साधना0।।

दुःखी जनों का कष्ट हटाना। कंटक चुन कर फूल बिछाना।।
अन्धकार में ज्योति जलाना।। यही साधना0।।

भूखे जन की क्षुधा मिटाना। प्यासे की तुम प्यास बुझाना।।
रोगी को औषधि पहुँचाना।। यही साधना0।।

गिरे हुए को तुरत उठाना । शोक विकल को गले लगाना।
रोते को भी धैर्य बँधाना।। यही साधना0।।

निर्धन को कुछ धन दे आना। निर्बल को बलवान बनाना।।
कहना मत, करके दिखलाना।। यही साधना0।।

पर धन में न कभी ललचाना । जगत दृश्य से विरति बढ़ाना।।
कर्म वीर जग में कहलाना।। यही साधना0।।

वैभव में न कभी इतराना। असफलता में चित न डिगाना।
सेवा के सब नियम निभाना।। यही साधना0।।

भजन 398

ऐ मन तुम गाओ गान यही, श्री हरिशरणम् श्री हरिशरणम्
दिखता है भाव महान यही, श्री हरिशरणम् श्री हरिशरणम्।।

चाहे जितना दुःख सुख होवे, तू कभी न सत्य विमुख होवे।
निकले अन्तर से तान यही, श्री हरिशरणम् श्री हरिशरणम्।।

रहना घर में हो या वन में, चिन्ता न रहे कोई मन में।
है सहज सुलभ शुभ ज्ञान यही, श्री हरिशरणम् श्री हरिशरणम्।।

सुख साम्राज्य पाये तो क्या, या सर्वस खो जाये तो क्या।
भक्तों को तो अभिमान यही, श्री हरिशरणम् श्री हरिशरणम्।।

फल ये ही मानव जीवन का सम्बन्ध छोड़ वैभव धन का।
पा जाये परम स्थान यही, श्री हरिशरणम् श्री हरिशरणम्।।

मिलती इससे शुचि सदगति है, यह कितनी सुन्दर सन्मति है।
बस रहे 'पथिक' का ध्यान यही, श्री हरिशरणम् श्री हरिशरणम्।।

भजन प्रेरणा 399

ऐ मन तुम चलते फिरते बैठे गाओ प्रभु के नाम।।
गोविन्द ओम नारायण या सच्चिदानन्द श्री राम।।

नामोच्चारण से सर्वदा शुभाशुभ अर्थ छिपा रहता।
साधक पावन नामों द्वारा ही परम सिद्धि गहता।
नाम के सहारे दुःख सिन्धु पापी तर गये तमाम।।

द्रोपदी दुखी हो कृष्ण नाम जिस समय पुकारा था।
दुःशासन चीर खींचते हुए सभा में हारा था।
चीर के रूप में उतर रहे थे स्वयं श्री घनश्याम।।

गज लड़ता रहा जहाँ तक तन जन बल की आशा थी।
उस समय शरण ली प्रभु की जब सब ओर निराशा थी।
वह पूरा नाम न ले पाया कर गया सुदर्शन काम।।

नाम के सहारे कभी अटल पद ध्रुव ने पाया था।
प्रहलाद भक्त ने नामी को खम्भ में बुलाया था।
नरसिंह रूप से हिरण्यकश्यप को भेजा निज धाम।।

पापी अभिमानी प्रभु के पावन नाम न ले पाते।
वे कर्म जाल में बंधे हुए जग में आते-जाते।
तुम 'पथिक' प्रेम से प्रभु को ध्याओ निश दिन प्रातः शाम।।

सत्नाम महिमा

भजन 400

ऐ मन हरि के नाम न भूलो, परमेश्वर सुख धाम न भूलो।।

अरे जागो यहाँ सुख ही दुख है किस मोह के स्वप्न में सो रहे हो।
किस सुख के लिये ऐसे चाव से, परपंच के भार को ढो रहे हो।
छुट जायेंगे ये तो यहीं तुमसे जिनमें अति आसक्त हो रहे हो।
यहाँ आत्मोद्धार का जो समय था, पथिक यों ही उसे क्यों खो रहे हो।
ऐ मन हरि के नाम न भूलो, परमेश्वर सुख धाम न भूलो।।

इस थोड़े दिवस के जीवन में ऐ 'पथिक' किसी को सताओ नहीं।
उपकार नहीं कर सकते तो निज स्वार्थ से पाप कमाओ नहीं।
धन, जन बल और विद्या बल पै अभिमान में आ इतराओ नहीं।
निज दैव से सुख-दुख हो सो हो मन से भगवान भुलाओ नहीं।
ऐ मन हरि के नाम न भूलो, परमेश्वर सुख धाम न भूलो।।

भगवान से प्रेम जो करते नहीं, वह मायिक मोह में भूलते हैं।
विषयानन्द मुग्ध उसी हिय में, नाना विधि दुख शूल हूलते हैं।
वे अश्रु और मुस्कान के बीच सदा, मध्यस्थ की भाँति ही झूलते हैं।
आश्चर्य पथिक हो सत्य विमुख, फिर भी अभिमान में फूलते हैं।
ऐ मन हरि के नाम न भूलो, परमेश्वर सुख धाम न भूलो।।

कभी भूलो नहीं अपने प्रभु को, उनके गुणगान ही गाते रहो।
हर काम धाम में, बैठे हुए चलते हुए नाम को ध्याते रहो।
आना है तुम्हें हरि प्रेमियों में, तो प्रपंच का संग हटाते रहो।
जो चाहते हो सुख शान्ति, पथिक सत्संग से प्रेम बढ़ाते रहो।
ऐ मन हरि के नाम न भूलो, परमेश्वर सुख धाम न भूलो।।

भजन 401

ऐ मेरे मन भावन श्याम, अकथनीय प्रिय पावन श्याम।।

परम सुहृद सुखकारी तुम हो, प्रियतम हृदयबिहारी तुम हो।
सबके हृदय लुभावन श्याम ।।ऐ मेरे0।।

अति कोमलचित शान्तिधाम तुम, भक्तिद मुक्तिद पूर्णकाम तुम।
संशय शोक नशावन श्याम ।।ऐ मेरे0।।

सर्वगुणाश्रय गुणातीत तुम, पतित उधारन अति पुनीत तुम।
अन्तर तिमिर मिटावन श्याम ।।ऐ मेरे0।।

जीवन के प्रभु जीवन तुम हो, 'पथिक' प्राण धन सर्वस तुम हो।
चंचल चित्त चुरावन श्याम ।।ऐ मेरे0।।

भजन 402

ओ प्रेमी प्रभु के गुण गाकर देखो।
प्रभु को स्वयं में ही आकर के देखो।

तुम जिस पर मोहित हो, अरे यह नश्वर तन है।
किसी समय छुट सकता जो दिखता धन है।।
अपने को पहिचानों यह सद्गुरु प्रवचन है।
अपने में नित्य सुलभ सत् चित आनन्द घन है।।
अन्तर में आसन जमा करके देखो।
ओ प्रेमी प्रभु के गुन गाकर के देखो।।

जग में जो मिलता है साथ नहीं रहता है।
जिससे सुख मिलता है उसको ही चहता है।।
तन-मन से तन्मय हो 'मैं' मेरा कहता है।
यही ग्रन्थि माया की जिससे दुख सहता है।।
ममता अहंता मिटा करके देखो।
ओ प्रेमी प्रभु के गुन गा करके देखो।।

यह सुख-दुःख है सपने जागो आँखें खोलो।
आत्म ज्ञान प्राप्त करो इधर-उधर मत डोलो।।
जड़ चेतन भिन्न-भिन्न एक भाव मत तोलो।
परम शान्ति चाहो तो निज में स्थिर हो लो।।
आश्रय में विश्राम पा करके देखो।
ओ प्रेमी प्रभु के गुन गा करके देखो।।

जो कुछ भी मिला तुझे साथ नहीं जायेगा।
वासना रहेगी तो लौट-लौट आयेगा।।
मन के इन भोगों में तृप्ति नहीं पायेगा।
शक्ति समय खोयेगा धोखा ही खायेगा।।
योग से प्रज्ञा जगा करके देखो।
ओ प्रेमी प्रभु के गुन गा करके देखो।।

अभिमानी को दीन होना पड़ेगा यहाँ।
कामी को बल बुद्धि खाना पड़ेगा यहाँ।
कर्मों का कठिन बोझ ढोना पड़ेगा यहाँ।
उचित नहीं तुम भी यहीं आकर के देखो।
ओ प्रेमी, प्रभु के गुन गा करके देखो।।

मैं प्रभु का प्रभु मेरे ऐसा अभिमान रहे।
मिला हुआ अपना नहीं है-यह ज्ञान रहे।
प्रभु सब में सब प्रभु में-ऐसा दृढ़ ध्यान रहे।
कण-कण में प्रभु की ही सत्ता का भान रहे।
'पथिक' यही सुरति मति बना करके देखो।

ओ प्रेमी, प्रभु के गुन गा करके देखो।।

भजन 403

जगत् के स्वामी सिरजनहार, नमः परमेश्वर परमाधार।

जिसकी कहीं न इति है अथ है, ऐसी लीला अगम अकथ है।
तुम्हीं से व्यक्त हुआ संसार नमः परमेश्वर परमाधार।

तुमको कभी न भूलूँ मन से, वाणी से कर्मों से तन से।
तुम्हीं को ध्याऊँ बारंबार, नमः परमेश्वर परमाधार।

तुम सबके परमाश्रयदाता, तुमसे जीव अभय वर पाता।
तुम्हीं अनुपम सुख के भण्डार, नमः परमेश्वर परमाधार।

मैं भी शरण तुम्हारी आया, हे जीवनधन हर लो माया।
पथिक अब तुमको रहा पुकार, नमः परमेश्वर परमाधार।

भजन 404

जीवन मे आधार हमारे राधेश्याम।

भज लो बारम्बार हमारे राधेश्याम।।
चलते फिरते रोके गाके, दुख सुख में मन को समझा के।

कहो पुकार पुकार हमारे राधेश्याम।।
जय योगेश्वर कृष्ण मुरारी, भक्त भावमय लीलाधारी।

करते भव से पार हमारे राधेश्याम।।
हृदयरमण करुणा के सागर, अनुपम अति सुन्दर नटनागर।

स्वयं प्रेम साकार हमारे राधेश्याम।।
कुछ ही दिन का यह जीवन है प्रभुध्यान ही सुखमय धन है।

पथिक मुक्तिदातार हमारे राधेश्याम ।।

भजन 405

जै जै परमेश्वरं नमामि नारायणं ।
जै जै अखिलेश्वरं नमामि नारायणं ।।

जै जै जगदीश्वरं जयति महेश्वरं।
सत्यं सुन्दरं शिवं नमामि नारायणं।।

व्यापकं अजं विभुं नित्यं केवलं शुभं।
हे अनन्त अव्ययं नमामि नारायणं।।

निर्गुणं गुणाश्रयं निष्क्रियं क्रियालयं।
निर्मलं दयामयं नमामि नारायणं।।

नित्य शुद्ध शक्तिदं भक्तिपाल भक्तिदं।
हे महान मुक्तिदं नमामि नारायणं।।

जै सुरेश श्रीपति जै उमेश शंकरं।
निष्चलं निरंजन नमामि नारायणं।।

आप्तकाम शान्तिदं सौम्य ज्ञानध्यानदं।
हे औपालु कोमलं नमामि नारायणं।।

जै श्रीराम राघवं जै गोविन्दश्री माधवं।
'पथिक' प्राणेश्वरं नमामि नारायणं।।

भजन 406

तुम शरण न आओगे कब तक।

गुरुजन जो कुछ कह जाते हैं, तुम उसे भुलाओगे कब तक।
देखना यही है इस जग में, तुम चैन मनाओगे कब तक।।

अगणित अभिमानी चले गये, माया-ममता से छले गये।
वे ले न गये कौड़ी संग में, तुम लोभ बढ़ाओगे कब तक।।

जो गया न अब वह आयेगा, जो है वह निश्चय जायेगा।
जब कोई सदा न रह सकता, तब तुम रह पाओगे कब तक।।

जिसको पाकर खोना होता, जिसको गाकर रोना होता।
उस नश्वर वैभव सुख के तुम, यह गीत सुनाओगे कब तक।।

मिलती है परम शान्ति जिससे, मिटती है दुःखद भ्रांति जिससे।
ऐ 'पथिक' उसी परमेश्वर की तुम शरण न आओगे कब तक।।

सत्नाम महिमा 407

धन्य जीवन है जो कि निर्विकार होता है।
वह घड़ी धन्य है जब सद्विचार होता है।।

अपने ही दोषों से दुःख बार-बार होता है।
छाया अज्ञान का जब अन्धकार होता है।।

क्यों उन्हें भूले हो जिनसे तुम्हें सब कुछ मिलता।
समझो प्रभु का हृदय कितना उदार होता है।।

जगत् की प्रीति में क्या रीझे हो उधर देखो।
बिना बदले में जहाँ सबका प्यार होता है।

कितनी उनकी है दया कोई चाहे देखे।
उनके गुण गान से पापी भी पार होता है।।

क्यों न तर जायें उबर जायें पतित लाखों जब।
नाम लेने से ही पापों का छार होता है।।

'पथिक' अब सावधान हो गहो उन्हीं की शरण।
जहाँ पतितों का सदा ही सुधार होता है।।

भजन 408

नाम प्रभु का सदा ही लिये जाइये।
बस लिये जाइये, बस लिये जाइये।।

प्रभु को पाने का सुगम सुन्दर सहारा नाम है।
दुःखद माया जाल से छुटने का चारा नाम है।

डूबते को यह दिखा देता किनारा नाम है।
कितने प्रिय होंगे जब उनका इतना प्यारा नाम है।
नाम में मन निछावर किये जाइये।।नाम0।।

भक्त ध्रुव प्रहलाद ने महिमा दिखाई नाम की।
सन्त नानक सूर तुलसी कीर्ति गाई नाम की।
समझ लो मीरा ने कैसी लौ लगाई नाम की।
स्वयं नामी भी न कर पाये बड़ाई नाम की।
नाम के नाते सब कुछ दिये जाइये।।नाम0।।

सोचिये अगणित अधम जन, नाम से ही तर गये।
मेरु सदृश महान् दुःख भी नाम से ही हर गये।
कठिन पाप समूह तत्क्षण नाम लेते बिखर गये।
असम्भव को भक्त सम्भव नाम लेकर कर गये।
नाम ध्वनि को सुधावत पिये जाइये।।नाम0।।

ब्रह्मज्ञानी दिव्य रस को खोज पाते नाम में।
स्वयं ही हरि प्रगट होते चले आते नाम में।
सृष्टि के सब रूप रंग भी हैं समाते नाम में।
'पथिक' थककर नित्य ही विश्राम पाते नाम में।
नाम का आश्रय ले जिये जाइये।।नाम0।।

भजन 409

परमात्मन सुखधाम मेरे अन्तर्यामी, सब विधि तुम्हें प्रणाम मेरे अन्तर्यामी।।
जीवनेश तुम हो परेश, तुम अनुपम ललित ललाम मेरे अन्तर्यामी।।
हृदय बिहारी तुम दुखहारी, प्रेमरूप निष्काम मेरे अन्तर्यामी।।
जय अखिलेश्वर जयति महेश्वर, ध्याऊँ आठोंयाम मेरे अन्तर्यामी।।
भव भय भंजन असुर निकंदन, तुम्हीं राम तुम श्याम मेरे अन्तर्यामी।।
तुम सुखराशी स्वयं प्रकाशी, हो व्यापक सब ठाम मेरे अन्तर्यामी।।
अविचल निर्भय हे करुणामय, पथिक न भूले नाम मेरे अन्तर्यामी।।

भजन 410

परमेश आनन्दधाम हो नारायणाय नमो नमः।
सर्वज्ञ पूरणकाम हो नारायणाय नमो नमः।।

ऐसे दयानिधान तुम भक्तों के जीवन प्राण तुम।
मोहन नयनाभिराम हो, नारायणाय नमो नमः।।

अद्वैत अज अनन्त तुम अव्यय श्रीमन्त कन्त तुम।
तुम राम हो तुम श्याम हो नारायणाय नमो नमः।।

सर्वस्व सत्यसार तुम श्रद्धेय विभु अपार तुम।
अनुपम सुखद ललाम हो नारायणाय नमो नमः।।

पावन परम उदार तुम प्यारे पथिक आधार तुम।
तुम सर्वमय सब ठाम हो नारायणाय नमो नमः।।

भजन 411

परमेश नमो विश्वेश नमो अखिलेश महान तुम्हीं हो।
हृदयेश रमेश महेश नमो व्यापक भगवान तुम्हीं हो।।

घनश्याम नमो श्रीराम नमो हे भक्तन हित अवतारी।
सुखधाम नमो सब ठाम नमो अनुपम मतिमान तुम्हीं हो।।

सद्रूप नमो चिद्रूप नमो आनन्द रूप अविकारी।
इस ओर नमो उस ओर नमो सर्वत्र समान तुम्हीं हो।।

हम माया में है भूल रहे मायापति शरण तुम्हारी।
उद्धार करो प्रभु पार करो हे दयानिधान तुम्हीं हो।।

तुमसे गति है तुमसे मति है तुम परम सुहृद हिताकारी।
हे नटनागर सद्‌गुण आगर सर्वत्र सुजान तुम्हीं हो।।

दिन बीत रहे इस जीवन के सुध ले लो हृदय बिहारी।
हम 'पथिक' पतित के रक्षक नित करते कल्याण तुम्हीं हो।।

भजन 412

प्रभो आनन्दघन, जय परमात्मन।।
सत्य परमात्मन्, परम प्रेममयपूरन।
प्रेमियों का भजन सत्य परमात्मन्।
सत्य परमात्मन् सबके आश्रयदाता।
कोई भी हो सरन सत्य परमात्मन्।।

सत्य परमात्मन् सुमिरत मुदमंगलमय।
लगी जिनकी लगन सत्य परमात्मन्।
सत्य परमात्मन् जितना ही जो ध्यावै।
रहे जीवन मगन सत्य परमात्मन्।।

सत्य परमात्मन् तुम हो सर्व प्रकाशक।
एक सर्वस्व धन सत्य परमात्मन्।।
सत्य परमात्मन् हर रूप में हर रंग में।
'पथिक' के मन हरन सत्य परमात्मन्।।

भजन 413

प्रेम से ध्याओ बारम्बार, नमो जगदीश्वर जगदाधार।।

दुनिया सदा आराम के सामान को चाहे।
इन्सान तो इसीलिये इन्सान को चाहे।
कोई यहाँ अपने ही यशोगान को चाहे।
सब अपने-अपने दीन और ईमान को चाहे।
कोई चहै कुरान कोई पुरान को चाहे।
है वही भाग्यवान जो भगवान को चाहे।।
प्रेम से ध्याओ बारम्बार, नमो जगदीश्वर जगदाधार।।

कोई तो यहाँ आ के जरोमाल में खुश है।
पण्डित व मूर्ख अपनी-अपनी चाल में खुश है।
होकर के कैद अपने अपने हाल में खुश है।
देखो तो सभी अपने ही स्वर ताल में खुश है।

पर भक्त तो अपने प्रभु के ध्यान को चाहे।
है वही भाग्यवान जो भगवान को चाहे।।
प्रेम से ध्याओ बारम्बार, नमो जगदीश्वर जगदाधार।।

खुशकिस्मती समझ के कोई नाम में भूले।
कोई यहाँ दिन रात अपने काम में भूले।
देखो किसी को ऐश व आराम में भूले।
आगाज में भूले कोई अन्जाम में भूले।
पर वे नहीं भूले कि जो सतज्ञान को चाहे।
है वही भाग्यवान जो भगवान को चाहे।।
प्रेम से ध्याओ बारम्बार, नमो जगदीश्वर जगदाधार।।

बुलबुल को रहा करती गुलस्तान की तलाश।
उल्लू को देखिये तो है वीरान की तलाश।
हैवान को खुद जात के हैवान की तलाश।
सबको है अपने इतमीनान की तलाश।
कोई जमीन कोई आसमान को चाहे।
है वही भाग्यवान जो भगवान को चाहे।।
प्रेम से ध्याओ बारम्बार, नमो परमेश्वर परमाधार।।

कंगाल की नजरों में है धनवान ही सब कुछ।
मोही हृदय के वास्ते सन्तान ही सब कुछ।
कमजोर समझता है कि बलवान ही सब कुछ।
आशिक को है माशूक की मुस्कान ही सब कुछ।
पर बुद्धिमान जीवन कल्याण को चाहे।
है वही भाग्यवान जो भगवान को चाहे।।
प्रेम से ध्याओ बारम्बार, नमो परमेश्वर परमाधार।।

कुछ लोग प्रेमिका के भाव प्यार में अटके।
कोई सभी प्रकार से परिवार में अटके।
अपकार में अटके कोई उपकार में अटके।
कुछ आगे बढ़ के स्वर्ग के सत्कार को चाहे।
है वही भाग्यवान जो भगवान को चाहे।।
प्रेम से ध्याओ बारम्बार, नमो परमेश्वर परमाधार।।

कोई है परेशान अपनी जान के खातिर।
कोई लड़े मरते हैं अपनी शान के खातिर।
कुछ तंत्र मंत्र कर रहे वरदान के खातिर।
रोते हैं कोई हँसते हैं अरमान के खातिर।
पर 'पथिक' तो अपने दयानिधान को चाहे।
है वही भाग्यवान जो भगवान को चाहे।।
प्रेम से ध्याओ बारम्बार, नमो परमेश्वर परमाधार।।

भजन 414

प्रेम से मेरे प्रभु नारायण कहना है।
जाही विधि राखें प्रभु ताही विधि रहना है।।

तन मन धन कुछ अपना न मान कर।
जो भी आये जाये सब प्रभु का ही जान कर।
मन की प्रतिकूलता को धैर्य से ही सहना है।।

बन्धन दुःखों की जड़ आत्म अज्ञान है।
आत्म ज्ञान होता जब स्वयं में ही ध्यान है।
ध्यानी को धन मान भोग नहीं चहना है।।

चाह के त्याग में प्रेम ही समर्थ है।
चाह की पूर्ति का लोभ ही अनर्थ है।
जीवन प्रवाह है प्रेम से ही बहना है।।

प्रेम में सेवा की त्याग की शक्ति है।
प्रेम में परम गति मिलती प्रभु भक्ति है।
प्रेम में 'पथिक' नित्य समता को गहना है।।

भजन 415

प्रेमी प्रेम, भाव से गाके ध्याओ नारायण हरिओम्।
मन की सच्ची सुरति लगा के ध्याओ नारायण हरिओम्।।

इससे दूर रहेगी माया सार्थक हो जायेगी काया।
सन्तों की संगति में जाके ध्याओ नारायण हरिओम्।।

जिससे मन सुस्थिर हो जाये प्रज्ञा में विवेक बल आये।
ऐसा साधन नियम बना के ध्याओ नारायण हरिओम्।।

जिसका कुछ भी नहीं ठिकाना, उससे क्या फिर प्रीति बढ़ाना।
इस दुनिया में हृदय बचा के ध्याओ नारायण हरिओम्।।

अपना जीवन व्यर्थ न खोना यहाँ कहीं मत मोहित होना।
सेवा में निज स्वार्थ मिटा के ध्याओ नारायण हरिओम्।।

चाहे कुछ भी आये जाये लक्ष्य न कहीं भूलने पाये।
'पथिक' शरण सद्‌गुरु की आके ध्याओ नारायण हरिओम्।।

भजन 416

बसो इन नयनन में।।
हे मनभावन भगवान बसो इन नयनन में।

हे विश्वम्भर ! परमेश एक परमाश्रय।
तुम सबके जीवन प्रान बसो इन नयनन में।।

हे सुन्दर ! हे सर्वस्व सुखों के स्वामी।
हे अनुपम दयानिधान बसो इन नयनन में।।

हे दाता! हम तो आये द्वार तुम्हारे।
दो भक्ति प्रेम का दान बसो इन नयनन में।।

हे हरि हम दीन अकिंचन मोह भ्रमित हैं।
हर लो सारा अज्ञान बसो इन नयनन में।

हे प्रेमनिधे! परमात्मन अन्तरयामी।
कर दो मेरा कल्यान बसो इन नयनन में।।

हे प्रियतम प्रभु! मैं 'पथिक' तुम्हारा ही हूँ।
दे दो निज शरणस्थान बसो इन नयनन में।।

भजन 417

श्री शंकराचार्य विरचित चर्पटमंजरी के आधार पर भावानुवाद
भज गोविन्दं भज गोविन्दम, गोविन्दं भज मूढ़मते।।

बाल बयस सब खेल गंवाई, तब तो रहा नहीं कुछ ज्ञान।
तरुणावस्था की मादकता में, केवल तरुणी का भान।

वृद्ध भये तब रात दिवस है नाना चिन्ताओं का गान।
दुर्लभ मानव तन पाकर के किया न परमेश्वर का ध्यान
भज गोविन्दं भज गोविन्दं, गोविन्दं भज मूढ़मते।।

बीती रात दिवस फिर आया, दिन बीता फिर आई रात।
सदा यही क्रम चलता रहता, नित्य शाम है नित्य प्रभात।
कभी ग्रीष्म है, कभी शिशिर है, कभी बसन्त कभी बरसात।
इसी चक्र में बद्ध जीव को, नचा रही है आशा वात।
भज गोविन्दं भज गोविन्दं, गोविन्दं भज मूढ़मते।।

केश पक गये नेत्र कान भी काम न देते मति गति भंग।
धीरे-धीरे दांत गिर गये, सभी हो गये जीरण अंग।
अस्थिपिण्ड से खाल लटकती बिगड़ गया जीवन का रंग।
तब भी तृप्त न हुई वासना, श्वासा है आशा के संग।
भज गोविन्दं भज गोविन्दं, गोविन्दं भज मूढ़मते।।

जन्म मरण के इस बन्धन से हो न सकेगा यूँ उद्धार।
जब तकि तू आसक्त स्वार्थवश, करता जग से ममता प्यार।
इस दुस्तर माया से मानव तब तेरा होगा निस्तार।
जब मायापति परमेश्वर को, सौंप चुकेगा जीवन भार।
भज गोविन्दं भज गोविन्दं, गोविन्दं भज मूढ़मते।।

जब तक तेरे तन मन धन से पूरे होते सबके काम।
तब तक तुझसे प्रेमपूर्वक लिपटा है परिवार तमाम।
जराग्रस्त होने पर एक दिन छूट जायेगा यह धन धाम।

बात न पूछेंगे फिर कोई न लेंगे तेरा नाम।
भज गोविन्दं भज गोविन्दं, गोविन्दं भज मूढ़मते।।

सलिल बिना है व्यर्थ सरोवर, धन से हीन व्यर्थ परिवार।
धर्म बिना धन धान्य व्यर्थ है, प्रेम दया बिन व्यर्थ विचार।
सद्‌गुण बिन सौन्दर्य व्यर्थ है, सेवा बिना व्यर्थ श्रृंगार।
सद्‌विवेक बिन कर्म व्यर्थ है, भक्ति ज्ञान बिन जीवन भार।
भज गोविन्दं भज गोविन्दं, गोविन्दं भज मूढ़मते।।

मूरख इतना मोहित होकर, है जिस सुन्दरता में लीन।
मांस भरे स्नायुजाल से, कसे पिण्ड के ही अधीन।
जिस विधि अपने रुचिर स्वाद में श्वान मानता सुख मतिहीन।
यही दशा है विषयी नर की, तृष्णा से रहता अतिदीन।
भज गोविन्दं भज गोविन्दं, गोविन्दं भज मूढ़मते।।

अपने ही स्वारथ के भूखे, कर न सके कुछ पर उपकार।
अपनी क्षुधा पूर्ति के कारन, झांके किनके किनके द्वार।
मूड़ मुड़ाये, जटा रखाये, भेष बनाये विविध प्रकार।
तब तक शांति नहीं जीवन में, जब तक मिटे न विषय विकार।
भज गोविन्दं भज गोविन्दं, गोविन्दं भज मूढ़मते।।

त्यागी बन के बन बन डोले, कर तल भिक्षा तरु तर वास।
किन्तु जहाँ लों आशा तृष्णा, तब तक पाता रहता त्रास।
क्यों न देखते निज अन्तर में, परमेश्वर का प्रेम प्रकाश।
जिसकी कृपा-किरण से होता है, अज्ञान तिमिर का नाश।
भज गोविन्दं भज गोविन्दं, गोविन्दं भज मूढ़मते।।

अब न भूल तू इस माया में करता रह भगवद् गुणगान।
निज धन से दीनों दुखियों को, स्वार्थ छोड़कर दे कुछ दान।
सन्त संग से पावन हो जा, धारण कर गीता का ज्ञान।
पुनि विवेक समता के द्वारा परम तत्व को ले पहचान।
भज गोविन्दं भज गोविन्दं, गोविन्दं भज मूढ़मते।।

जिसने श्रद्धा भक्ति का कुछ, थोड़ा भी पाया आनन्द।
गंगा गीता ज्ञानाश्रय से, कब तक रह सकती मति मन्द।
मुक्त हो चला वह बंधन से, छूट गये सारे दुख द्वन्द्व।
अनुरागी जो हुआ प्रभु का, पड़ न सकेंगे फिर यम-फन्द।
भज गोविन्दं भज गोविन्दं, गोविन्दं भज मूढ़मते।।

यही देख! क्या रूप है तेरा, कौन पिता है माता कौन।
कब से कितने दिन के संगी, यह पत्नी सुत भ्राता कौन।
यह संसार स्वप्नवत लीला, तेरा इससे नाता कौन।
जाग जाग अब जाग, 'पथिक' गोविन्दं भज मूढ़मते।।

भजन 418

भज लो श्रीभगवान जगत् में, कुछ दिन के मेहमान।

रहे न रावण सम अभिमानी हिरणकश्यप सम वरदानी।
बल वैभव की खान जगत् में, कुछ दिन के मेहमान।।

आये अर्जुन सम धनुर्धारी, धर्मराज सम धर्माचारी।
दानी कर्ण समान जगत् में, कुछ दिन के मेहमान।।

युग-युग की सब बात पुरानी, कलियुग की बहुत कहानी।
कवि कर गये बखान जगत् में कुछ दिन के मेहमान।।

कहाँ विक्रमादित्य यहाँ है, कालीदास अरू भोज कहाँ है।
वह कारूं लुकमान जगत् में, कुछ दिन के मेहमान।।

सुनी सिकन्दर दारा की औति, सुनी बीरबल की सुन्दर मति।
अकबर से सुल्तान जगत् में, कुछ दिन के मेहमान।।

अब न कहेंगे आँखों देखी, समझ रहे हैं सबकी शेखी।
कितने दिन की शान जगत् में, कुछ दिन के मेहमान।।

दुःखी जनों का दुख न रहेगा, सुखी जनों का सुख न रहेगा।
क्यों भूला नादान जगत् में, कुछ दिन के मेहमान।।

जगदीश्वर का नाम रहेगा, वही परमसुख धाम रहेगा।
यही खोज सद्ज्ञान जगत् में, कुछ दिन के मेहमान।।

वह परमेश्वर घटघट वासी, परमानन्दरूप अविनाशी।
'पथिक' न भूलो ध्यान जगत् में, कुछ दिन के मेहमान।।

भजन 419

भजन बिन जीवन महादुःख पावत।।
अपने में ही अपने प्रभु की, जब लौं शरण न आवत।

जन्म मरण के प्रकृति-चक्र में जग वासना नचावत।
सुख के पीछे ही दुख भोगत पुनि सुख को ललचावत।।

कबहूँ जल के जन्तु बनत, जल के बिन प्राण गवाँवत।
कबहूँ उड़त भ्रमर पतंग बिन अग्नि में अंग जरावत।।

कबहूँ कूकर शूकर तनधरि सड़े मांस को खावत।
कबहूँ काक गीध बक बनकर गहरी चोंच चलावत।।

कबहूँ बन्दर रीछ रूप में अपने अंग बंधावत।
कबहूँ ऊँट दर दर डोलत बोझा पीठ लदावत।।

बकरा मैं मैं करि अकड़न सहसा सीस कटावत।
कबहूँ भेड़ बनि औधे दौड़त तन के बाल मुड़ावत।।

कबहूँ गदहा बनि के रेंकत दोनों पैर कसावत।
धोबी के घर लादी लादत गिरत उठत पहुँचावत।।

कबहूँ भैंसा बनि ठेला में जुति कै मुँह फैलावत।
तपत धू में बोझा खींचत हाँफत फैन गिरावत।।

कबहूँ बैल बनत तेली के कोल्हू बांधि घुमावत।
कबहूँ जोतत हल किसान के जब लौं ऋण न चुकावत।।

प्रभु करुणा करि भ्रमित जीव को नर देही में लावत।
जिस साधन से मुक्ति मिलत है गुरु द्वारा समझावत।।

जब मानव सबसे विरक्त बन प्रभु में चित्त लगावत।
'पथिक' परम गति प्राप्त करत नित परमानन्द मनावत।।

भजन 420

मन मोहन अपनी माया में क्यों हमें भुलाते हो।
मेरे इस मूरख मन की पूरी करते जाते हो।।

तुमसे मैंने सब कुछ पाया पर तुम न मिले अब तक।
मिलते भी कैसे, उर में सच्ची चाह नहीं जब तक।
तुम तो सच्चे प्रेमी को ही प्रभु दरश दिखाते हो।।

हे नाथ, बता दो हम भी ऐसा प्रेम कहाँ पायें।
तुमसे ही मांग रहे हैं बोलो और कहाँ जायें।
हम योग्य नहीं हैं इसीलिये तो देर लगाते हो।।

हे दानी, वह बल हो जिससे हम हो जायें त्यागी।
अब देख सकें हम प्रियतम तुमको होकर अनुरागी।
सुनता हूँ एकाकी होने पर ही मिल पाते हो।।

अज्ञान-तिमिर छाया है, तुमको पहिचानें कैसे।
यह अहंकार बाधक है तब तुमको जानें कैसे।
हम दीन 'पथिक' के दोषों को अब क्यों न मिटाते हो।।

भजन 421

मन लेते रहो जिस तरह भी हो पावन प्रभु के नाम।
कह लो नारायण वासुदेव कुछ क्षण ही या अविराम।।

अच्युत अनन्त गोविन्द जपो सब रोग नष्ट होंगे।
पुरुषोत्तम विष्णु जनार्दन जप लो दूर कष्ट होंगे।
हरिनाम भूल जायें समझो उस समय विधाता बाम।।

इसलिये नाम लो प्रभु का वह सर्वस्व तुम्हारा है।
जो कुछ भी मिला तुम्हें अब तक प्रभु का ही सारा है।
प्रभु क्षण भी दूर नहीं होता संग रहता आठों याम।।

इसलिये नाम लो प्रभु का वह सब कुछ का दाता है।
जो लेता कभी हिसाब नहीं देता ही जाता है।
प्रार्थी नाम ले ले कर अपने सभी बनाते काम।।

इसलिये नाम लो प्रभु अन्तर्यामी अविनाशी है।
उनसे कुछ भी है छिपा नहीं सब घट घट वासी है।
जब दिव्य दृष्टि खुल जाती दिखते जगमय प्रभु सुख धाम।।

नाम की महा महिमा युग युग के संत सुनाते हैं।
अब भी दीनों दुखियों से गुरुजन नाम जपाते हैं।
हम 'पथिक' नाम का आश्रय लेकर पाते हैं विश्राम।।

भजन 422

मानव प्रभु गुण गाते न क्यों तुम।
सत की शरण में आते न क्यों तुम।।

जिनको तुम अपना समझे हो सदा काम यह आ न सकेंगे।
गुरु विवेक बिन भव बन्धन से कोई तुम्हें छुटा न सकेंगे।।

मन का मोह मिटाते न क्यों तुम।
मानव प्रभु गुण गाते न क्यों तुम।।

जैसा भी चिन्तन होता है चित्त उसीमय हो जाता है।
जिसकी चाह प्रबल होती है प्राणी उसको ही पाता है।।

सत्य से प्रेम बढ़ाते न क्यों तुम।
मानव प्रभु गुण गाते न क्यों तुम।।

जिसकी सत्ता में सब प्राणी इच्छित सुख पाते रहते हैं।
जिसकी याद दिलाने के हित अगणित दुख आते रहते हैं।।

दुख से लाभ उठाते न क्यों तुम।
मानव प्रभु गुण गाते न क्यों तुम।।

काम क्रोध मद अहंकार से जिसका हृदय नहीं जलता है।
भोगी बन कर कौन जगत् में अपने हाथ नहीं मलता है।।

'पथिक' त्याग अपनाते न क्यों तुम।
मानव प्रभु गुण गाते न क्यों तुम।।

भजन 423

मानव मोह नींद से जागो।।

सब कुछ छुट जाने के पहले, दुःखद मृत्यु आने के पहले।
निज को बन्धन मुक्त बना लो गुरुजन के संग लागो।।

जग में कितने ही सुख देखे, सुख के पीछे ही दुःख देखे।
अब यदि शान्ति चाहते हो तो सब दोषों को त्यागो।।

तन धन को अपना मत जानो, परमेश्वर को अपना मानो।
चाहे कुछ आये या जाये, तुम न कभी कुछ मांगो।।

लोभ मान माया को तज कर परमप्रेममय प्रभु को भज कर।
'पथिक' तुम्हें योगी होना है भोग भूमि से भागो।।

भजन 424

यदि चाहो निस्तार भजो नारायण नाम।
सब समेट कर प्यार भजो नारायण नाम।।

नारायण ही संकटहारी, प्राणिमात्र के हृदय बिहारी।
आश्रय सभी प्रकार भजो नारायण नाम।।

परमसुखद करुणा के सागर, ज्ञान स्वरूप सकल गुणआगर।
दाता परम उदार भजो नारायण नाम।।

चलते फिरते रोके गाके दुःख में सुख में मन समझा के।
कभी पुकार पुकार भजो नारायण नाम।।

वह चिन्मय है इस जड़तन में, वही अचल है चंचल मन में।
'पथिक' स्वभाव सुधार भजो नारायण नाम।।

भजन 425

राम बिन कहीं नहीं विश्राम, यह माया की छाया झूठी।
झूठा विभव तमाम, राम बिन कहीं नहीं विश्राम।।

मात पिता पत्नी सुत भ्राता, यह सब देह रहे तक नाता।
सदा न आवै काम, राम बिन कहीं नहीं विश्राम।।

देखे सुने बड़े अभिमानी, धनपति जनपति राजारानी।
नश्वर है सब नाम, राम बिन कहीं नहीं विश्राम।।

जो निज में सच्चिदानन्दघन, जिनके आश्रित अहं बुद्धि मन।
उसे भजो निशियाम, राम बिन कहीं नहीं विश्राम।।

परम प्रेममय नित्य निरन्जन, अन्तर्यामी भव भय भंजन।
'पथिक' आत्माराम, राम बिन कहीं नहीं विश्राम।।

भजन 426

वह जीवन मंगलमय है।

जो संयम सत् व्रतधारी सतसंगी पर उपकारी।
जिसको है शुचिता प्यारी अति सात्विक सरल हृदय है।।

घर में होवे या वन में, हो स्वतन्त्र या बन्धन में।
भगवान बसे जब मन में फिर जग में किसका भय है।।

जो सत्य ध्यान में जागे विषयों को विषवत् त्यागे।
माया ममता से भागे, उसकी सब कहीं विजय है।

निशिदिन गुणगान प्रभु का, हर रंग में ज्ञान प्रभु का।
चहुँदिशि है ध्यान प्रभु का, जब 'पथिक' प्रभु में लय है।।

भजन 427

विश्वानाथय परमात्मने ते मनः।
शान्तिमूलाय विश्वात्मने ते नमः।।

कुछ भी दुनियाँ के करूँ काम यही कहते हुये।
मिटे दुर्वासना तमाम यही कहते हुये।
बीते दिन-रात सुबह-शाम यही कहते हुये।
जिधर देखूँ करूँ प्रणाम यही कहते हुये।।

विश्वानाथय परमात्मने ते मनः।
शान्तिमूलाय विश्वात्मने ते नमः।।

हर एक नाम में हर रूप में हो ध्यान यही।
मिटा देता है जो अज्ञान, है वो ज्ञान यही।
यही पूजा स्वधर्म और व्रत विधान यही।
मन से वाणी से सदा होता रहे गान यही।।

विश्वानाथय परमात्मने ते मनः।
शान्तिमूलाय विश्वात्मने ते नमः।।

यही मेरा सदा आधार इसी में आनन्द।
भूल जायें सभी संसार इसी में आनन्द।
रहूँ इस पार या उस पार इसी में आनन्द।
रहे यह ध्यान लगातार इसी में आनन्द।।

विश्वानाथय परमात्मने ते मनः।
शान्तिमूलाय विश्वात्मने ते नमः।।

कहीं तो रामरूप में तुम्हीं परमेश्वर हो।
किसी को कृष्णरूप में तुम्हीं जगदीश्वर हो।
तुम्हीं सर्वेश हो रमेश हो महेश्वर हो।
सभी भावों में तुम्हीं 'पथिक' जीवनेश्वर हो।।

विश्वानाथय परमात्मने ते मनः।
शान्तिमूलाय विश्वात्मने ते नमः।।

भजन 428

सदा जो सुसंगति में आते रहेंगे, विवेकी स्वयं को बनाते रहेंगे।
मिलेगी नहीं शान्ति उनको कहीं भी, जो परमात्मा को भुलाते रहेंगे।

बनेंगे कभी मुक्त जीवन में वे ही, जो चाहों को अपनी घटाते रहेंगे।
सुखी होंगे जो किसी को दुःख देकर, वही अन्त में दुःख उठाते रहेंगे।।

उन्हें ही वह सुख सिन्धु स्वामी मिलेंगे, जो दुःखियों को सुख पहुँचाते रहेंगे।
उन्हीं की बनी और बनती रहेंगी, जो बिगड़ी किसी की, बनाते रहेंगे।

जो जितना अधिक दान कर लेंगे जग में, वह पुण्यों की पूँजी बढ़ाते रहेंगे।
न देंगे किसी को जो शुभ और सुन्दर, कभी बैठे माखी उड़ाते रहेंगे।

जो कुछ दीखता है रहेगा न सब दिन, कहाँ तक यहाँ मन फंसाते रहेंगे।
'पथिक' अपने में अपने प्रियतम को पाकर, महोत्सव निरन्तर मनाते रहेंगे।।

भजन 429

सदा सत्य को ही बिलोते रहो तुम।
हृदय को विकारों से धोते रहो तुम।।

बड़े से बड़ा अब यही काम करना।
चपल मन को स्वाधीन रख कर विचरना।
दुःखों से न डरना अटल धैर्य धरना।
कहीं भी नहीं पाप पथ में उतरना।
परम पुण्य के बीज बोते रहो तुम।।

कहीं तुच्छ अभिमान आने न पाये।
असत् दृश्य सत् से डिगाने न पाये।
ये सुख दुःख मन को भुलाने न पाये।
समय-शक्ति कुछ व्यर्थ जाने न पाये।
बहुत खो चुके अब न खोते रहो तुम।।

उठो शीध्र ममता से मुँह मोड़ करके।
बढ़ो कामना जाल को तोड़ करके।
जो कुछ मन से पकड़ा उसे छोड़ कर के।
जियो एक हरि से लगन जोड़ कर के।
प्रलोभन से उपराम होते रहो तुम।।

मिले मुक्ति जिससे यही ज्ञान उत्तम।
बढ़े दैवी सम्पत्ति वही दान उत्तम।
मिले प्रेम धारा वह गुण गान उत्तम।
मिले नित्य प्रियतम वही ध्यान उत्तम।
'पथिक' स्वयं में शान्त होते रहो तुम।।

भजन 430

साथी आना है तो आ ले।।

देख जगत् का ले न सहारा, खुद भूला है जगत् विचारा।
वह क्या देगा तू क्या लेगा, उससे नजर हटा ले ।।साथी0।।

कोई अपने सुख में फूला, कोई अपने दुख में भूला।
सुख भी झूठा, दुःख भी झूठा, अपना मन समझा ले ।।साथी0।।

लम्बी मंजिल हिम्मत भर ले, अपने को अपने वश कर ले।
राह कठिन है, थोड़ा दिन है, जल्दी कदम बढ़ा ले ।।साथी0।।

जीवन के स्वर-ताल मिला ले, इसमें प्रेम गीत कुछ गा ले।
'पथिक' प्रगति से, निश्चल मति से, निज प्रियतम को पा ले ।।साथी0।।

भजन 431

सोचो जिससे सब कुछ मिलता, भगवान उसे ही कहते हैं।
जिसमें सब, जो सब में परिपूर्ण, महान उसे ही कहते हैं।।

दोष हों जिसे दीखते न हों पशुवत् मानव आऔति में।
जो मन में दोष न रहने दे, विद्वान उसे ही कहते हैं।।

निबलों के काम आ सके जो, जग में सच्चा बलवान वही।
जब धन की चाह न रह जाये, धनवान उसे ही कहते हैं।।

कामना पूर्ति का लोभी प्राणी, कामी क्रोधी बन जाता।
निष्काम बना दे जो कि, प्रेममय ध्यान उसे ही कहते हैं।।

जिससे कि जान ले अपने को, इस जग को, जगदीश्वर को भी।
जब 'पथिक' मुक्त हो सके, ज्ञान विज्ञान उसे ही कहते हैं।।

भजन 432

शुभ अवसर है तो यह है, जो चाहो लाभ उठाओ।
यह व्यर्थ न जाने पाये, निज को निर्दोष बनाओ।।

सत्संगति से गति मिलती, हितकर पुनीत मति मिलती।
सद्‌गुरु विवेक मिल जाता, उसको न कहीं ठुकराओ।।

दुख से न डरो जीवन में, प्रभु का आश्रय धर मन में।
जो कर न सके थे अब तक, वह भी करके दिखलाओ।।

जग के इन संयोगों में, तुम रमो न प्रिय भोगों में।
तज कर वियोग का भय अब, नित योग गीत तुम गाओ।।

अपने स्वरूप को जानो, तन धन अपना मत मानो।
मोही बन कर आये थे, प्रेमी बन कर ही जाओ।।

इच्छाओं के त्यागी बन, प्रभु के ही अनुरागी बन।
ऐ 'पथिक' कहीं भी रहकर, तुम परमानन्द मनाओ।।

भजन 433

शुभ चाहे तो प्रभु गुन गाय ले।
निज मन का तू मोह मिटाय ले।।

नाम प्रभु के अनेक, पर हैं वे तो एक।
ऐसा उर में विवेक बसाय ले।।

करो दोषों का त्याग, भरो सत्यानुराग।
यहाँ तृष्णा की आग बुझाय ले।।

करो पर उपकार सभी जीवों से प्यार।
अपना हृदय उदार बनाय ले।।

करो उसका ही संग, जिससे निर्मल हो अंग।
प्रेम-भक्ति का रंग चढ़ाय ले।।

तुम्हें ऐसा हो ज्ञान, कहीं भूले न ध्यान।
अपना देहाभिमान हटाय ले।।

जग का सब धन धाम सदा आता न काम।
'पथिक' हो के उपराम सुख पाय ले।।

भजन 434

हरे राम श्रीकृष्ण श्याम की, पावन वाणी बोलो।
क्या करना है क्या करते हो, सोचो आखें खोलो।।

जीवन में प्रेमामृत भर लो, नहीं द्वेष विष घोलो।
देखो अब निजस्वार्थ छोड़ कर, तुम परमार्थ टटोलो।।

सत्य असत् को लोभ मोहवश, एक भाव मत तोलो।
अब तो हरि के प्रेम रंग में, अपना हृदय भिगोलो।।

जो कुछ बने सुऔत सरिता में, निज पापों को धोलो।
मृत्यु निशा आने वाली है, अब इत उत मत डोलो।।

'पथिक' तुम्हें घर चलना हो तो, सद्गुरु के संग हो लो।
हरे राम श्रीऔष्ण श्याम की, पावन वाणी बोलो।

भजन 435

हे अच्युत अविचल हे भगवान, परमेश परात्पर आनन्दघन।
हे केवल विभु अज-विश्वभरन, हे नित्य निरंजन शान्तिसदन।।

विश्वेश-रमेश-महेश्वर हे, करुणेश सुहृद हे प्रेमरमण।
हे अविगत शुचितम जगवन्दन, हे दानी कलिमल क्लेशहरन।।

हे शक्तिद भक्तिद मुक्तिद हे, अपना लो मेरा यह तन मन।
प्राणेश प्रभो हे जगजीवन, सब छोड़ करें तव ध्यान भजन।।

हे सत्य महान सुज्ञाननिधे, अभिलाष यही कब हों दर्शन।
हे कोमल अनुपम मनमोहन, तव रूपसुधा के तृषित नयन।।

हे पावन प्रेरक हे प्रियतम, शरणागत पालक चरन शरन।
हे देव दयामय दैत्यदलन, स्वीकृत हो 'पथिक' हृदय अरपन।।

हे करुणामय करतार तुम्हीं, अक्षय सुख के भण्डार तुम्हीं।
अज नित्य शुद्ध ओंकार तुम्हीं, अद्वैत अनन्त अपार तुम्हीं।।

हो निराकार साकार तुम्हीं, प्रभु गुप्त प्रकट सतसार तुम्हीं।
हे सुन्दर प्रेमासागर तुम्हीं, जग के हो मूलाधार तुम्हीं।।

हो पालक परम उदार तुम्हीं, भवनिधि से खेवनहार तुम्हीं।
सुनते हो करुण पुकार तुम्हीं, सर्वेश्वर सर्वाधार तुम्हीं।।

इस पार तुम्हीं उस पार तुम्हीं, करते सब विधि उद्धार तुम्हीं।
सुधि लेते सभी प्रकार तुम्हीं, हो 'पथिक' जीवनाधार तुम्हीं।।

भजन 436

हे करुणामय भगवान बसो चंचल मन में।
हे सर्वाधार महान बसो चंचल मन में।।

हे विश्वम्भर ! परमेश एक परमाश्रय।
तुम सबके जीवन प्रान बसो चंचल मन में।।

हे सुन्दर ! हे सर्वस्व सुखों के स्वामी।
हे अनुपम दयानिधान बसो चंचल मन में।।

हे दाता ! हम तो आये द्वार तुम्हारे।
दो भक्ति प्रेम का दान बसो चंचल मन में।।

हे हरि ! हम दीन अकिंचन मोह भ्रमित हैं।
हर लो सारा अज्ञान बसो चंचल मन में।।

हे प्रेम निधे ! परमात्मन अन्तर्यामी।
कर दो मेरा कल्याण बसो चंचल मन में।।

हे प्रियतम प्रभु ! मैं पथिक तुम्हारा ही हूँ।
दे दो निज शरणस्थान बसो चंचल मन में।।

भजन 437

हे करुणामय हे जीवन धन ।।

प्रेमनिधे अनुपम महान तुम, पूर्ण समर्थ दयानिधान तुम।
तुममें ही सर्वस्व समर्पन ।।

तुम जैसे हो कहे न जाते, किसी तरह से गहे न जाते।
हो जाये तुम में तन्मय मन ।।

कहीं तुम्हारा ध्यान न भूलूँ, तुम अनंत यह ज्ञान न भूलूँ।
तुम सब विधि सुन्दर आनन्द घन ।।

तुम अपने प्रियतम अपने में, हो जागृति सुषुप्ति सपने में।
हम हैं 'पथिक' तुम्हारे ही जन।।

भजन 438

हे केशव ! हे औष्ण मुरारी ! हे प्रभु पूरण काम।
मोर मुकुट पीताम्बरधारी, कुंजबिहारी श्याम।।

हे! त्रैलोक्यनाथ नटनागर, हे! कोमलचित करुणासागर।
सौम्य सुजान सरलगुणागार, हे! परमाश्रय धाम।।

हे अनन्त ! अविचल अविनाशी, हे व्यापक ! हे हृदय निवासी।
अकथ अलौकिक आनन्दराशी, प्रेमनिधे अभिराम।।

हे! श्रद्धेय विभूति भुवन के, हे! प्रियतम प्राणों के मन के।
तुम ही हो सरबस जीवन के, ध्याऊँ आठो याम।।

हे स्वामी ! मेरे मन भावन, हे योगेश्वर! शोक नशावन।
'पथिक' पतित को कर लो पावन, अधम उधारन नाम।।

भजन 439

हे कृष्ण केशव हे पूर्णकाम, कितने तुम्हारे सुमधुर हैं नाम।।

माधव मदन मोहन हे मुरारी, गोविन्द गोपाल हे गिरधारी।
हे गोपियों के नयनाभिराम।।

हे राधिका के चितचोर स्वामी, हे सर्वेश्वर अन्तर्यामी।
हे सर्वमय व्यापक सब ठाम।।

हे रुक्मिणीकान्त हे असुरारी, हे भक्तवत्सल कल्याणकारी।
हे मंगलमय लीला ललाम।।

हे अविनाशी शंकर-वन्दित, देव तुम्हारा प्रेम अखण्डित।
भूलूँ न तुमको मैं आठों याम।।

कोई तुम्हें जान पाये न पाये, कोई शरण में आये न आये।
मिलता सभी को तुममें विराम।।

तुमने न जाने कितनों को तारा, सुन ली उसी की जिसने पुकारा।
तुम्हीं 'पथिक' के आनन्दधाम।।

भजन 440

हे केशव हे माधव, हे मनमोहन गिरधारी।
हे प्रियतम हे परमेश्वर, हे अच्युत अविकारी।।

हो समर्थ दानी तुम, पूर्णपरम ज्ञानी तुम।
हो अगम अमानी तुम, चक्रसुदर्शन धारी।।

अधमोद्धारक हो तुम, दोष-निवारक हो तुम।
विघ्न-विदारक हो तुम, दीनन के दुःखहारी।।

निर्बल के बल हो तुम, सुन्दर निर्मल हो तुम।
रहते अविचल हो तुम, सबके अति हितकारी।।

दिव्य शक्तिधर हो तुम, अनुपम अक्षर हो तुम।
पूर्ण परात्पर हो तुम, भक्तन हित अवतारी।।

हृदय-निवासी हो तुम, परम प्रकाशी हो तुम।
अज अविनाशी हो तुम, परम सुहृद उपकारी।।

चिदानन्दघन हो तुम, शान्ति-निकेतन हो तुम।
'पथिक' प्राणधन हो तुम निज जन के अधिकारी।।

भजन 441

हे जीवनेश तुमको आसान नहीं पाना।
आसान भी इतने हो बस पर्दा ही हटाना।।

यह परदा भी जो कुछ है अपना ही बनाया है।
अपने ही मन से मैंने जब दूर तुम्हें माना।।

मुझे कौन जानता था तुम्हें मानने से पहले।
तुम्हें अपना माना जबसे अब जानता जमाना।।

सब रूप बदलते हैं यह मन भी बदलता है।
पर तुम नहीं बदलते आना न कहीं जाना।।

सब खोज ही गलत है एक जानना काफी है।
जिसने भी जाना तुमको अपने में ही पहचाना।।

यह 'पथिक' चलते-चलते इस दर पे आ गया है।
यह द्वार आखिरी है, है आखिरी ठिकाना।।

भजन 442

गणपति पति राखहु अब मोरी।।

बीत चुके जीवन दिन कितने रही आयु अब थोरी।
अपने ही संग आप भूलि पुनि करत रहत नित चोरी।।

अस कुछ करहु नाथ सब भ्रम तजि हरि संग नाता जोरी।
करि दृढ़ मति अति निरति सुरति में लगी रहै मन डोरी।।

पथिक पतित को पावन करिये बड़ी आश है तोरी।।

भजन 443

नाम महिमा

गावैं प्रेम स्वरों में निशि दिन केवल नारायण हरि ओम्।
पावैं जीवनेश जीवन में केवल नारायण हरि ओम्।।

मन की मिटै अविद्या सारी
जो अति दुःखद आवरण कारी।
दरसै अमर शान्ति दुख हारी
केवल नारायण हरि ओम्।।

कल्मष कठिन शीघ्र कट जावैं
सत्वर परम शान्ति पद पावैं।
बस सत् चिदानन्द दरशावैं
केवल नारायण हरि ओम्।।

भगवन अब यह जीवन मेरा
होवे क्रीड़ाकानन तेरा।
प्रगटै अन्तर दिव्य उजेरा
केवल नारायण हरि ओम्।।

लय हो पथिक प्रेम जीवन में
भूलैं नाथ न कोई छिन में।
विकसित शान्ति विराजे मन में
केवल नारायण हरि ओम्।।

भजन 444

नाम महिमा

ओम सत्य निर्विकार-एक ओम् ओम् ओम्।।

निरवयव अलख अनन्त, व्यापक चहुंदिशिगन्त।
निष्प्रपंच निराकार, एक ओम् ओम् ओम्।।

सत-चिद आनन्द रूप, अविगत महिमा अनूप।
जग जीवन प्राणाधार, एक ओम् ओम् ओम्।।

अविनाशी अज अछेद्य निष्क्रिय निश्चल अभेद्य।
अकथनीय सत्यसार, एक ओम् ओम् ओम्।।

निर्भय निर्मल अखण्ड, ज्योति मूल मार्तण्ड।
पथिक सर्व ओंकार, एक ओम् ओम् ओम्।।

भजन 445

नाम महिमा

ओम् तत्सत प्राणधार।।

ब्रह्मा शिव सुरपति रमेश में।
प्रगटित उडुगन शशि दिनेश में।
सुललित शुचि सौन्दर्य वेश में।
जगके सिरजन हार।।

चपल मन्द द्रुतगति समीर में।
रौद्र अनल द्युति शान्त नीर में।
अति चंचल चपला अधीर में।
महिमा अपरम्पार।।

विकसित कोमल शुभ्र सुमन में।
निश्तब्धता निर्जन वन में।
नील क्षितिज के शून्य गगन में।
एक अलख कर्तार।।

भक्तों के एकान्त गान में।
प्रचुर प्रेम के सुदृढ़ ध्यान में।
पथिक परम आनन्द ज्ञान में।
केवल सत ओंकार।।

ओम् तत्सत प्राणधार।।

भजन 446

हे देव! परम प्रभु! हे भगवन!
हे विभु! हे सत! आनन्द धाम।।
हे करुणानिधि! हे भक्तपाल!
प्रेमावतार नयनाभिराम।।

हे केशव! हे केवल! अनन्त!
हे दिव्यरूप ! हे आप्त काम
हे दीनबन्धु! हे दयासिन्धु!
हे अधमोद्धारक! चपल श्याम।।

हा कब ये मेरे दीन नयन,
देखें प्रभु! पावन पद ललाम!
कब गिरा करेंगे प्रेम अश्रु!
वाणी से जपते हुए नाम।।

हे जीवनधन! हे मायापति!
भूलूँ न तुम्हें, अब अष्ट याम।
हे परम देव! पथिक के प्रभो।
अब दे देना इसको विराम।।

भजन 447

हे अच्युत! अविचल हे भगवन!
परमेश परात्पर आनँदघन।
हे केवल! विभु अज विश्वभरन
हे नित्य! निरंजन शान्तिसदन।।

विश्वेश-रमेश-महेश्वर हे
करुणेश सुहृद हे प्रेमरमण!
हे अविगत-शुचितम-जगवन्दन,
हे दानी कलिमल क्लेशहरन।।

हे शक्तिद भक्तिद मुक्तिद हे
अपना लो मेरा यह तन मन।
प्राणेश प्रभो! हे जगजीवन!
सब छोड़ करैं तव ध्यान भजन।।

हे सत्य महान सुज्ञाननिधे!
अभिलाश यही कब हों दर्शन।
हे कोमल! अनुपम मनमोहन
तव रूपसुधा के प्यासे नयन।।

हे पावन! प्रेरक हे प्रियतम!
शरणागतपालक चरन शरन।
हे देव! दयामय दैत्यदलन
स्वीऔत हो पथिक हृदय अरपन।।

भजन 448

जै जै परमेश्वरं नमामि नारायणं।
जै जै अखिलेश्वरं नमामि नारायणं।।

जै जै जगदीश्वरं जयति महेश्वरं।
सत्य सुन्दरं शिवं नमामि नारायणं।।

व्यापकं अजं विभुं नित्य केवलं शुभं।
हे अनन्त अव्ययं नमामि नारायणं।।

निर्गुणं गुणाश्रयं निष्क्रियं क्रियालयं।
निर्मलं दयामयं नमामि नारायणं।।

नित्यं शुद्ध शक्तिदं भक्तपाल भक्तिदं।
हे महान मुक्तिदं नमामि नारायणं।।

जै सुरेश श्रीपतिं जै उमेश शंकरं।
निश्चलं निरंजनं नमामि नारायणं।।

आप्तकाम शान्तिदं सौम्य ज्ञानध्यानदं।
हे कृपालु कोमलं नमामि नारायणं।।

जै श्रीराम राघवं जै गोविन्द माधवं।
पथिक प्राणेश्वरं नमामि नारायणं।।

भजन 449

नव द्वार देहरूपी रचित किले के बीच,
जीव बन्दी बन बैठा निज अविचार से।।

सुख स्वतंत्रता को वो इन्द्रिय झरोखों द्वारा,
झांकता है विषयों में विविध प्रकार से।।

बुद्धि है भ्रमित जकड़े हुए हैं मायापाश,
मोह मुग्ध मन है अविद्या अन्धकार से।।

ब्रह्मविद ब्राह्मण ही ऐसे हैं पथिक जो कि,
काटते बन्धन ज्ञानरूपी खड्गधार से।।

भजन 450

कितने युगों से तुम्हें होश ही है आता नहीं,
अब भी न क्या विकारी मोहनींद टूटैगी।।

ऐसी निरभयता से आत्मिक सम्पत्ति शक्ति,
दानवों की दुनिया से कब तक लूटैगी।।

अब भी जो भला चाहो सत्संग प्रेमी बनो,
जादू सी इसी से शत्रुओं में फूट फूटैगी।।

ऐ पथिक ब्रह्मविद् ब्राह्मणों की ही शरण,
जाने से अविद्या की ये मोह ग्रन्थि छूटैगी।।

भजन 451

वे धन्य हैं श्रीमान जो भगवान की सुनते हैं।
वे बड़े भाग्यवान हैं, जो भगवान की सुनते हैं।।

भगवान की न सुनकर जो ज्ञानी बन रहे हैं।
जो त्यागी तपस्वी योगी ध्यानी बन रहे हैं।।
जो भक्त विरागी धर्मी दानी बन रहे हैं।
जो हैं नही, वह होने के अभिमानी बन रहे हैं।।
उनको ही होता ज्ञान जो भगवान की सुनते हैं।।वे धन्य0।।

जब तक कि इन्द्रियों से विषयों का भोग होता।
भोगी के तन में मन में अनचाहा रोग होता।।
संयोग जिसका होता उसका वियोग होता ।
जो नित्य निरन्तर है उसका ही योग होता।।
उनको ही सुलभ ध्यान जो भगवान की सुनते हैं।।वे धन्य0।।

यह जीव जन्मते ही परिवार की सुनता है।
कुछ प्यार की सुनता है तिरस्कार की सुनता है।
प्रभिगानी बनके अपने ही प्रधिकार की सुनता है।
भगवान से विमुख हो संसार की सुनता है।।
सन्मुख वही विद्वान जो भगवान की सुनते है।। वे धन्य0।।

भगवान की जो सुनते वह पाप से बच जाते।
निर्द्वन्द रहते जग में सन्ताप से बच जाते।
वह व्यर्थ के प्रलाप से विलाप से बच जाते।
वह प्रेम से भरे हुए अभिशाप से बच जाते।।
वह पथिक सावधान जो भगवान की सुनते है।। वे धन्य0।।

आरती 452

जय जगदीश्वर जय परमेश्वर भवभयहारी।
जय अखिलेश्वर जयति महेश्वर बहु वपुधारी।।

जय रमेश भुवनेश प्रभो करुणा के सागर।
जय गुण आगर जय नटनागर जय असुरारी।।

हे निर्गुण हे अकथ अनामय अगम अगोचर।
जय निर्मल निर्द्वन्द अनिर्गत जय अविकारी।।

जय अनादि अज अव्यय अविचल जय जग कारण।
जनतारण निज भक्तउबारन हित अवतारी।।

जय सीताराम राम! हे रमण! जै राधावर।
जै केशव हे औष्ण! कलि कलिल कल्मषहारी।।

हे कोमल! नयनाभिराम मंजुल मनमोहन।
शरणागत यह पथिक आ रहा ओट तुम्हारी।।

गुरु आरती 453

जै परम गुरो भगवान की।
अनुपम शुचि मूर्ति सुजान की।।

उदासीन निर्वाण रूप में,
प्रगटे प्रभु महिमा अनूप में,
दृष्टि जीव कल्याण की।
जै परम गुरो भगवान की।।

बाल यती छवि सुन्दर सो है,
दिव्य तेजयुत त्रिभुवन मोहै,
सुरति सत्य के ध्यान की।
जै परम गुरो भगवान की।।

कनक कान्तिमय जटा सुशोभित,
रमी विभूति अखण्ड मोहजित,
वाणी अमृतपान की।
जै परम गुरो भगवान की।।

सुहृद शान्तियुत सद्गुण आगर,
समदर्शी करुणा के सागर,
गति न बुद्धि अनुमान की।
जै परम गुरो भगवान की।।

दयासिन्धु दीनन हितकारी,
शरणागत कलि कल्मषहारी,
सुनते निबल अजान की।
जै परम गुरो भगवान की।।

धर्म हेतु अवतरे नाथ तुम,
भक्त स्वजन के गहे हाथ तुम,
सुधन दिव्यता दान की।
जै परम गुरो भगवान की।।

भक्ति प्रेम दानी दुःख हरते,
तुम समर्थ हो सब कुछ करते,
विमल बुद्धि विज्ञान की।
जै परम गुरो भगवान की।।

शक्तिमान आधार हमारे,
हे सद्गुरू हम शरण तुम्हारे,
ज्योति पथिक पथ प्रान की।
जै परम गुरो भगवान की।।